सचित्र तत्वज्ञान का नया नजराना

ILLUSTRATED

THE REAL UNIVERSE
सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड

JAIN COSMOLOGY(सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति.....

PART - 4

❀ पावन प्रेरणा ❀

प. पू. दीक्षा दानेश्वरी आ. श्री गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा.

प. पू. प्रवचन प्रभावक आ. श्री रश्मिरत्नसूरीश्वरजी म.सा.

सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना
ILLUSTRATED
THE REAL UNIVERSE
सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड
JAIN COSMOLOGY(सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति.....
१२ देवलोक
१० देवलोक
७ देवलोक
५ देवलोक
४ देवलोक
२ देवलोक

सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना ILLUSTRATED

THE REAL UNIVERSE
सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड

JAIN COSMOLOGY(सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति.....

सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना ILLUSTRATED
THE REAL UNIVERSE
सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड
JAIN COSMOLOGY(सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति.....

पांच अनुत्तर

नव ग्रैवेयक

११ देवलोक

९ देवलोक

८ देवलोक

६ देवलोक

३ देवलोक

१ देवलोक

ACHARYA SRI KAILASSAGARSURI GYANMANDIR
SRI MAHAVIR JAIN ARADHANA KENDRA
Koba, Gandhinagar-382 009
23276204-0

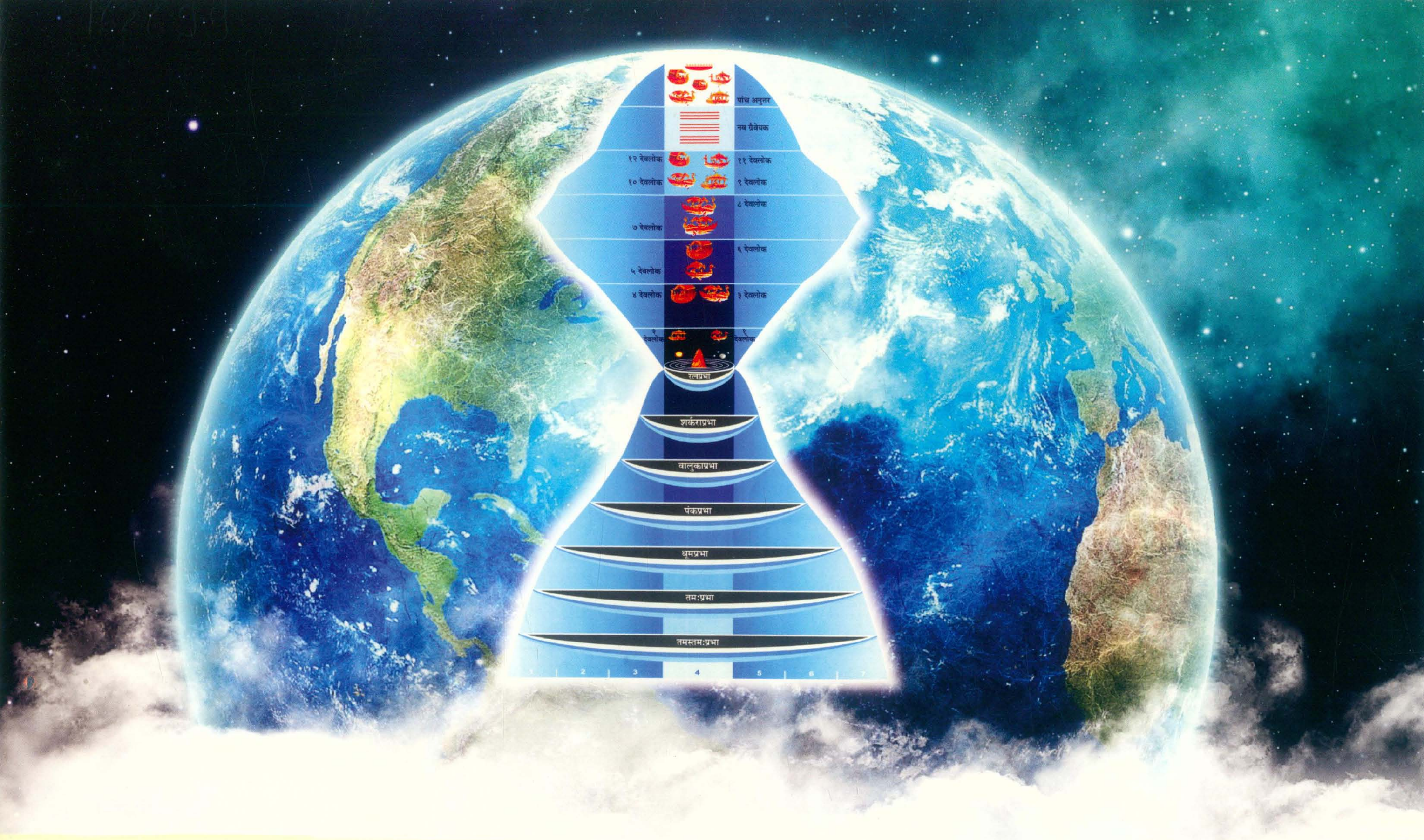

THE REAL UNIVERSE

॥ ऐँ नमः ॥ ॥ नमोऽस्तु तस्मै तव शासनाय ॥

॥ श्री तपागच्छाचार्य श्री प्रेम-भुवनभानु-जयघोष-जितेन्द्र-गुणरत्न-रश्मिरत्न-हीररत्नविजय सद्गुरूभ्यो नमः ॥

सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना

ILLUSTRATED

THE REAL UNIVERSE

सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड

JAIN COSMOLOGY (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति.....

PART - 4

ग्रन्थ की विशेषताएँ

- ८५० से अधिक पृष्ठों में विस्तारित.....
- पांच विभागों में विभक्त एवं आठ द्वारों से सुशोभित हिन्दी आवृत्ति....
- जैनधर्म से संबंधित भूगोल-खगोलादि का सचित्र वर्णन....
- २०० लेखों के ज्ञानार्जन में सहायक ४०० से अधिक थ्रीडी बहुरंगी चित्रों का विशाल संग्रह........
- ३०० से अधिक आगम - प्रकरण ग्रंथों पर आधारित...
- १५० पृष्ठों में विस्तारित 'जानने जैसी भूमिका' रूप ''परिशिष्ट ''....
- १०० से अधिक प्राचीन चित्रों की प्रतिकृतियों का अनोखा संकलन....
- तारातंबोल जैसी प्राप्य-अप्राप्य नगरियों का उल्लेख....
- प्राचीन-अर्वाचीन ग्रन्थकारों द्वारा लिखित चौदह राजलोक संबंधित पद्यात्मक भाषा में स्तुति-स्तवन-सज्झाय तथा पूजा की ढालों का अलौकिक ''कृतिसंग्रह''...

सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना

ILLUSTRATED

THE REAL UNIVERSE

सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड

JAIN COSMOLOGY (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति...

PART - 4

दिव्याशीर्वाद
सिद्धांतमहोदधि
आ. श्री प्रेमसूरीश्वरजी म.
युवाशिबिर प्रणेता
आ. श्री भुवनभानुसूरिजी म.
मेवाडदेशोद्धारक
आ. श्री जितेन्द्रसूरिजी म.

शुभाज्ञा-आशिष
सुविशाल गच्छाधिपति
गीतार्थमूर्धन्य
पूज्यपाद आचार्यदेव श्री
जयघोषसूरिजी महाराजा

पावन प्रेरणा
प.पू. दीक्षादानेश्वरी
आ.श्री गुणरत्नसूरिजी म.सा.
प.पू. प्रवचन प्रभावक
आ.श्री रश्मिरत्नसूरिजी म.सा.
प.पू.मु. श्री हीररत्न वि.म.सा.

पदार्थ संशोधक
प.पू. वर्धमान तपोनिधि
आ.श्री भुवनभानुसूरिजी
म.सा. के शिष्यरत्न
प.पू. पं.श्री पद्मसेन वि.म.सा.

पदार्थ संशोधक
प.पू. शासन प्रभावक
आ. श्री रत्नाकरसूरिजी
म.सा. के शिष्यरत्न
प.पू.पं.श्री रत्नज्योत वि.म.सा.

संकलक
संयोजक-संपादक
मुनि
चारित्ररत्नविजय...

प्रुफ संशोधक
प.पू.पं.धर्मशेखरविजयजी म.सा.
प्रो. रमेशभाई बी. शाह (अम.)
कमलेशभाई पुरोहित (सिरोही)
अभिषेकभाई वकील (इंदोर)

ग्रंथ विषय
जैनधर्म संबंधी
खगोल-भूगोलादि की
विस्तृत सचित्र जानकारी

टाईपिंग एवं मुद्रण
नवरंग प्रिन्टर्स
अपूर्वभाई शाह
अहमदाबाद - (गुज.)

चित्रों के संकलन के लिए मुख्य आधारस्तंभ
गीतार्थ गंगा
जैन मर्चन्ट - पालडी
अहमदाबाद

ग्रंथ डिझाईनर
ॐकार ग्राफिक्स
पियुषभाई के. शाह
अहमदाबाद - (गुज.)

फोटोग्राफी पिक्चर डिझाईनर
जैनिझम ओनलाईन
श्री हितेशभाई शाह
(नवसारी)

मूल्य
पांच भाग रूप
पूरे सेट का
२५००/-

प्रकाशन वर्ष
वी.सं.२५४१
वि.सं. २०७१
ई.सं. २०१५
विमोचन ता. ३१-५-२०१५
विमोचन ति. जेठ सुद १३

ग्रंथविभाग एवं पृष्ठ
(१) 67+१३३=२००
(२) 25+१६७=१९२
(३) 27+१६७=१९४
(४) 23+१७३=१९६
(५) 14+५२=६६

प्रकाशक
जिनगुण आराधक ट्रस्ट
राजदा बिल्डीग,
ओ.नं. ९/११, दूसरा माला,
जूनी हनुमान क्रोस लेन,
काल्बादेवी रोड, मुंबई - २

आवृत्ति - प्रतिकृति
आवृत्ति - प्रथम
प्रतिकृति - २०००

आधार ग्रंथ-साक्षीपाठों के मुख्य आधारस्तंभ
श्री महावीर जैन
आराधना केन्द्र
आ. श्री कैलाशसागरसूरि
ज्ञानभंडार - कोबा

प्राप्ति स्थान

अहमदाबाद

शाह बाबुलालजी सरेमलजी
"सिद्धाचल" सेन्ट एन्ड स्कूल
के सामने, हीराजैन सोसा.,
साबरमती, अहमदाबाद - ५
(M) 09426585904
(O) 079-22132543
(R) 079-27505720

सुरत

अशोकभाई एम. नागोत्रा
५०१, समवसरण ऐपार्टमेन्ट
लाल बंगला के सामने,
अठवालाईन्स, सुरत
(M) 09825132455
(M) 09428870903
(R) 0261-2669933

पालीताणा

सुघोषा कार्यालय
सोमचंद डी. शाह
तलेटी रोड,
पालीताणा
मुकेशभाई
(M) 09898332245

शंखेश्वर

वंदना बुक स्टोर्स
यात्रिक भवन के पास,
शंखेश्वर तीर्थ,
गुजरात
(M) 09374169618
(M) 09429297740
(M) 09904786962

मुंबई

मांगीलालजी पारेख
NAKODA CREATION
Shop no. 1, Kshirsagar apt,
opp. Maltibai Hospital,
St.John School Road,
THANE (west)
(M)09773329503,
(M)09324286481
(O)022-25309655

पुना

मांगीलालजी सोलंकी
श्री सिद्धाचल सोसायटी,
१८-बी, गुलटेकडी फ्लेट,
एफ-१३, पुणे -411037
(M) 09822271372
(R) 020-24265006

हुबली

AMBAR SAKARIYA
156, Kundan Kunj
Arihant Nagar,
Kushgal Road,
Keshwapur,
HUBLI-580023
(M) 09886217673

दिल्ली

मोतीलाल बनारसीदास
४१, U.A., बंगला रोड,
दिल्ली - ११०००७
Email-mlbd@mlbd.com
रवि जैन
(M) 08800666090
(O) 011-23851985

चेन्नाई

पारस डी. जैन
c/o, KOLORS KREATIONS
Shringar Plaza, # 359
Mint Street, Sowcarpet,
Opp. Vardhan Complex,
CHENNAI - 600079
(M) 09840208075
(M) 09884553007
(O) 044-23468276

बेंगलोर

एम. चंपालाल
No.531/532, O.T.C.Road,
1st floor,
Near Balpet Circle,
BANGALORE- 560002
(M) 09342727606
(M) 09844760139

अहमदाबाद

कायमी संपर्क सूत्र
अरुणभाई-साबरमती
09427522101,
09408252201
मोहितभाई-गीरधरनगर
09426707301

श्री जिनगुण
आराधक ट्रस्ट
मुंबई

स्व. श्री छोटालाल रीखवचंद
दोशी के आत्मश्रेयार्थे
ह. रीखवचंद त्रीभोवनदास
दोशी परिवार

लाभार्थी परिवार

श्रीमती मोहिनीदेवी
एस. देवराजजी जैन
घाणेराव - (राज.)
चैन्नई, बेंगलोर

-: विशेष सूचना :-

यह ग्रंथ ज्ञानद्रव्य में से छपा हुआ होने से गृहस्थो द्वारा मूल्य दिये बिना मालिकी करनी नहीं ।

प्रकाशकीय निवेदन

जैनधर्म वो अनादिकाल से चला आ रहा है एवं अनादिकाल तक यह अनंतानंत आत्माओ को मोक्ष मुक्ति में जाने के लिए निमित्त बन रहा है तथा जैनशास्त्रों (जिनागमों) में विश्व संबंधि संपूर्ण विश्व व्यवस्था (ब्रह्मांड का स्वरूप) असंख्य द्वीप-समुद्रो से व्याप्त मध्यलोक, खगोलीय (आकाश संबंधी) सूर्य-चंद्र-ग्रह-नक्षत्र एवं तारा इत्यादि, ऊर्ध्वलोक के रूप में रहे हुए १२ देवलोक, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तरादि, अधोलोक के रूप में ७ नरको की व्यवस्था, भवनपति-व्यंतर-वाणव्यंतरादि देवो की बाते और प्रकीर्णक रूप में आये हुए जैनशासन के छुटे छुटे पदार्थो की सूक्ष्म एवं स्थूलादि सर्व ठोस हकिकतों को बताने में आई है जो संपूर्ण वैज्ञानिक एवं तर्कबद्ध है।

इस ब्रह्मांड का और उसमें रहे हुए पदार्थो का जो सच्चा स्वरूप बताते है उसे जैनदर्शन में "द्रव्यानुयोग" कहा जाता है। उन द्रव्यों के गुणों से होती हुई गिनती को "गणितानुयोग" कहा जाता है। इन द्रव्यो को परखकर मोक्ष प्राप्त करने का जो भव्य पुरुषार्थ किया जाता है उसे "चरणकरणानुयोग" कहा जाता है एवं जो उस चरणकरणानुयोग को साधकर मोक्ष में चले जाते है उस विशिष्ट आत्मसाधकों की कथा को "धर्मकथानुयोग" कहा जाता है।

प.पू. त्रिशताधिक दीक्षा दानेश्वरी आचार्य श्री विजय गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा. तथा प.पू. प्रवचन प्रभावक आचार्य श्री विजय रश्मिरत्नसूरीश्वरजी म.सा की पावन प्रेरणा को झिलकर (ग्रहणकर) प.पू. मुनिराज श्री हीरत्नविजयजी म.सा. के शिष्यरत्न मुनिराज श्री चारित्ररत्नविजयजी म.सा.ने **Jain Cosmology** (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) नामक ग्रंथ का सफल संपादन कर जिनशासन के चरणों में अब उनके द्वारा दुसरे कदम स्वरूप **THE REAL UNIVERSE** (सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड) नाम का ग्रंथ जो तैयार किया गया है वह जैनशासन के चरणों में एक अद्भूत ग्रंथ की भेंट होगी... जो वस्तुतः बहुत ही उपयोगी एवं अनुमोदनीय है। ऐसे अनेकानेक लोकभोग्य ग्रंथो का सर्जन मुनिराजश्री के हाथों होते रहे....ऐसी भावभरी विनंती....

THE REAL UNIVERSE (सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड) ग्रंथ की प्रथम आवृत्ति का चतुर्विध श्री संघ के चरणों मे प्रकाशन करते हम आनंद की अनुभूति कर रहे है... तथा आधुनिक विज्ञान कि कल्पित बातों में अंधश्रद्धा धारण करनेवाले सर्वजन इस ग्रंथ को पढ़कर ब्रह्मांड (विश्व) के सच्चे स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर उसका उपयोग स्व - पर की आत्मा के उद्धार के लिए करे...

ऐसी अंतर की भावना के साथ ही....

लि. जिनगुण आराधक ट्रस्ट

संयम जीवन के मार्गदर्शक, परम हितकारी, वडील बंधु

मुनिराज श्री हीररत्नविजयजी महाराज साहेब

अवसरोचित प्रेरणा करके मुझे संयमरथ में बिठानेवाले मेरे बहन महाराज

साध्वीजी श्री भव्यज्ञरेखाश्रीजी म.सा.

के पावन करकमलो में

सादर समर्पणम्

I AM THE LUCKIEST PERSON IN THE WORLD TO
HAVE A LOVING & CARING BROTHER & SISTER LIKE
YOU... YOU HAVE BEEN AN AWESOME GURU, FRIEND,
SUPPORT AND A GUIDE IN MY
DIKSHA LIFE...
NO MATTER WHERE I GO,
NO MATTER WHAT I BECOME
I CAN ALWAYS SEEK PEACE
BY HOLDING MY BROTHER'S HANDS...
NO MATTER WHAT I DO,
NO MATTER HOW I AM,
I CAN ALWAYS FIND SUPPORT IN MY SISTER...
I AM GLAD YOU ARE ALWAYS THERE FOR ME
WHEN I NEED SOMEONE TO REALLY GUIDE ME...
THANKS...

मुनिराज श्री हीररत्नविजयजी म. सा.

साध्वीजी श्री भव्यज्ञरेखाश्रीजी म.सा.

गुरुदेव ! आपका नाम स्वयं ही काव्य है, कोई भी कवि बन जाए, सहज संभाव्य है,
है मेरे पास क्या ? जो आपको अर्पण करू, आपसे पाए फूल, आपको समर्पण करू.. ॥

Jain darshan

Prof.
Dr. Sudhir V. Shah

With Mathaen Vandami to **P.P.Muniraj Shri Charitraratna Vijayji M.S.,**

Jain philosophy is supposed to be the oldest of all philosophies, older than vedant and Buddhism. References of Lord Adinath are found in holy Vedas. Also references are found about Jain deities in other vedic scriptures.

Jain Darshan - or Jain philosophy is a complete philosophy. It is perfectly logical and explains almost everything about the world and its functioning. It offers perfect knowledge, way of life and ethics and precise steps of liberation. It has a classic karmic theory and has its own philosophic theory of relativity. It has looked upon ecology balance carefully. By following Jain doctrine world peace can be achieved.

Omniscient Lord Mahavir, out of compassion, applied the Gyana and created a path basically for the spiritual uplift and liberation of the soul. In addition, this path also leads to physical well being, mental peace, emotional control and thus total health of an individual, without any doubt.

What he preached, has turned out to be permanent and absolute truth-hence the super science. He was the greatest scientist the earth has ever seen. His preaching and teachings are compatible with principles of the modern science : i.e. physics, biology, chemistry, psychology, astronomy, physiology and medicine etc.

Actually, science is merely one part of Jain religion. If we take science, then right from atomic science to biological sciences, from mathematics to astronomy, from laws of motion to speed of particcles, from psychology to precise classification of living beings, from music and its effects to effects of penance on positive health ---------we would find everything depicted in Jain religion and philosophy. Interestingly, the language is of a religion, but knowledge is of pure

science. Science applied for the liberation of human being !

For example, following has been taken from the 5th chapter of Tatvarthadhigam Sutra (the first ever text book of science of mankind) written / compiled by Rev. Acharya Shri Umaswatiji. in the first century. These verses talk about the atomic science.

Atomic science - **Tatvarth Sutra : P.P.Umaswatiji : 1st Century**

Anavah skandhas cha - Matter has two varieties : atoms and clusters. **(5/ 25)**

Samghata - bhedebhya utpadyante - Clusters are produced by fission, fusion or both. **(5/26)**

Bhedad anuh - Atom is the final product of fissiondisintegration. **(5/27)**

Atom - indivisible unit

Bheda - samghatabhyam caksusah : The visibility of clusters is produced by the combination of disintegreation and reintegration. **(5/28)**

Utpada - vyaya - dhrauvyayuktam sat : Origin., Cessation and persistence constitute existence. **(5/29)**

Tadbhavavyayam nityam - what remains it is : eternal : Universal matter **(5/30)**

Snigbha - ruksatvad bandhah - Atomic integration is due to their tactile qualities of viscosity and dryness (positive and negative charges). **(5/32)**

Na jaghanyagunanam - There cannot be integration of atoms (and clusters) that possess the minimum one degree of viscosity or dryness **(5/33)**

Gunasamye sadrasanam - Atoms with same degree of charges cannot integrated. **(5/34)**

Here, formation of matter, concept of universal matter, atomic fusion, integration and disintegration of matter, constancy and transformability of objects - all high principles of atomic science physics are discussed. The concepts of subatomic particles are even mind boggling.

Surprisingly, the most basic and vital theories of modern science, physics in particular are depicted in Jain philosophy in short verses. The principle of reality, constancy of mass, law of entropy, laws of motion and intertia, quantum theory, relativity theory, laws of energy, telepathy, teleporting, properties of sound, power of mind all are wonderfully discussed in an elquent manner with application of them for the uplifment of mankind and finally sublimation of the soul.

The major and immediate concern of a human being is health. The principles of Jain religion are most compatible and most relevant in present context for reinstating total physical and mental health, creating a positive health and removing diseases.

The rituals & six avshyak (including samayik, Pratikraman), six internal & external Tapas (Penance), the austerities, (Ekasana, Aymbil) the laws of food & eating habits(Aharvigyan), avoidance of Ratribhojan & Vigai & exclusion of food with Mahavigai, the positive effects of kayotsarga & Jain mediation, the bhavanas (attitudes) laid down in philosophy are all really promotiong positive health & bring perfect physical, mental, emotional & spiritual health. Each of these practice is found highly scientific & if

further research is done modern Experimental way, a great service to the society can be done, really.

There are so many things... written in the Jain texts, which can not be well interpreted with the present knowledge of science. Jainism gives direction for new research in the field of energy, karmic bonds, velocity, psychology, food, health etc. Let us concentrate our research on these and give the world the best of our religion.

A few examples...Shri.. Jagdishchandra bose rediscovered about life in plantation. Jain religion has depicted life not only in plant kingdom but also talked about living beings in the air, earth, water, fire. Let us do Darshan has offered karmic theory - which perhaps has some relation to genetic coding logically. In fact, karmic coding is more precise & perfectly logical, while genetic coding is yet not.

Similarly, Jain Syadvada & Anekantvada are more universal & have no loopholes, as compared to the famous theory of relativity, which scientists are now finding deficient.

Simple Tithivigyan has been found on great observations of effects of lunar & Solar Cycles on change of PH & total water contect of human body, This is ultimately reflected in certain health issues of human body & hence avoiding certain alkaline food on those days shoul be a good & healthy practice.

In fact, every single rule in Jain Darshan has a science behind it, as lord Madavir was Omniscient. Our Modern science can have and has limitations & therefore we have to change our views every now and then. While Jain Darshan is shaswat & does not need to change.Whatever mistakes we perceive in the religious taxts, could be interpretation errors or perhaps science may evolve for our understanding of those facts, or may be there were errors in translation or some texts are missing. We have to keep faith in our religion, yes, absolute faith & devotoin. A woshiping temper, rather than egoistic ruthless attitude. We should thus first develop Samyak Darshan, to understand our great religion.

Let us all relearn what has been given to us an invaluable inheritance. Let us be proud of it. But more than that, let us do further research and apply it for human and animal welfare, world peace. However our motto should be constant awareness and self-liberation.

I respectfully would like to inform that I have gone through your marvellous creating **"The Real Universe."** , and needless to say its indeed a great work. I apprecite, it's an honour to have seen this book. The knowledge pearls preached by our omniscient Tirthanakar Lord Mahavir were absorbed by the Rev. Gandharas as Aagams and ultimately through teacher - disciple system were transmitted by way of memorization for centuries later they were written & now Munishri Charitraratra v.m.s. has very graciously made an effort to make it easier & lucid to understand for common people, the complex casmological aspects.

As I could see the key highlights of this text is that...

There are more than 850 pages, & Divided in to 5 volumes.

Graphic description of astrological and geographical according to Jainism.

More then 200 deseriptive subjects rich in knowledge with more than 400 colourfull images in 3d and 2d.

More than 300 aagam texts chapterised.

Collection of more than 100 replicas of ancient images.

"The Real Universe" per se is a shade closer in semblance to buddha and vedic principles and up to a certain extent to wester observations also, however that it is dissimilar to the contemporary scientific principles is a well known fact. This text contains logic, information, knowledge and science This blend is rarely found in other cultures. The Jain Astrology, Geography, Pragyapti sutra, Thanang sutra, Jambudwipa pragyapti and many other such texts have been successfully descrided in suitable chapters by Munishri Charitraratna. V.M.S., who has clearly grasped the essence of these ancient texts by detailed study. This is quite evident that science is still in the process of evolution. The wheels of discovery are forever working as a result of which, we are discovring new and essentially closer facts, whereas omnisaence was attained in higher state of consciousness by the great seers and saints for before the composition of texts.

Physics, atomic science, Mathematics, the laws of Motion, biology, treatises on knowledge. Psychology, Pharmacology and various such sciences were transmitted through Lord Mahavir to the illumined beings in constant company with him who further enlightened our revered saints. We already possess this knowledge since centuries, and yet there is so much information that modern science has yet to decipher. The point is that the religion preached by omniscient Lord Mahavir should be adapted completely by us & should be used as a light to show path to the science.

Being a scientist, I am not asking you to disregard science & its proof. One should try and understand the best of both world with patience for the upliftment & well being of humanity with due diligence & sense of judgment. One should not decide recklessly and should patiently bid the coming time. Let us take far example that every plant is a living being. The fact is that it has sense, this was realized by science in the 20th century but our Jain scriptures elaborately deseribed it centuries ago ! Just imagine how the scientist of 19th century would have perceived this piece of fact ! If some such evidence of fact come to light in **"THE REAL UNIVERSE"** -we should not all be surprised.

Prof. Dr. Sudhir Vadilal Shah
Chairman, All India
Jain Doctors Federation.
Consultant Neurologist.
Head of Dept and Hon.
Associate Prof., of neurology,
Director of Neurosciences,
Sterling Hospital - Ahmedabad.

सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना

THE REAL UNIVERSE ILLUSTRATED

सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड

JAIN COSMOLOGY (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति.....

ग्रंथ विभागीकरण एवं परिचय

यह ग्रंथरत्न एक सामान्य पुस्तक के रूप में ही प्रकाशित नहीं हो रहा है... परंतु एक प्रकरण ग्रंथ - अभ्यासिक ग्रंथ के स्वरूप में प्रकाशित हो रहा है जिसमें सर्वज्ञ तीर्थंकर भगवंतों के द्वारा बताया गया विश्व क्या है ? उसकी व्यवस्था कैसी है ? तथा ऊर्ध्व-अधो-मध्य (तीर्छा) लोक में क्या क्या रहा हुआ है ? और तो और जैनशासन की जनरल फिलोसोफी एवं मान्यताएँ तथा जैनशासन के विशिष्ट पदार्थ क्या है ? इत्यादि बहुत सारी जानकारी से परिपूर्ण यह एक श्रेष्ठ ग्रंथ है.... इसलिये बाह्य दृष्टि से देखने जाये तो जैसा आकर्षण VIP अथवा 3D के ग्रंथादि में होता है वैसा आकर्षण इस ग्रंथ में देखने को शायद नहीं भी मिलेगा वह स्वाभाविक है फिर भी एक प्रयत्न इस तरफ किया है अतः अभ्यंतर दृष्टि से देखने जाये तो यह ग्रंथ वाचकवर्ग (अभ्यासुवर्ग) के लिये यह अनेकानेक प्रकारो से उपयोगी होगा... बस ! इसी अभ्यर्थना के साथ......

संपादक - मुनि चारित्ररत्नविजय....

THE REAL UNIVERSE (PART - 1)

(द्वार - १) लोक विभाग

(1) श्री २४ तीर्थंकर भगवान (2) श्री पंच परमेष्ठी के१०८ गुण..... (3) क्या ईश्वर जगत का निर्माणकर्ता हो सकता है ?.... (4) जैनधर्म वह विश्वधर्म है..... (5) १४ राजलोक रूप विश्व-व्यवस्था..... (6) १४ राजलोक का यथार्थ स्वरूप..... (7) १४ राजलोक तथा तीन लोक के मध्यस्थान..... (8) ८ रुचक प्रदेश अर्थात् समभूतला..... (9) षड्द्रव्यात्मक लोक (विश्व)..... (10) धर्मास्तिकाय..... (11) अधर्मास्तिकाय..... (12) आकाशास्तिकाय (लोकाकाश)..... (13) आकाशास्तिकाय (अलोकाकाश)..... (14) काल द्रव्य..... (15) पुद्गल द्रव्य..... (16) जीव द्रव्य..... (17) षड्द्रव्यों के २३ द्वार..... ★ लोक स्वरूप चिन्तन से मानसिक शान्ति....

(पेज नं. १से ३५)

(द्वार - २) मध्यलोक

(18) जैन गणितानुसार एक योजन के माईल कितने होते है ?..... (19) मध्यलोक का स्वरूप..... (20) मध्यलोक का मध्यद्वीप = जंबूद्वीप..... (21) जंबूद्वीप की जगती = किल्ला..... (22) भरत क्षेत्र..... (23) भरत क्षेत्र के मध्यखंड की विशेष जानकारी..... (24) ऋषभकूट पर्वत की विशेष जानकारी..... (25) भरत क्षेत्र में समुद्र कहाँ से आये...? (26) दीर्घ वैताढ्यपर्वत..... (27) जंबूद्वीप के ७ महाक्षेत्र..... (28) जंबूद्वीप के ६ वर्षधर पर्वत..... जंबूद्वीप के ६ महाद्रह.... (29) जंबूद्वीप अंतर्गत लघुहिमवंत पर्वत का वर्णन..... (30) लघुहिमवंत पर्वत पर पद्मद्रह सरोवर..... (31) जंबूद्वीप अंतर्गत हिमवंत क्षेत्र..... (32) जंबूद्वीप अंतर्गत महाहिमवंत पर्वत..... (33) जंबूद्वीप अंतर्गत हरिवर्ष क्षेत्र..... (34) जंबूद्वीप अंतर्गत निषध पर्वत (पार्ट - २) ..... (35) महाविदेह क्षेत्र..... (36) महाविदेह क्षेत्र..... (37) १ लाख योजन प्रमाण महाविदेह क्षेत्र कैसे होता है ?... (38) महाविदेह क्षेत्र अंतर्गत १६ वक्षस्कार पर्वत..... (39) महाविदेह क्षेत्र अंतर्गत १२ अन्तर नदियाँ.....(40) महाविदेह क्षेत्र में आये हुए वनमुख का दृश्य..... (41) महाविदेह क्षेत्र में रहे हुए ४ गजदंत पर्वत..... (42) महाविदेह क्षेत्र में रहे हुए ४ गजदंत पर्वत..... (43) महाविदेह क्षेत्र अंतर्गत उत्तरकुरु क्षेत्र..... (44) उत्तरकुरु क्षेत्र अंतर्गत यमक-समक पर्वत..... (45) उत्तरकुरु क्षेत्र अंतर्गत ५ लघुद्रह..... (46) उत्तरकुरु क्षेत्र अंतर्गत १०० कंचनगिरि पर्वत..... (47) उत्तरकुरु क्षेत्र में आया हुआ जंबूवृक्ष (पार्ट - १) ..... (48) उत्तरकुरु क्षेत्र में आया हुआ जंबूवृक्ष (पार्ट - २) ..... (49) महाविदेह क्षेत्र अंतर्गत देवकुरु क्षेत्र..... (50) जंबूद्वीप में रहा हुआ मेरुपर्वत..... (51) मेरुपर्वत के चारों तरफ रहा हुआ भद्रशालवन..... (52) मेरुपर्वत पर आया हुआ नंदनवन (पार्ट - १)..... (53) मेरुपर्वत पर आया हुआ नंदनवन (पार्ट - २) ..... (54) मेरुपर्वत पर आया हुआ सौमनसवन..... (55) मेरुपर्वत पर आया हुआ पाण्डकवन(पार्ट - १) ..... (56) मेरुपर्वत पर आया हुआ पाण्डकवन(पार्ट - २) ..... (57) मेरुपर्वत पर आई हुई चूलिका..... (58) जंबूद्वीप अंतर्गत नीलवंत पर्वत..... (59) जंबूद्वीप अंतर्गत रम्यक् क्षेत्र और रुक्मि पर्वत.... (60) जंबूद्वीप अंतर्गत हिरण्यवंत क्षेत्र..... (61) जंबूद्वीप अंतर्गत शिखरी पर्वत..... (62) जंबूद्वीप का ऐरावत क्षेत्र..... (63) जंबूद्वीप में रहे हुए वृत्त (गोल) पदार्थों का यंत्र.....★ **THE REAL UNIVERSE** ग्रंथ के आधार ग्रंथों की सूची (द्वार १ से ५)

(पेज नं. ३६ से १३३)

THE REAL UNIVERSE (PART - 2)

(64) इस अवसर्पिणी काल के १२ चक्रवर्ती (65) चक्रवर्ती के १४ रत्न... (७ एकेन्द्रिय रत्न)....(पार्ट - १) (66) चक्रवर्ती के १४ रत्न... (७ एकेन्द्रिय रत्न)....(पार्ट - २) (67) चक्रवर्ती के १४ रत्न... (७ एकेन्द्रिय रत्न)....(पार्ट - ३) (68) चक्रवर्ती के १४ रत्न... (७ पंचेन्द्रिय रत्न)....(पार्ट - ४) (69) चक्रवर्ती के १४ रत्न... (७ पंचेन्द्रिय रत्न)....(पार्ट - ५) (70) चक्रवर्ती के नवनिधान = नवनिधि..... (पार्ट -१) (71) चक्रवर्ती के नवनिधान = नवनिधि..... (पार्ट -२) (72) वासुदेव के ७ रत्न..... (73) कोटिशिला संबंधी विशेष जानकारी..... (74) ६३ शलाकापुरुष और अन्य महापुरुषो का क्रमादि..... (75) श्री प्रभुवीर के ११ गणधरों का जीवन परिचय..... (76) लवणसमुद्र..... (77) लवणसमुद्र अंतर्गत गौतमद्वीप..... (78) लवणसमुद्र अंतर्गत ५६ अंतर्द्वीप..... (79) लवणसमुद्र के तीन मागधादि तीर्थ..... (80) गोतीर्थ और जलवृद्धि का दो तरफ से दृश्य..... (81) जैन दृष्टि से ज्वार-भाटा का कारण..... (पार्ट - १) (82) जैन दृष्टि से ज्वार-भाटा का कारण..... (पार्ट - २) (83) धातकीखंड..... (84) कालोदधि समुद्र..... (85) पुष्करवरार्ध द्वीप..... (86) मानुषोत्तर पर्वत..... (87) अढाईद्वीप..... (88) अढाईद्वीप में रहे हुए शाश्वत पदार्थों का यंत्र..... (पार्ट - १) (89) अढाईद्वीप में रहे हुए शाश्वत पदार्थों का यंत्र..... (पार्ट - २) (90) अढाईद्वीप में शाश्वत चैत्य-प्रतिमाओं का वर्णन..... (91) तीनों लोक में रहे हुए शाश्वत प्रासादादि का यंत्र .....(पार्ट -१) (92) तीनों लोक में रहे हुए शाश्वत प्रासादादि का यंत्र .....(पार्ट -२) (93) सात द्वीप-सात समुद्र की बातें क्या सच है ?..... (94) नंदीश्वरद्वीप..... (95) श्री नंदीश्वरद्वीप विषयक किंचित् वर्णन..... (96) नंदीश्वरद्वीप में आया हुआ अंजनगिरि.....

(97) नंदीश्वरद्वीप के दधिमुख पर्वत और रतिकर पर्वत..... (98) कुंडलद्वीप की विशेष जानकारी..... (99) रुचकद्वीप..... (100) तिर्च्छालोकवर्ती क्रमशः द्वीप-समुद्र स्थापना..... (101) समस्त द्वीप-समुद्रों का आकार तथा प्रमाण..... (102) प्रत्येक समुद्रवर्ती जल का स्वाद और मत्स्यादि का प्रमाण..... (103) तिर्च्छालोक में रहे हुए द्वीप-समुद्रों का प्रमाणादि..... (104) तमस्काय का स्वरूप..... (105) ज्योतिष चक्र का स्वरूप..... (106) ज्योतिष चक्र के विमानों का आकारादि..... (107) सूर्य-चंद्रादिक के आभियोगिक विमान-वाहक देव..... (108) सूर्य-चंद्र की तीन पर्षदाएँ..... (109) ज्योतिष चक्र के चन्द्रादि की अग्रमहिषियाँ (पट्टराणियाँ)..... (110) ज्योतिष चक्र का प्रभाव मनुष्यों पर..... (111) सूर्यग्रहण-चंद्रग्रहणादि का स्वरूप क्या है ?.... (112) मनुष्य क्षेत्र के बाहर रहे हुए सूर्य-चन्द्रादि..... (113) मनुष्य क्षेत्र में सूर्य-चन्द्र की ६६-६६ पंक्तियाँ..... (114) चर ज्योतिष देवों के द्वारा मनुष्यलोक में काल का विभाग..... (115) जंबूद्वीप के सूर्य तथा चंद्र के मंडलादि का प्रमाण-अंतर इत्यादि.....★ जीव और पुद्गलों की रंगभूमी....

(द्वार - ३) अधोलोक

(116) रत्नप्रभा पृथ्वी अर्थात् प्रथम नरक..... (117) सातों नरकों में रहें हुए प्रतरों के नामादि..... (118) ८ व्यंतर देव..... (119) ८ व्यंतर देवों की अग्रमहिषी..... 120) व्यंतर देवों की ८७ जाति..... (121) ८ प्रकार के वाणव्यंतर देव..... (122) १० प्रकार के भवनपति देव..... (123) भवनपति निकाय के १० भेद.....(124) चमरेन्द्र महाराजा की चमरचंचा और उत्पातपर्वत..... (125) चमरेन्द्र कौन ? व कहाँ से आया ?..... (126) चमरेन्द्र का सोधर्मेन्द्र तरफ प्रयाण..... (127) बन्धनादि १० प्रकार की क्षेत्रवेदना... (128) नरक में १० प्रकार की क्षेत्रवेदना..... (129) नरक में परस्पर कृत वेदना..... (130) नरक में परमाधामी कृत वेदना..... (131) १५ प्रकार के परमाधामी देव..... (132) परमाधामी देवों की गति ?..... (133) परमाधामी संबंधी कुछ और जानने जैसा..... (134) द्वितीय शर्कराप्रभा नामक पृथ्वी..... (135) तृतीय वालुकाप्रभा नामक पृथ्वी..... (136) चतुर्थ पंकप्रभा नामक पृथ्वी..... (137) पांचवीं धूमप्रभा नामक पृथ्वी..... (138) छठवीं तमःप्रभा नामक पृथ्वी.....(139) सातवीं तमस्तमःप्रभा नामक पृथ्वी.....(140) पापीयों को सजा भुगतने का स्थान अर्थात् ७ नरक..... (141) कौन - से जीव नरकायुष्य को बान्धते है.... (142) क्या नारकी जीव कभी सुखी हो सकते है ?.....(143) कौन से जीव कौन-सी नरक तक जा सकते है !.....(144) नरक संबंधी कुछ जानने जैसा....

(पेज नं. १ से १६६)

(द्वार - ४) ऊर्ध्वलोक

(145) ऊर्ध्व वैमानिक देवलोक..... (146) वैमानिक देवलोक की व्यवस्था..... (147) १२ वैमानिक देवों के संबंध में कुछ जानने जैसा..... (पार्ट - १) (148) १२ वैमानिक देवों के संबंध में कुछ जानने जैसा..... (पार्ट - २) (149) अष्ट कृष्णराजी.....(150) नव (नौ) लोकांतिक देव..... (151) कल्पोपपन्न देवों के १० प्रकार..... (152) देवलोक के प्रतरों की व्यवस्था किस तरह है ?..... (153) ६२ प्रतर के कुल ६२ इन्द्रक विमान तथा नामादि..... (154) देवों का उत्तरवैक्रिय शरीर..... (155) किल्बिषिक देवों के प्रकार और उनके निवासस्थलादि..... (156) देव किन कारणों से मनुष्यलोक में आते है ?..... (157) किन कारणों से देव मनुष्यलोक में नहीं आते है ?..... (158) देवों की तथाविध भवप्रत्ययिक संपत्ति..... (159) वैमानिक देवलोक के विमानों का संख्या-दर्शक यंत्र..... (160) नव ग्रैवेयक के ९ विमान..... (161) नव ग्रैवेयक तक कौन उत्पन्न हो सकता है ?..... (162) ५ अनुत्तरवासी देव.... .(163) देवों के अवधिज्ञान का क्षेत्र और आकार..... (पार्ट - १) (164) देवों के अवधिज्ञान का क्षेत्र और आकार..... (पार्ट - २) (165) चारों निकाय के देव तीन विभागों में विभक्त है ..... (पार्ट - १) (166) चारों निकाय के देव तीन विभागों में विभक्त है ..... (पार्ट - २) (167) चारों निकायी देवों के १९८ भेद किस प्रकार होते है ?..... ★ उत्पाद - व्यय-ध्रौव्ययुक्तं सत्...

(द्वार - ५) प्रकीर्णक

(168) पृथ्वीकायादि ५ स्थावर जीव.....(169) त्रसकाय-विकलेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीव..... (170) संसारी जीवों के ५६३ भेद... (मनुष्य-देव-नारकी)..... (171) संसारी जीवों के ५६३ भेद पर कुछ विचारणा..... (172) निगोद के जीवों का स्वरूप..... (173) औदारिकादि ५ शरीर..... (174) ऋजु और वक्रगति का स्वरूप.....(पार्ट - १) (175) ऋजु और वक्रगति का स्वरूप.....(पार्ट - २) (176) सिद्धों का सुख कैसा है ?..... (177) सिद्धशिला एवं सिद्धात्माएँ..... (178) सिद्धात्मा की अवगाहना..... (179) सिद्ध के १५ भेद और अनंतरादि प्रकार..... (180) आहारादि ६ पर्याप्ति..... (181) जीव के छः संस्थान और अजीव के पांच संस्थान..... (182) छः प्रकार के संघयण..... (183) ६ लेश्या का स्वरूप..... (184) आत्मा का विकासक्रम एवं १४ गुणस्थानक..... (पार्ट - १) (185)आत्मा का विकासक्रम एवं १४ गुणस्थानक..... (पार्ट - २) (186) आत्मा का विकासक्रम एवं १४ गुणस्थानक..... (पार्ट - ३) (187) केवली समुद्घात.....

(पार्ट - १) (188) केवली समुद्घात..... (पार्ट - २) (189) तीर्थंकर नामकर्म बंध कारण वीस स्थानक पद..... (190) पुद्गल (अजीव) के ५३० भेद..... (191) आठ कर्मों का स्वभाव..... (पार्ट - १) (192) आठ कर्मों का स्वभाव..... (पार्ट - २) (193) अवसर्पिणी काल के ६ आराओं का स्वरूप..... (पार्ट - १)(194) अवसर्पिणी काल के ६ आराओं का स्वरूप.....(पार्ट - २) (195) उत्सर्पिणी काल के ६ आराओं का स्वरूप..... (196) ६ प्रकार के बाह्य तप..... (197) ६ प्रकार के अभ्यंतर तप..... (198) श्री अष्टापदजी महातीर्थ..... (पार्ट - १) (199) श्री अष्टापदजी महातीर्थ..... (पार्ट - २) (200) क्या तुम्हें पता है भूकंप किस कारण से होता है ?.....

★ सुविदितं जगत्स्वभावम्...

(द्वार - ६) प्राचीन चित्रावली

(सैकड़ों वर्ष प्राचीन हस्तलिखित-ताडपत्रीय ग्रंथो में दिये हुए १४ राजलोक एवं उसके अंतर्गत दुसरे पदार्थों संबंधी १०० से अधिक प्राचीन चित्रों का संग्रह...

(पेज नं. १ से १६७)

THE REAL UNIVERSE (PART - 4)

(द्वार - ७)

(१) जैनधर्म की प्राचीनता के प्रमाण... (२) जैनधर्म की अतिप्राचीनता के प्रमाण... (३) जैन दिगंबर मान्यतानुसार लोक वर्णन... (४) बौद्ध मतानुसार लोक वर्णन.... (५) वैदिक धर्मानुसार लोक वर्णन... (६) भारतवर्ष का नामकरण..... (७) वैज्ञानिकों के मतानुसार आधुनिक विश्व (८) चातुर्द्वीपिक भूगोल परिचय (९) चलिए ! पृथ्वी की जानकारी प्राप्त करते हैं... वैज्ञानिकों के मुख से (१०) अमेरिका की "फ्लेट अर्थ सोसायटी" भी पृथ्वी को सपाट मानती हैं (११) रहस्यमय उत्तरध्रुव... (१२) पृथ्वी गेंद जैसी गोल नही है और वह घूमती भी नही हैं उसके १०१ प्रमाण... (१३) ईसाई धर्म भी पृथ्वी को समतल मानता है ... (१४) ईस्लाम दर्शन (धर्म) में भी पृथ्वी स्थिर हैं .... (१५) पृथ्वी के गोल होने के वैज्ञानिकों के पास कोई प्रमाण नही है... (01) प्लेटो व एरिस्टोटल पृथ्वी को समतल मानते थे... (02) आर्यभट्ट पृथ्वी को गोल मानते थे... (03) ब्रह्मगुप्त पृथ्वी को समतल मानते थे... (04) निकोलस कोपरनिकसने पृथ्वी के घूमते रहने का तुक्का लगाया.... (05) कोपरनिकस में इस पुस्तक को प्रकाशित करने की हिम्मत नही थी.... (06) टायको ब्राह पृथ्वी को समतल मानता था... (07) जोहानिस केप्लर था टायको ब्राह के शिष्य... (08) जोहानिस केप्लर बने टायको ब्राह के वारिस... (09) गैलीलियो गैलिली पृथ्वी को घूमती हुई मानते थे ...(10) आँइज़क न्युटन ने गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत की शोध की थी... (11) अल्बर्ट आइंस्टाइनने न्युटन की परिकल्पना को गलत सिद्ध किया था... (12) गोलाकार सतह पर प्रकाश सरल रेखा में गति नही करता है... (13) आइंस्टाइन की फ्रेम ड्रेगिंग परिकल्पना... (14) ब्लेक होल की अजीबोगरीब परिकल्पना...(15) आइंस्टाइन के सिद्धांत के समक्ष गुजरात के वैज्ञानिक की चुनौती...(१६) पू. आत्मारामजी महाराज के अंतरोद्गार... (१७) जानने जैसी तारातंबोल नगरी... (१८) हिमालय के उस पार... (१९) पल्योपम और सागरोपम का स्वरूप... (२०) पृथ्वी के आकार और स्थिरता संबंधी सुंदर साहित्य वर्णन... (२१) इन विषयों को जानने के लिए ये पढो... (२२) लोक के नामादि ८ निक्षेप.... (२३) **jain cosmology** ग्रंथ के लिए आए हुए अभिप्रायः पत्र.... (२४) पूज्यश्री के द्वारा अध्ययन-उपदेशात्मक एवं आगामी साहित्यों की सूची.... (२५) ग्रंथ प्रशस्ति....

(पेज नं. १ से १७३)

THE REAL UNIVERSE (PART - 5)

(द्वार - ८) "कृतिसंग्रह"

● प्राचीन-अर्वाचीन ग्रन्थकारों द्वारा लिखित चौदह राजलोक संबंधित पद्यात्मक भाषा में स्तुति-स्तवन-सज्झाय तथा पूजा की ढालों का अलौकिक "कृतिसंग्रह"...

(पेज नं. १ से ५२)

विशेष सूचना :- THE REAL UNIVERSE (सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड) ग्रंथ में बताये गये खगोल-भूगोल संबंधी १ से २०० तक के लेखों को हिन्दी भाषा में संगृहित कीया गया है। तथा इन लेखों के पदार्थों को जिन जिन शास्त्रसंदर्भ पाठों से युक्त बताना है उन उन स्थानों में छोटे-छोटे अक्षरो में (फोन्ट में) १-२-३-४-५-६-७ इत्यादि करके आंकड़ों में रख दिये गये है और उसके शास्त्रपाठ उसी पेज में नीचे टिप्पन के स्वरूप उन ग्रंथों के नाम एवं श्लोक संख्यादि के साथ बताया गया है।

ऋण मुक्ति नहीं ऋण स्मृति...

- जिसने मुझे अव्यवहारराशी निगोद में से बाहर निकालकर व्यवहाराशी में प्रवेश दिलाया एसे **सिद्ध भगवंतों** को मैं सर्वप्रथम नमस्कार करता हुँ।
- जिन्होने जन्म देकर सुसंस्कारों का सिंचन किया तथा मेरी दीक्षा की भावना को देख अपने मोह को छोड मुझे संयमधर्म के पालन की अनुमति दी, एसे **माताश्री पवनबहेन** एवं **पिताश्री ओटरमलजी** का भी मुझ पर महान् उपकार हैं।
- चरम तीर्थपति, आसन्नोपकारी श्री महावीरस्वामीजी, तथा अनंत लब्धिभंडार **श्री गुरु गौतमस्वामीजी** और पंचम गणधर **श्री सुधर्मास्वामीजी** महाराज के श्रुतवारसा का मैं वारसदार बना।
- सिद्धांत महोदधि **प. पू. आ. श्री प्रेमसूरीश्वरजी म.सा.**, न्यायविशारद **प. पू. आ. श्री भुवनभानुसूरीश्वरजी म.सा.** तथा मेवाडदेशोद्धारक **प. पू. आ. श्री जितेन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** रूप तीनो महापुरूषों की निरंतर कृपा-दृष्टि से मैं पावन बना।
- सिद्धांतदिवाकर, सुविशालगच्छाधिपति **प. पू. आ. श्री जयघोषसूरीश्वरजी म.सा.** के प्रसंगोपात प्रेरणा के पावन अमृतांजन से मैं और मेरी प्रज्ञाचक्षु (बुद्धि) आज इस ग्रंथ के संपादन को देखने में समर्थ बनी।
- दीक्षा के दिव्यमंदिर में आत्म भगवान की प्रतिष्ठा करने की अमूल्य प्रेरणा करनेवाले प. पू. दीक्षा दानेश्वरी, युवा जागृति प्रेरक **आ. श्री गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा.** के जिन्होंने मुझ जैसे अज्ञानी को अंगार भरे आलम में से उगारकर, मतलबीयों के मोह से मुक्त कराकर, परमपथ की पगदंडी बताकर मुझे संयम के साम्राज्य के ऊपर बैठने का अवसर प्रदान किया, आज उन्हीं की कृपा से मैं चारित्र रूपी रत्न को धारण कर सका हुँ।
- प्रवचन प्रभावक, षड्दर्शन निष्णात **प. पू. आ. श्री रश्मिरत्नसूरीश्वरजी म.सा.** के जिनकी अवसरोचित प्रेरणा, प्रोत्साहन और योग्य योगक्षेम के बल से मुझ जैसे पामर भी संयमधर्म के अनेकानेक योगों को पूर्ण करने में परम बने...।
- दीक्षा के प्रथम दिन से ही जिन्होने मुझे ग्रहण तथा आसेवन शिक्षा देकर संयमपालन के योग्य किया तथा अवसरोचित मुझे उस उस काल (समय) में पढ़ा-लिखाकर समर्थ किया... ऐसे बड़े भाई महाराजश्री (गुरुदेवश्री) **प. पू. मुनिराज श्री हीररत्नविजयजी म. सा.** को भी आज कैसे भुला जाय...? के जिनकी अपूर्व उदारता के कारण ही मैं आज यह सब कार्य करने को समर्थ बना हुँ।

पू. बहन म.सा. (सा.श्री भव्यज्ञरेखाश्रीजी म.सा.) को भी आज के दिन मैं भूल नहीं सकता। क्योंकी उनकी अवसरोचित टकोर के कारण ही मैं आज इस महाभिनिष्क्रमण रूप संयमरथ में आरूढ हो सका हुँ।

प. पू. वर्धमान तपोनिधि आ.श्री भुवनभानुसूरीश्वरजी म.सा. के शिष्यरत्न प. पू. पं. श्री पद्मसेनविजयजी म.सा. एवं प.पू. शासनप्रभावक आ.श्री रत्नाकरसूरीश्वरजी म.सा. के शिष्यरत्न प. पू. पं. श्री रत्नज्योतविजयजी म.सा. के जिन्होने जैनशासन + संघों की बहुत सारी जवाबदारी सिर पर होते हुए भी प्रस्तुत ग्रंथ का निःस्वार्थ भाव से सूक्ष्मता पूर्वक संशोधन किया।

इस ग्रंथ में भाषाकीय शुद्धिकरण करनेवाले प. पू. आ. श्री राजशेखरसूरीश्वरजी म.सा. के शिष्यरत्न प. पू. पं. श्री धर्मशेखरविजयजी म.सा., प्रोफेसर रमेशभाई शाह (साबरमती), कमलेशजी पुरोहित (सिरोहि) एवं अभिषेकभाई वकिल (इंदौर) को भी मैं आज के दिन स्मरण कर रहा हुं, क्योकि उन्होंने शुद्धिकरण करके तो अविस्मरणीय उपकार किया हैं।

आधारग्रंथों के साक्षीपाठों के लिए मुख्य आधारस्तंभ श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, आ. श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानभंडार (कोबा) रहा है एवं अन्य अन्य पुस्तकादि में रहे चित्रों के संकलन के लिए मुख्य आधारस्तंभ रूप ''गीतार्थ गंगा'' संस्था रही हैं, इसलिए इनकी भी उत्कृष्ट श्रुतभक्ति के लिए मैं अनुमोदना करता हुँ।

The Real Universe (सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड) ग्रंथ में दिए गये **3D/2D** वगैरे सर्व प्रकार के चित्रों (Pichres) को तैयार करनेवाले जैनिझम ओनलाइन के सर्वेसर्वा श्रीमान् हितेषभाई (नवसारीवाले) को भी मैं विशेष धन्यवाद देता हुँ, क्योकि इनके कारण ही इस ग्रंथ में चार चांद लगे है एवं ग्रंथ सर्वमान्य-सर्वग्राह्य बना हैं।

ऊँकार ग्राफिक्स के माननीय श्री पियुषभाई को भी इस अवसर पर भूलाया नही जा सकता क्योंकि संपूर्ण ग्रंथ के डिजाइनिंग का कार्य इन्हि महानुभाव के हाथों से सुसंपन्न हुआ है।

सुश्रावक श्री अपूर्वभाई जो नवरंग प्रिन्टर्स के मालिक है, उनके द्वारा भी इस ग्रंथ का कंपोजिंग कार्य एवं मुद्रण कार्य एकदम व्यवस्थित रूप से हुआ है अतः उनका भी इस ग्रंथ में अपूर्व योगदान रहा हैं।

यह **The Real Universe** (सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड) ग्रंथरत्न सर्व गच्छ एवं सर्व समुदाय में मान्य बने तथा ग्रंथ की उपादेयता श्री चतुर्विध संघ में बढ़े तदर्थे अपने अपने अणमोल अभिप्रायः भेजनेवाले ऐसे... प.पू.गच्छाधिपति आचार्य श्री जयघोषसूरिजी म.सा., प.पू.गच्छाधिपति आचार्य श्री पद्मसागरसूरिजी म.सा., प.पू.गच्छाधिपति आचार्य श्री हेमप्रभसूरिजी म.सा. (नीतिसूरि समुदाय), प.पू.गच्छाधिपति आचार्य श्री कलाप्रभसूरिजी म.सा., प.पू.गच्छाधिपति आचार्य श्री पुण्यपालसूरिजी म.सा., प.पू.गच्छाधिपति आचार्य श्री हेमप्रभसूरिजी म.सा. (गिरिविहारवाले), प.पू.आ.श्री अशोकसागरसूरिजी म.सा., प.पू.आ.श्री गुणरत्नसूरिजी म.सा., प.पू.आ.श्री सूर्योदयसूरिजी / राजरत्नसूरिजी म.सा., प.पू.आ.श्री जितरत्नसागरसूरिजी म.सा., प.पू.आ.श्री मुनिचंद्रसूरिजी म.सा., प.पू.आ.श्री रत्नचंद्रसूरिजी म.सा., प.पू.आ.श्री रत्नसुंदरसूरिजी म.सा., प.पू.आ.श्री जयसुंदरसूरिजी म.सा., प.पू.आ.श्री रश्मिरत्नसूरिजी म.सा., प.पू.आ.श्री रविशेखरसूरिजी म.सा., प.पू.पं.श्री रत्नज्योतविजयजी म.सा., प.पू.पं.श्री मोक्षरतिविजयजी म.सा. ...इत्यादि का मैं बहुत ही ऋणी हुं।

परम पूज्य शास्त्र संशोधक आचार्य श्री विजय मुनिचंद्रसूरीश्वरजी म.सा. एवं प.पू.षड्दर्शन निष्णात आ.श्री विजय रश्मिरत्नसूरीश्वरजी म.सा. एवं प.पू.प्रवचन प्रभावक, शासन उन्नतिकारक आ.श्री विजय मुक्तिवल्लभसूरीश्वरजी म.सा. तथा **Prof. Dr.** सुधीरभाई वी. शाह (अम.) और माननीय श्री पंडितजी जितेन्द्र बी. शाह **(L.D. Institute of Indology)** के उपकारों को भी मैं कभी भी अदा नहीं कर सकता... क्योंकि इन्होंने तो प्रस्तुत ग्रंथोद्यान को प्रस्तावना के द्वारा पल्लवित किया हैं।

विशेष में एक बात आपको बतानी हैं कि... प्रकरण एवं आगम ग्रंथों का अभ्यास करते समय तथा इस ग्रंथ के लेखन करते समय कितनेक विषय मुझे बहुत ही सुंदर एवं सरल शैली में प्रस्तुत किये हुए लगे अतः इस ग्रन्थ में कितनेक विषयों को उन उन ग्रंथो में से सीधे युं ही प्रस्तुत किया गया हैं।

इस ग्रंथरत्न का लेखन करते समय जो कोई भी जैनागम-प्रकरण ग्रंथ- अन्य शास्त्र अथवा पुस्तकों तथा इतर ऐसे वेद-पुराणादि ग्रंथों की सहाय ली हैं उन सभी का नामोल्लखन उन उन विषयों की शरुआत में रहे हुए आधार ग्रंथों की सूची में किया गया है, फिर भी जो छद्मस्थता के वश से बाकी रह गया हो तो मैं हृदय से क्षमा प्रार्थता हुँ।

इस **The Real Universe** (सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड) ग्रंथरत्न लेखन-संपादन में नामी / अनामी सर्व व्यक्ति के जो भी प्रत्यक्ष के परोक्ष रूप से इस कार्य में सहाय-मदद रूप बने हों... उनका भी में हृदय से सदा ऋणी हुं एवं सदा ऋणी रहुँगा।

गुरुगुणरश्मिहीरपादपद्मरेणु

मुनि चारित्ररत्नविजय

॥ ॐ ह्रीँ वद वद वाग्वादिनी ! भगवति ! सरस्वती ! श्रुतदेवी !
मम जाड्यं... हर हर श्री भगवत्यैक ठः ठः ठः स्वाहा ॥

॥ ऐँ नम ॥
कविजनों के मनोवांछितों को पूर्ण
करने के लिए कल्पलता के समान
हे श्रुताधिष्ठायिका ! सरस्वती माते !

सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना ILLUSTRATED

THE REAL UNIVERSE
सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड

JAIN COSMOLOGY (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति.....

विषयक ग्रंथ का सुंदर आलेखन हो इसलिए सान्निध्य करने की प्रार्थना के साथ आपका प्रणिधान कर रहा हुं ..... अतः हे माँ शारदे ! आप प्रसन्नता पूर्वक सानिध्य करना... बस ! इतना मंगल करने के बाद इस ग्रंथ का प्रारंभ कर रहा हुं ।

श्री नमस्कार महामंत्र

नमो अरिहंताणं

नमो सिद्धाणं

नमो आयरियाणं

नमो उवज्झायाणं

नमो लोए सव्वसाहुणं

एसो पंच नमुक्कारो

सव्व पावप्पणासणो

मंगलाणं च सव्वेसिं

पढमं हवइ मंगलं

सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना

ILLUSTRATED

THE REAL UNIVERSE

सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड

JAIN COSMOLOGY(सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति.....

(PART - 4)

INDEX

क्रम	विषय	पृष्ठ नं.
१.	जैनधर्म की प्राचीनता के प्रमाण	१
२.	जैनधर्म की अतिप्राचीनता के प्रमाण	३
३.	जैन दिगंबर मान्यतानुसार लोक वर्णन	६
४.	बौद्ध मतानुसार लोक वर्णन	१४
५.	वैदिक धर्मानुसार लोक वर्णन	१८
६.	भारतवर्ष का नामकरण	२७
७.	वैज्ञानिकों के मतानुसार आधुनिक विश्व	२८
८.	चातुर्द्वीपिक भूगोल परिचय	३७
९.	चलिए ! पृथ्वी की जानकारी प्राप्त करते हैं... वैज्ञानिकों के मुख से	३९
१०.	अमेरिका की "फ्लेट अर्थ सोसायटी" भी पृथ्वी को सपाट मानती हैं	४०
११.	रहस्यमय उत्तरध्रुव	४४
१२.	पृथ्वी गेंद जैसी गोल नहीं है और वह घूमती भी नही हैं उसके १०१ प्रमाण	४८
१३.	ईसाई धर्म भी पृथ्वी को समतल मानता है	९४
१४.	ईस्लाम दर्शन (धर्म) में भी पृथ्वी स्थिर हैं	९५
१५.	पृथ्वी के गोल होने के वैज्ञानिकों के पास कोई प्रमाण नहीं है	९६

क्रम	विषय	पृष्ठ नं.

01. प्लेटो व एरिस्टोटल पृथ्वी को समतल मानते थे....................९७
02. आर्यभट्ट पृथ्वी को गोल मानते थे....................९८
03. ब्रह्मगुप्त पृथ्वी को समतल मानते थे....................९८
04. निकोलस कोपरनिकसने पृथ्वी के घूमते रहने का तुक्का लगाया....................९९
05. कोपरनिकस में इस पुस्तक को प्रकाशित करने की हिम्मत नहीं थी....................१००
06. टायको ब्राह पृथ्वी को समतल मानता था....................१०१
07. जोहानिस केप्लर था टायको ब्राह के शिष्य....................१०२
08. जोहानिस केप्लर बने टायको ब्राह के वारिस....................१०३
09. गैलीलियो गैलिली पृथ्वी को घूमती हुई मानते थे....................१०५
10. ऑइजक न्युटन ने गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत की शोध की थी....................१०८
11. अल्बर्ट आइंस्टाइनने न्युटन की परिकल्पना को गलत सिद्ध किया था....................११०
12. गोलाकार सतह पर प्रकाश सरल रेखा में गति नहीं करता है....................१११
13. आइंस्टाइन की फ्रेम ड्रेगिंग परिकल्पना....................११२
14. ब्लेक होल की अजीबोगरीब परिकल्पना....................११४
15. आइंस्टाइन के सिद्धांत के समक्ष गुजरात के वैज्ञानिक की चुनौती....................११६
१६. पू. आत्मारामजी महाराज के अंतरोद्गार....................११९
१७. जानने जैसी तारातंबोल नगरी....................१२३
१८. हिमालय के उस पार....................१२८
१९. पल्योपम और सागरोपम का स्वरूप....................१३०
२०. पृथ्वी के आकार और स्थिरता संबंधी सुंदर साहित्य वर्णन....................१४४
२१. इन विषयों को जानने के लिए ये पढो....................१४५
२२. लोक के नामादि ८ निक्षेप....................१४६
२३. **jain cosmology** ग्रंथ के लिए आए हुए अभिप्रायः पत्र....................१४८
२४. पूज्यश्री के द्वारा अध्ययन-उपदेशात्मक एवं आगामी साहित्यों की सूची....................१७०
२५. ग्रंथ प्रशस्ति....................१७१

INDEX

परिशिष्ट आधार-ग्रंथ

१. जैनधर्म अने तेनी प्राचीनता
२. श्रीमद् भागवत पुराण
३. अध्यात्म सार
४. शिव पुराण
५. ब्रह्माण्ड पुराण
६. प्रभास पुराण
७. स्कन्ध पुराण
८. नाग पुराण
९. अग्नि पुराण
१०.ऋग्वेद
११.मनुस्मृति
१२.योगवसिष्ठ
१३.जैनधर्म का परिचय
१४.तिलोय पण्णत्ति
१५.त्रिलोकसार
१६."शतक" नामा पंचम कर्मग्रंथ
१७.प्रवचन सारोद्धार
१८.तत्त्वार्थ-वार्त्तिक
१९.अभिधर्म कोश
२०.सुत्तनिपात
२१.विष्णु पुराण
२२.मार्कण्डेय पुराण
२३.तत्त्वार्थ सूत्र
२४.जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति
२५.गणितानुयोग
२६.जंबूद्दीव पण्णत्ति संगहणी
२७.वायु पुराण
२८.जैनेन्द्र सिद्धांत कोश
२९.धर्मयुग
३०.पाक्षिक बुलेटिन
३१.Intelligent Life In the Universe
३२.फ्लेट अर्थ न्युज
३३.इन्वेन्टियो फारटूनेटा
३४.हेवर गेल्मर
३५.लोंगोबोर्ड
३६.इपस्विच लेक्चर्स
३७.कार्नेल्स जाग्रफी
३८.बाईबल
३९.कुरान शरीफ
४०.रिवोलूशन ऑफ दि हेवनली बाडिज
४१.सोम्नियम
४२.मिस्टेरियम कोस्मोग्राफी
४३.न्यु एस्ट्रोनामी
४४.द स्टोरी मैसेन्जर
४५.डायलोगो
४६.प्रिंसिपिया मेथेमेटिका
४७.जैनदर्शन में भूगोल मिमांसा
४८.संघयणी
४९.विशेषणवती
५०.आवश्यक सूत्र
५१.शत्रुंजय महात्म्य
५२.आचारांग सूत्र
५३.पद्मप्रभ चरित्र
५४.जैन तत्त्वादर्श
५५.भगवती सूत्र
५६.ज्योतिष करंडक
५७.काल लोकप्रकाश
५८.हेमकोष ग्रंथ
५९.तंदुल वैचारिक पयन्ना
६०.अनुयोगद्वार सूत्र
६१.स्थानांग सूत्र
६२.गणित संग्रह
६३.क्षेत्रसमासस्वोपज्ञ वृत्ति
६४.तत्त्वज्ञान स्मारिका
६५.लोकानुप्रेक्षा

द्वार-७
परिशिष्ट

१. जैनधर्म की प्राचीनता के प्रमाण

यह बात वेद, पुराण, उपनिषद तथा भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों के मंतव्यों से सत्य प्रमाणित हो चुकी है कि जैनधर्म अन्य समस्त धर्मों की अपेक्षा प्राचीन हैं। ''जैनधर्म अने तेनी प्राचीनता'' नामक पुस्तक की प्रस्तावना में पं. श्री अम्बालाल लिखते हैं -

''स्पष्ट रूपेण बौद्ध धर्म ढाई हजार वर्ष पूर्व ही प्रगट हुआ है। यही नहीं, भगवान बुद्धने जैन सिद्धांतो का अनुभव किया था। जैन सिद्धान्तों में प्रतिपादित पराकाष्ठा से ऊबकर (उकताकर) ही उन्होंने मध्यमार्ग प्रचलित किया। वही बौद्ध धर्म के रूप में प्रसारित हुआ। यह तथ्य ऐतिहासिक है।''

हिन्दु धर्म के प्रधान रूप वेद ग्रन्थों की भाषा और अर्थ अभी भी गूढ़ हैं। अनेक बार टीकाकार अपने मनपसंद अर्थ करते हैं, तो भी वेदों में कतिपय नाम ऐसे स्पष्ट हैं कि वे जैनधर्म के तीर्थंकरों के नामों की सूचना देती हैं। यही परम्परा श्रीमद् भागवत् में भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। श्रीमद् भागवतकार ने श्री ऋषभदेव का चरित्र अतीव स्पष्ट करने का प्रयत्न किया हैं। उन्हें हिन्दु धर्म के २४ अवतारों में भी स्थान प्रदान किया हैं। इससे जैनधर्म की प्राचीन परम्परा का स्पष्ट पता चलता हैं।

''भगवान महावीर के ११ गणधर और उनके बाद होनेवाले धुरंधर जैनाचार्य अधिकतर वैदिक शास्त्रों के विद्वान ब्राह्मण थे। उन्होनें अपनी (वैदिक) ज्ञान की अपूर्णता से असन्तुष्ट होकर जैनधर्म की दीक्षा अंगीकार की थी। यह तथ्य जैनधर्म के प्रति किसी की भी श्रद्धा को दृढ करता है।''

इस पुस्तक में जैनधर्म की प्राचीनता सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है - इस उद्देश्य से पाश्चात्य और पौरस्त्य विद्वानों के मन्तव्यों का संग्रह किया गया है। अभिप्राय लिखने वाले विद्वान साधारण श्रेणी के नहीं हैं, अनेक दर्शनों का तुलनात्मक अध्ययन करने के पश्चात् ही ये अभिप्राय प्रतिपादित किये गए थे, यह बात निश्चित प्रतीत होती है।

''जैनधर्म अने तेनी प्राचीनता'' नामक पुस्तक में इसके विद्वान लेखक-संपादक पंन्यास श्री सुशील विजयजी गणिवर्य (इस समय आचार्य श्री सुशीलसूरिजी म.सा. के नाम से जाने जाते थे।) ने लिखा है :-
''जगत में अनेक धर्म प्रचलित हैं, उनमें जैनधर्म का स्थान अनुपम है। उसकी प्राचीनता-सनातनता अनादिकाल

की है। जिस प्रकार संसार अनादि अनंत है उसी प्रकार जैनधर्म भी अनादि अनंत है।" संसार के विविध धर्म उन-उन मुख्य व्यक्तियों के नाम से विख्यात हुए। गौतम बुद्ध नामक व्यक्ति से बौद्ध धर्म, ईसामसीह नामक व्यक्ति से ईसाई धर्म, शिव से शिवधर्म, विष्णु से विष्णुधर्म, हजरत मुहम्मद से इस्लाम धर्म, इसी प्रकार अन्य अनेक धर्म विशिष्ट व्यक्तियों के नाम से प्रसिद्ध हुए। परन्तु इस प्रकार जैनधर्म ऋषभ नाम के व्यक्ति या पार्श्व नाम के व्यक्ति अथवा महावीर नामक व्यक्ति के कारण ऋषभ धर्म, पार्श्व धर्म किंवा महावीर धर्म के रूप में विख्यात नहीं हुआ। वस्तुतः जैनधर्म गुण निष्पण्ण नाम है। "जो राग द्वेषादि आभ्यंतर शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है वह जिन कहलाता है।" जिन द्वारा कथित धर्म जैनधर्म कहलाता है और जैनधर्म की उपासना करनेवाले को जैन कहते हैं।

आर्हत् दर्शन, स्याद्वाद दर्शन, अनेकांत दर्शन, वीतराग दर्शन, जैन दर्शन, जैन शासन, जैन मत - ये सब जैनधर्म के पर्याय वाचक शब्द हैं। अन्य धर्मों की अपेक्षा जैनधर्म की विशिष्टता-सर्वोत्कृष्टता विश्व विख्यात है। जैसे सागर में सब कुछ समा जाता है वैसे ही जैनधर्म में सभी दर्शनों का समावेश है, अन्य विविध दर्शन एक एक नय का आश्रय लेकर प्रवर्तित हुए हैं, जैन दर्शन सप्तनय द्वारा गुँफित है। न्याय विशारद न्यायाचार्य महामहोपाध्याय श्रीमद् यशोविजयजी महाराज "अध्यात्म सार" में लिखते हैं... बौद्धों का दर्शन 'ऋजुसूत्र' नय में से निकला हैं, और वेदांतियों

का मत 'संग्रह' नय से, साँख्यों के मत की भी यही स्थिति है, नैयायिक और वैशेषिक मत 'नैगम' नय से फलित हुए हैं। मीमांसको के मत का प्रादुर्भाव 'शब्द नय' से हुआ है। जैन दर्शन समस्त 'नयो' द्वारा गुँफित है। जैन दर्शन की सूक्ष्मातिसूक्ष्म कर्म पद्धति, सूक्ष्म तप मीमांसा, नवतत्त्व का सुन्दर स्वरूप, चार अनुयोगों का अनुपम निरूपण, चार निक्षेप का रम्य वर्णन, सप्तभंगी और सप्तनय का सत्य स्वरूप, स्याद्वाद- अनेकान्तवाद की विशिष्टता, अहिंसा की पराकाष्ठा, तप की अलौकिकता, योग की अद्वितीय साधना तथा व्रतों-महाव्रतों का सूक्ष्म रीति से पालन आदि की तुलना में आज तक कोई भी दर्शन समर्थ नहीं हो सका है। यही नहीं किन्तु हजारों विज्ञानवेत्तो और तत्त्वज्ञानी भी करोड़ों अरबों के धन का व्यय करके छः जीवनिकाय की हिंसा करके बनाये गये अनेक यंत्रादिक की सहायता से भी वहाँ तक नहीं पहुंच सके। ऐसा होने पर भी जितना अनुसंधान हुआ है उसके परिणाम जैन सिद्धांत को मान्यता के अनुरूप सिद्ध हुए हैं, इसका ज्वलन्त प्रमाण अणु सिद्धांत है। यही कारण है - जगत के महान विज्ञानवेत्ता, तत्त्वज्ञ, धुरंधर विद्वान तथा देश-विदेश के उच्च अधिकारी आदि भी उसकी मुक्त कंठ से लगातार प्रशंसा कर रहे हैं। विश्व के धर्मों में सब प्रकार से यदि कोई पूर्ण धर्म है तो वह जैनधर्म ही है। यही नहीं, भयंकर युद्ध की और अग्रसर राष्ट्रों को विश्वशांति का मार्ग प्रदर्शित करने की क्षमता रखने वाला यदि कोई मार्ग है तो वह जैनधर्म के सिद्धान्तों में ही हैं।

इस विषय में कुछ पाश्चात्य विदेशी विद्वानों तथा अन्य शिक्षित महानुभावों ने जैनधर्म को अन्य किसी धर्म की शाखा-प्रशाखा के रूप में मानकर पत्र पत्रिकाओं और पुस्तकों में यद्यपि लम्बे-लम्बे विवेचन किए हैं किन्तु अब विद्वानों का वह भ्रम दूर हुआ है, तथापि इस समय भी स्कूलों कॉलेजों आदि में पढ़ायी जानेवाली इतिहास की पुस्तकों में इस बात का पिष्टपेषण होता रहता है। यह किसी भी प्रकार इष्ट नहीं। इसमें सुधार होना चाहिए।

२. जैनधर्म की अतिप्राचीनता के प्रमाण

॥ शिव पुराण ॥

जैनधर्म जैनेतरों के प्राचीनतम वेदों और पुराणों से पूर्व भी विद्यमान था, इस बात के निम्न लिखित प्रमाण हैं।

"कैलासे पर्वते रम्ये, वृषभोऽयं जिनेश्वरः। चकार स्वावतारं यः सर्वज्ञः सर्वगः शिवः॥"

अर्थ :- "(केवलज्ञान द्वारा) सर्वव्यापी, कल्याण स्वरूप, सर्वज्ञ इस प्रकार के ऋषभदेव जिनेश्वर मनोहर कैलाश (अष्टापद) पर्वत पर अवतरित हुए।"

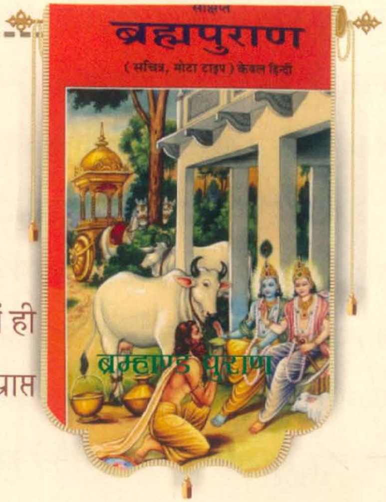

॥ ब्रह्माण्ड पुराण ॥

"नाभिस्तु जनयेत् पुत्रं, मरुदेव्या मनोहरं। ऋषभं क्षत्रियं श्रेष्ठं, सर्वक्षत्रियस्य पूर्वजम्॥"

"इह हि इक्ष्वाकुकुलवंशोद्भवेन नाभिसुतेन मरुदेवा।

नंदनमहादेवेन ऋषभेण दशप्रकारो धर्मः, स्वयमेवाचीर्णः केवलज्ञानलाभाच्च प्रवर्तितः॥"

अर्थ :- "नाभिराजा के मरुदेवी रानी से मनोहर, क्षत्रियों में श्रेष्ठ और समस्त क्षत्रियवंश का पूर्वज ऋषभ नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। इस आर्य भूमि में ही इक्ष्वाकु कुल में उत्पन्न होने वाले नाभिराजा और मरुदेवी के पुत्र महादेव ऋषभनाथ ने दश प्रकार का धर्म स्वयं धारण किया और केवलज्ञान प्राप्त कर उसका प्रचार किया।"

॥ प्रभास पुराण ॥

"रैवत्ताद्रौ जिनो नेमिर्युगादिर्विमलाचले।

ऋषीणामाश्रमादेव, मुक्तिमार्गस्य कारणम्॥"

अर्थ :- "रैवतगिरी (गिरनार) पर नेमिनाथ और विमलाचल (शत्रुंजय-सिद्धगिरी) पर युगादि (आदिनाथ) पधारे। ये गिरिवर ऋषियों के आश्रम होने के कारण मुक्तिमार्ग के हेतु हैं।"

॥ स्कन्ध पुराण ॥

"स्पृष्ट्वा शत्रुञ्जयं तीर्थं, नत्वा रैवतकाचलं । स्नात्वा गजपदे कुण्डे, पुनर्जन्म न विद्यते ॥"

"परमात्मानमात्मानं, लसत्केवलनिर्मलं । निरञ्जनं निराकारं, ऋषभं तु महाऋषिम्॥"

अर्थ :- "शत्रुंञ्जय तीर्थ को स्पर्श करने से, गिरनार को नमस्कार करने से तथा गजपद कुँड में स्नान करने से पुनः जन्म नहीं लेना पड़ता। उत्तम स्वरूप वाले, उल्लास प्राप्त करने वाले, केवलज्ञान से निर्मल आत्मा वाले, निरंजन, निराकार तथा महर्षिरूप ऋषभदेव का (सब) ध्यान करते हैं।"

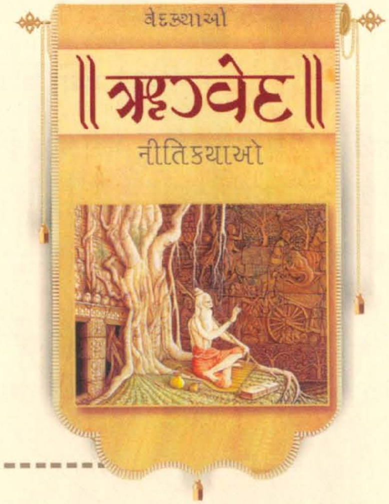

॥ ऋग्वेद ॥

"अर्हन्ता चित्पुरो दर्धे अशेवदेवावर्वंते ॥" (अ. ४-४-३२-५ ऋग्वेद)

अर्थ :- "जैसे सूर्य किरणों को धारण करता है वैसे अरिहंत ज्ञान की राशि धारण करते हैं।"

"अर्हतो ये सुदानको नरोऽसामिशवसः । प्रयज्ञं यज्ञियेभ्यो दिवो अर्चा मरुद्भ्यः ॥" (अ. ४, अ. ३, वर्ग ८ - ऋग्वेद)

अर्थ :- "जो अरिहंत सुन्दर दान वाला कर्म करने में अग्रसर और अत्यंत पराक्रमी है, वैसे यज्ञपात्र देवों के देव को यज्ञीय आहुति दो।"

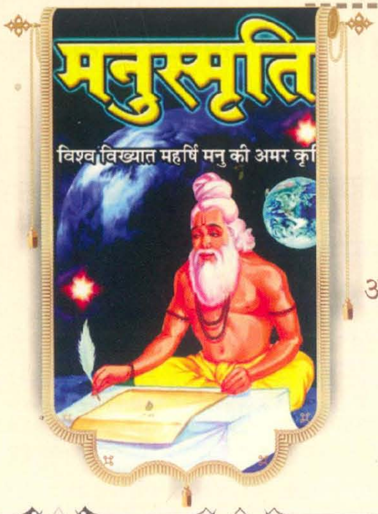

॥ मनुस्मृति ॥

"मरुदेवी च नाभिश्च भरते कुलसत्तमाः । अष्टमो मरुदेव्यां तु नाभिजात उरूक्रमः ॥"

"दर्शयन् वर्त्म वीराणां, सुरासुरनमस्कृतः । नीतित्रयाणां कर्ता यो युगादौ प्रथमो जिनः ॥"

अर्थ :- "भरत क्षेत्र में छट्ठे कुलकर मरुदेव और सातवें नाभि हुए। आठवाँ कुलकर नाभि द्वारा मरुदेवी से उत्पन्न विशाल चरण वाला ऋषभ हुआ। वह वीर पुरुषों का मार्गदर्शक, सुरासुर द्वारा प्रणत तथा तीन नीतियों का उपदेशक, युग के प्रारंभ में जिन हुआ।"

|| अग्नि पुराण ||

"ऋषभो मरुदेव्याश्च ऋषभाद् भरतोऽभवत् । भरताद् भारतं वर्षः, भरतात् सुमतिस्त्वभूत् ॥"

अर्थ :- "मरुदेवी से ऋषभ हुए, ऋषभ से भरत, भरत से भारतवर्ष (क्षेत्र) हुआ और इसी भरत से सुमति हुआ।"

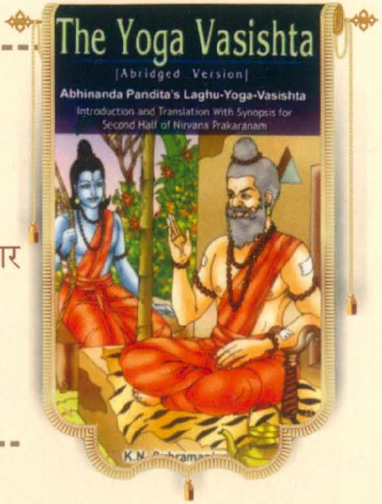

|| योगवासिष्ठ ||

"नाहं रामो न मे वांछा भावेषु च न मे मनः । शान्तमास्थातुमिच्छामि, स्वात्मन्येव जिनो यथा ॥"

अर्थ :- "मैं राम नहीं हुँ, मेरी कोई इच्छा नहीं, पदार्थों में मेरा मन नहीं। जिस प्रकार "जिन" अपने आत्मा में शान्त भाव से स्थिर रहते हैं उसी प्रकार शांत भाव से मैं रहना चाहता हूँ।"

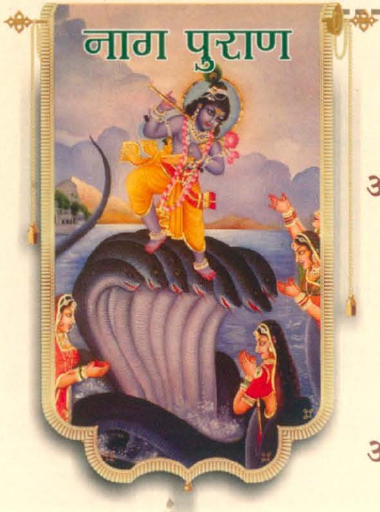

|| नाग पुराण ||

"अष्टषष्टिसु तीर्थेषु यात्रायां यत् फलं भवेत् । आदिनाथस्य देवस्य, स्मरणेनापि तद् भवेत् ॥"

अर्थ :- "६८ तीर्थों में यात्रा करने से जो फल मिलता है वह फल आदिनाथ देव का स्मरण करने से भी प्राप्त होता है।" (श्री ऋषभदेव का दूसरा नाम आदिनाथ भी है।)

"अकारादि हकारान्त, मूर्द्धाधरेफसंयुत्तम् । नादबिन्दुकलाकान्त, चन्द्रमण्डलसन्निभम् ॥"

"एतद् देवी ! परं तत्त्वं, यो विजानाति तत्त्वतः । संसारबन्धनं छित्त्वा, स गच्छेत् परमां गतिम् ॥"

अर्थ :- "जिसके आदि में 'अकार' (अ) है और अन्त में हकार (ह) है, ऊपर और नीचे रेफ (र) सहित नाद बिन्दु-कला से संपन्न अर्ध चन्द्राकार (ˇ) और बिन्दु (˙) से युक्त चन्द्र मंडल के समान 'अर्हं' शब्द है। हे देवि ! यह (अर्हं शब्द) परम तत्त्व है। इस बात को जानने वाला संसार के बन्धन को तोडकर परमगति (मोक्ष) प्राप्त करता है।"

("जैनधर्म का परिचय" में से साभार...)

३. जैन दिगंबर मान्यतानुसार लोक वर्णन

- ले. पं. हीरालाल शास्त्री

अनन्त आकाश के ठीक बीचों-बीच यह हमारा लोक अवस्थित है, जो नीचे पल्यंक के सदृश, मध्य में वज्र के समान और ऊपर खड़े मृदंग के तुल्य है। यह लोक नीचे विस्तीर्ण, मध्य में संक्षिप्त और ऊर्ध्वमुख मृदंग के समान हैं। यह सब मिलकर लोक का आकार पुरुष के आकार समान हो जाता है। जैसे कोई पुरुष अपने दोनों पैरों को फैलाकर और दोनों हाथों को कटि पर रख कर खड़ा हो, तो उसका जैसा आकार होगा, ठीक इसी प्रकार लोक का आकार है। अथवा आधे मृदंग के ऊपर पूरे मृदंग को रखने पर जैसा आकार होता है, वैसा आकार लोक का समझना चाहिए[१]। कटि के नीचे के भाग को अधोलोक, ऊपर के भाग को ऊर्ध्वलोक और कटि-स्थानीय भाग को मध्यलोक कहते है। इस तीन विभाग वाले लोक को लोकाकाश कहा जाता है, क्योंकि इसके भीतर ही जीव-पुद्गलादि सभी चेतन और अचेतन द्रव्य पाये जाते हैं। इस लोकाकाश के सिवाय चारों और पाये जाने वाले अनंत आकाश को अलोकाकाश कहते है, क्योंकि इसमें केवल आकाश के अतिरिक्त अन्य कोई चेतन या अचेतन द्रव्य नहीं पाया जाता है।

1 - सामान्य लोक स्वरूप

लोकाकाश की ऊँचाई १४ रज्जु है[२]। यह अधोलोक में सबसे नीचे सात रज्जु विस्तृत है। पुनः क्रम से घटता हुआ कटि स्थानीय मध्यभाग में एक रज्जु विस्तृत है। इससे ऊपर क्रम से बढ़ता हुआ दोनों हाथों में कोहिनी-स्थान पर पाँच रज्जु विस्तृत है। पुनः क्रम से घटता हुआ शिरःस्थानीय लोक के अग्रभाग पर एक रज्जु विस्तृत है। यह समस्त लोक चारों और से घनोदधि, घनवात और तनुवात इन तीन वलयों से वेष्टित है। अर्थात् इनके आधार पर अवस्थित है। प्रथम वलय अधिक सघन है, अतः इसे घनोदधि कहते हैं। दूसरा वलय तीसरे वलय की अपेक्षा सघन है, अतः उसे घनवात कहा गया है। तीसरा वलय उक्त दोनों की अपेक्षा अत्यन्त सूक्ष्म या पतला है, इसलिए इसे तनुवात कहते हैं[३]।

2 - अधोलोक

कटि-स्थानीय झल्लरी के समान आकार वाले मध्यलोक के नीचे सात पृथ्वियाँ है - घम्मा, वंशा, सेला, अंजना, रिष्टा, मघा और माघवती। रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा और महामतःप्रभा - इनके गोत्र कहे गये हैं। इनमें से पहली रत्नप्रभा के तीन भाग हैं - खरभाग, पंकभाग और अब्बहुलभाग। इनमें खरभाग सोलह हजार योजन मोटा(ऊंचाई) है। पंकभाग चौरासी हजार योजन और अब्बहुलभाग अस्सी हजार योजन मोटा है। इस प्रकार रत्नप्रभा पृथ्वी की मोटाई

(१) भगवती सूत्र /शतक - ८/उद्देशा-२/सूत्र ५। तिलोयपण्णती, अ. १, गा. १३७-३८। उब्भिय दलेक्कमुरवद्धसंचयसण्णिहो हवे लोगो।(त्रिलोकसार गा. ६)
(२) चोद्दस रज्जूदयो लोगो (त्रिलोकसार गा. ६) जगसेढिसत्तभागो रज्जु।(त्रिलोकसार गा. ७) चउदसरज्जू लोओ बुद्धिकओ होइ सत्तरज्जुघणो।(कर्मग्रन्थ. ५-६७) सयंभुपरिमंताओ अवरंतो जाव रज्जूमाइओ।(प्रवचनसारो. १४३, ३१) राजु का प्रमाण जगच्छ्रेणी के सातवें भाग बराबर है जो कि स्वयम्भूरमण द्वीप के पूर्व भाग से लेकर पश्चिम भाग पर्यन्त के प्रमाण है। एक रज्जु में असंख्यात योजन होते हैं। (३) दिगम्बर शास्त्रों में घनोदधि का वर्ण गोमूत्र सम, घनवात का मूंग समान और तनुवात का अव्यक्त वर्ण कहा है।

एक लाख अस्सी हजार योजन है। इस तीन विभागवाली रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे असंख्यात हजार योजन के अन्तराल के बाद दूसरी शर्करा पृथ्वी है। यह एक लाख बत्तीस हजार योजन मोटी है। इसके नीचे पुनः असंख्यात हजार योजन नीचे जाकर तीसरी वालुका पृथ्वी है । इसकी मोटाई एक लाख अट्ठाईस हजार योजन है। इस तीसरी पृथ्वी से असंख्यात हजार योजन नीचे जाकर चौथी पंकप्रभा पृथ्वी है। इसकी मोटाई एक लाख चौबीस हजार योजन है। इस पृथ्वी का तल भाग मध्यलोक से तीन रज्जु नीचा है। इससे असंख्यात हजार योजन नीचे जाने पर पाँचवी धूमप्रभा पृथ्वी है। इसकी मोटाई एक लाख बीस हजार योजन है। इसका तल भाग मध्यलोक से पाँच रज्जु नीचा है। छट्ठी पृथ्वी से असंख्यात हजार योजन नीचे जाने पर सातवीं महामतःप्रभा पृथ्वी है। इसकी मोटाई एक लाख आठ हजार योजन है[१] । इसका तल भाग मध्यलोक से छह रज्जु नीचा है।

रत्नप्रभा पृथ्वी के एक लाख अस्सी हजार योजन प्रमाण क्षेत्र में से ऊपर नीचे के एक-एक हजार योजन भाग को छोड़कर मध्यवर्ती क्षेत्र में ऊपर भवनवासियों के सात करोड़ बहत्तर लाख भवन हैं[२], तथा नीचे नारकियों के तीस लाख नरकावास हैं[३] । किन्तु त्रिलोकप्रज्ञप्ति, तत्त्वार्थ-वार्त्तिक आदि दिगम्बर ग्रन्थों में इससे भिन्न उल्लेख पाया जाता है[४] ।

दूसरी पृथ्वी के ऊपर नीचे एक-एक हजार योजन भूमि भाग को छोड़कर मध्यवर्ती भाग में नारकों के २५ लाख नरकावास है। इसी प्रकार तीसरी से लगाकर सातवीं पृथ्वी तक उनकी मोटाई के ऊपर नीचे के एक-एक हजार योजन भाग को छोड़कर मध्यवर्ती भागों के क्रमशः १५ लाख, १० लाख, ३ लाख, पाँच कम १ लाख और ५ नरकावास है। ये नरकावास पटल या पाथड़ों में विभक्त हैं। पहली आदि पृथ्वी में क्रमशः १३, ११, ९, ७, ५, ३ और १ पटल हैं। इस प्रकार सातों पृथ्वियों के नरकावासों के ४९ पटल हैं। इन ४९ पटलों में विभक्त सातों पृथ्वियों के नरकावासों का प्रमाण ८४ लाख है, जिनमें असंख्यात नारकी जीव सदाकाल अनेक प्रकार के क्षेत्रज, परस्परोदीरित, शारीरिक, मानसिक दुःखों को भोग रहे हैं। इन नरकों में क्रूर कर्म करने वाले पापी मनुष्य और पशु-पक्षी तिर्यंच उत्पन्न होते हैं। वे पहली पृथ्वी में कम से कम १० हजार वर्ष की आयु से लेकर सातवीं पृथ्वी में ३३ सागरोपम काल तक नाना प्रकार के दुःखों को पाया करते हैं। उनकी अनपवर्तनीय आयु होने से अकाल मृत्यु नहीं होती है। उनका शरीर वैक्रिय और औपपातिक होता है। जन्म लेने के पश्चात् अन्तर्मुहूर्त में ही उनके शरीर का पूरा निर्माण हो जाता है और वे उत्पन्न होते ही ऊपर की ओर पैर तथा अधोमुख होकर नीचे नरक की भूमि पर गिरते हैं।

सातवीं पृथ्वी के नीचे एक रज्जु प्रमाण मोटे और सात रज्जु-विस्तृत क्षेत्र में केवल एकेन्द्रिय जीव ही रहते हैं।

---

१) दिगम्बर परम्परा में रत्नप्रभा आदि पृथ्वीयों की मोटाई क्रमशः ८०,०००, ३२,०००, २८,०००, २४,०००, २०,०००, १६,००० और ८,००० योजन मानी गई है। तिलोयपण्णति में पाठान्तर देकर उपर्युक्त मोटाई का भी उल्लेख है।(२) पण्णवणा सूत्र /पद-२/सूत्र-१७७। (३) पण्णवणा सूत्र /पद-२/सूत्र-१६८।(४) दिगम्बर परम्परा के अनुसार रत्नप्रभा के तीन भागों में से प्रथम भाग एक-एक हजार योजन क्षेत्र को छोड़कर मध्यवर्ती १४ हजार योजन के क्षेत्र में किन्नर आदि सात व्यन्तर के देवों के, तथा नागकुमार आदि नौ भवनवासी देवों के आवास है। तथा रत्नप्रभा के दूसरे भाग में असुरकुमार, भवनपति और राक्षसादि व्यन्तरपति के आवास है। रत्नप्रभा के तीसरे भाग में नारकों के आवास हैं।

3 - मध्यलोक

मध्यलोक का आकार झल्लरी या चूडी के समान गोल है। इसके सबसे मध्यभाग में एक लाख योजन विस्तृत जम्बूद्वीप है। इसे सर्व और से घेरे हुए दो लाख योजन विस्तृत लवण समुद्र है। इसे सर्व और से घेरे हुए चार लाख योजन विस्तृत धातकीखण्डद्वीप है। इसे सर्व और से घेरे हुए आठ लाख योजन विस्तृत कालोद समुद्र है। इसे सर्व और से घेरे हुए सोलह लाख योजन विस्तृत पुष्करद्वीप है। इस पुष्करद्वीप के ठीक मध्य भाग में गोल आकार वाला मानुषोत्तर पर्वत है। इससे परवर्ती पुष्करार्धद्वीप में तथा उससे आगे के असंख्यात द्वीप समुद्रों में वैक्रिय लब्धि संपन्न या चारणमुनि के अतिरिक्त अन्य मनुष्यों का आवागमन नहीं हो सकता, ऐसी श्वेताम्बर सम्प्रदाय की मान्यता है। किन्तु दिगम्बर-सम्प्रदाय की मान्यता के अनुसार ऋद्धि-सम्पन्न मनुष्य भी नहीं आ जा सकते हैं।

पुष्करद्वीप को घेरकर उससे दुगुने विस्तार वाला पुष्करोद समुद्र है। पुनः उसे घेर उत्तरोत्तर दुगुने-दुगुने विस्तार वाले वरुणवर द्वीप-वरुणवर समुद्र, क्षीरवरद्वीप-क्षीरवर समुद्र, घृतवर द्वीप-घृतवर समुद्र, क्षोदवर द्वीप-क्षोदवर समुद्र, नन्दीश्वर द्वीप-नन्दीश्वर समुद्र आदि नाम वाले असंख्यात द्वीप और समुद्र है। सबसे अन्त में असंख्यात योजन विस्तृत स्वयम्भूरमण द्वीप एवं स्वयंभूरमण समुद्र है। इस असंख्यात द्वीप-समुद्रों वाले मध्यलोक के ठीक मध्य में जो एक लाख योजन विस्तृत जम्बूद्वीप है उसके भी मध्यभाग में मूल में दस हजार योजन विस्तार वाला और एक लाख योजन ऊँचा मेरुपर्वत है। इसके उत्तर दिशा में अवस्थित उत्तरकुरु में एक अनादि-निधन पार्थिव जम्बू-वृक्ष है, जिसके निमित्त से ही इस द्वीप का नाम जम्बूद्वीप पड़ा है। इस द्वीप का विभाजन करने वाले पूर्व से लेकर पश्चिम तक लम्बे छह वर्षधर पर्वत है - हिमवान, महाहिमवान, निषध, नीलवंत, रुक्मी और शिखरी। इन वर्षधर पर्वतों से विभक्त होने के कारण जम्बूद्वीप के सात विभाग हो जाते हैं, इन्हें वर्ष या क्षेत्र कहते हैं। इनके नाम दक्षिण की ओर से इस प्रकार हैं - भरत, हैमवंत, हरिवर्ष, विदेह, रम्यक्, हैरण्यवंत और ऐरावत वर्ष। इनमें से विदेह क्षेत्र के मध्य-भाग में मेरुपर्वत है। इसके दक्षिणी भाग में भरत आदि तीन क्षेत्र है और उत्तरी भाग में रम्यक् आदि तीन क्षेत्र हैं।

4 - कर्मभूमियाँ और अकर्मभूमियाँ

उपर्युक्त सात क्षेत्रों में से भरत, ऐरावत और विदेहक्षेत्र (देवकुरु और उत्तरकुरु को छोड़कर) को कर्मभूमि कहा जाता है, क्योंकि यहाँ के मनुष्य असि, मषि, कृषि आदि कर्मों के द्वारा अपना जीवन-निर्वाह करते हैं। यहाँ के मनुष्य तिर्यंच अपने-अपने पुण्य-पापों के अनुसार नरक, तिर्यंचादि चारों गतियों में उत्पन्न होते हैं तथा यहाँ के ही मनुष्य अपने पुरूषार्थ के द्वारा कर्मो का क्षय करके मोक्ष प्राप्त करते है। उक्त कर्मभूमि के सिवाय शेष को अकर्मभूमि या भोगभूमि कहा जाता है, क्योंकि यहाँ असि-मषि आदि कर्मों के द्वारा जीव को कर्मोपार्जन नहीं करना पड़ता, किन्तु प्रकृति-प्रदत्त कल्पवृक्षों के द्वारा ही जीवन-निर्वाह होता है। भोगभूमि के जीवों की अकाल मृत्यु भी नहीं होती है, किन्तु वे सदा स्वस्थ रहते हुए पूर्ण आयु-पर्यन्त दिव्य भोगों को भोगते रहते हैं।

5 - अन्तर्द्वीप

प्रथम हिमवंत पर्वत की चारों विदिशाओं में तीन-तीन सौ योजन लवण-समुद्र के भीतर जाकर चार अन्तर्द्वीप हैं। इसी प्रकार लवणसमुद्र के भीतर चार सौ, पाँच

सौ, छह सौ, सात सौ, आठ सौ और नौ सौ योजन आगे जाकर चारों विदिशाओं मे चार-चार अन्तर्द्वीप और है। इस प्रकार चुल्ल हिमवंत के (७ x ४ = २८) सर्व अन्तर्द्वीप २८ होते हैं। इसी प्रकार छट्ठे शिखरी पर्वत के लवण समुद्रगत २८ अन्तर्द्वीप हैं। दोनों ओर के मिलाकर ५६ अन्तर्द्वीप हो जाते हैं।[१] इनमें एकोरुक आदि अनेक आकृतियों वाले मनुष्य रहते हैं। वे कल्पवृक्षों के फल-फूलों को खाकर अपना जीवन निर्वाह करते हैं, स्त्री-पुरुष के रूप में युगल उत्पन्न होते हैं और साथ ही मरते हैं। इनके मरण के कुछ समय पूर्व युगल-सन्तान उत्पन्न होती हैं।[२] ऊपर जिन छह वर्षधर पर्वतों के नाम कहे गये हैं, उनके ऊपर क्रमशः पद्म, महापद्म, तिगिंच्छि, केशरी, महापुण्डरीक और पुण्डरीक नाम का एक-एक ह्रद या सरोवर है। इन्हीं सरोवरों के मध्य में पद्मों (कमलों) का अवस्थान बतलाया गया है।(विशेष वर्णन के लिए प्रस्तुत ग्रन्थ का PART - 1 तद्विषयक प्रसंग (पेज नं-६२ पर से) देखिए।

हिमवंत पर्वतस्थ पद्मद्रह के पूर्व भाग से गंगा महानदी निकली है, जो पर्वत से नीचे गिरकर दक्षिण भरत क्षेत्र में बहकर पूर्वमुखी होकर पूर्व के लवणसमुद्र में जाकर मिलती हैं। इसी पद्म-सरोवर के पश्चिम भाग से सिन्धु महानदी निकलकर भरतवर्ष के दक्षिण भाग में कुछ दूर बहकर पश्चिमाभिमुखी होकर पश्चिम लवणसमुद्र में जाकर मिलती है। इसी सरोवर के उत्तरी भाग से रोहितांशा नदी निकली है जो कि हैमवंतक्षेत्र में बहती है। अन्तिम शिखरी पर्वत के ऊपर स्थित पुण्डरीक सरोवर के पूर्वी भाग से रक्ता और पश्चिमी भाग से रक्तवती नदी निकलकर ऐरावत क्षेत्र में बहती हुई क्रमशः पूर्व और पश्चिम समुद्र में जाकर मिलती है। इसी पुण्डरीक सरोवर के दक्षिणी भाग से सुवर्णकूला नदी निकली है, जो हैरण्यवंत क्षेत्र में बहती है। शेष मध्यवर्ती वर्षधर पर्वतों के सरोवरों से दो-दो नदियाँ निकली है। वे अपने-अपने क्षेत्रों में बहती हुई पूर्व एवं पश्चिम के समुद्र में जाकर मिलती हैं। इन प्रधान महानदियों में सहस्त्रों अन्य छोटी नदियाँ आकर मिलती हैं।

विदेहक्षेत्र में मेरुपर्वत के ईशानादि चारों कोणों में क्रमशः गन्धमादन, माल्यवंत, सौमनस और विद्युत्प्रभ नाम वालें चार पर्वत हैं। उनसे विभक्त होने के कारण मेरु के दक्षिणी भाग को देवकुरु और उत्तरी भाग को उत्तरकुरु कहते हैं। ये दोनों ही क्षेत्र भोगभूमि है। मेरु के पूर्ववर्ती भाग को पूर्व विदेह और पश्चिम दिशा वाले भाग को अपर या पश्चिम विदेह कहते हैं। इन दोनों ही स्थानों में सीता-सीतोदा नदी के बहने से दो-दो खण्ड हो जाते हैं। इन चारों ही खण्डों में कर्मभूमि है। इन्हीं में सीमन्धर आदि २० तीर्थंकर सदा विहार करते और धर्मोपदेश देते हुए विराजते हैं और आज भी वहाँ के पुरुषार्थी मानव कर्मो का क्षय करके मोक्ष जाते हैं।

6 - ज्योतिष्क लोक

जम्बूद्वीप के समतल भाग से ७९० योजन की ऊँचाई से लेकर ९०० योजन की ऊँचाई तक ज्योतिष्क लोक है, जहाँ पर सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र और तारा, इन पाँच जाति के ज्योतिषी देवों के विमान हैं। ये सभी विमानों के ज्योतिर्मान या प्रकाश स्वभावी हैं, अतः इन्हें ज्योतिष्क लोक कहते हैं और उनमें रहने वाले ज्योतिष्क देवों के निवास के कारण उक्त क्षेत्र ज्योतिष्क लोक कहलाता है। तिरछे रूप में ज्योतिष्क लोक स्वयम्भूरमण समुद्र तक फैला हुआ है। इसमें ७९० योजन की ऊँचाई पर सर्वप्रथम

१. दिगम्बर परम्परा में अन्तर्द्वीपों की संख्या ९६ बतलायी गयी है। विशेष के लिए देखो - तिलोयपण्णत्ति अ.४, गा. २४७८-२४९०। तत्त्वार्थवार्त्तिक अ.३, सूत्र ३७ की टीका आदि।

२. देखो - तिलोयपण्णत्ति अ. ४, गा. २४८६, तथा २५१२ आदि।

ताराओं के विमान हैं। उनसे १० योजन की ऊँचाई पर सूर्य का विमान है। सूर्य से ८० योजन ऊपर चन्द्र का विमान है। चन्द्र से ४ योजन ऊपर नक्षत्र हैं। नक्षत्रों से ४ योजन ऊपर बुध का विमान है। बुध से ३ योजन ऊपर शुक्र का विमान है। शुक्र से ३ योजन ऊपर गुरु का विमान है। गुरु से ३ योजन ऊपर मंगल का विमान है और मंगल से ३ योजन ऊपर शनैश्चर का विमान है। इस प्रकार सर्व ज्योतिष्क विमान समुदाय एक सौ दस योजन के भीतर पाया जाता है।

मध्य-लोकवर्ती तीसरे पुष्करद्वीप के मध्य में जो मानुषोत्तर पर्वत है, वहाँ तक का क्षेत्र मनुष्यलोक कहलाता है। इस मनुष्यलोक के भीतर सर्व ज्योतिष्क विमान मेरु की प्रदक्षिणा करते हुए निरन्तर घूमते रहते हैं। यहाँ पर सूर्य के उदय और अस्त से ही दिन-रात्रि का व्यवहार होता है। मनुष्यलोक के बाहरी भाग से लेकर स्वयम्भूरमण समुद्र तक के असंख्यात योजन विस्तृत क्षेत्र में जो असंख्य ज्योतिष्क विमान हैं, वे घूमते नहीं, किन्तु सदा अवस्थित रहते हैं। जम्बूद्वीप में मेरु के चारों ओर १,१२१ योजन तक ज्योतिष्क मण्डल नहीं है। लोकान्त में भी इतने ही योजन छोड़कर ज्योतिष्क मण्डल अवस्थित है। इसके मध्यवर्ती भाग में यथासंभव अन्तराल के साथ सर्वत्र वह (ज्योतिष्क चक्र) फैला हुआ है।

जैन मान्यता के अनुसार जम्बूद्वीप में २ सूर्य और २ चन्द्र हैं। एक सूर्य मेरुपर्वत की पूरी प्रदक्षिणा दो दिन रात में करता है। इसका परिभ्रमण क्षेत्र जम्बूद्वीप के भीतर १८० योजन और लवण-समुद्र के भीतर ३३० $^{४८}/_{६१}$ योजन है। सूर्य के घूमने के मण्डल १८३ हैं। एक मण्डल से दूसरे मण्डल का अन्तर दो योजन का है। इस प्रकार प्रथम मण्डल से अन्तिम मण्डल तक परिभ्रमण करने में सूर्य को ३६६ दिन लगते हैं। सौर मास के अनुसार एक वर्ष में इतने ही दिन होते हैं। चन्द्र के परिभ्रमण के मण्डल केवल १५ हैं। चन्द्र को भी मेरु की एक प्रदक्षिणा करने में दो दिन-रात से कुछ अधिक समय लगता है, क्योंकि उसकी गति सूर्य से मन्द है। इसी कारण से चन्द्र के उदय में सूर्य की अपेक्षा आगा-पीछापन दिखाई देता है। एक चन्द्र अपने १५ मंडलों में चन्द्रमास में १४ $^{१}/_{४}$ + $^{१}/_{१२४}$ मंडल ही चलता है, अतः चन्द्रमास के अनुसार वर्ष में ३५५ या ३५६ ही दिन होते हैं।

जैन मान्यतानुसार लवणसमुद्र में ४ सूर्य और ४ चन्द्र है। धातकीखण्ड में १२ सूर्य १२ चन्द्र हैं। कालोदधि समुद्र में ४२ सूर्य और ४२ चन्द्र है। पुष्करार्धद्वीप में ७२ सूर्य और ७२ चन्द्र हैं। पुष्करार्ध के परवर्ती अर्ध भाग में भी ७२-७२ ही सूर्य-चन्द्र हैं। इससे आगे स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त सूर्य और चन्द्र की संख्या उत्तरोत्तर दुगुनी-दुगुनी हैं।

१ चन्द्र के परिवार में १ सूर्य, २८ नक्षत्र, ८८ ग्रह और ६६,९७५ कोड़ाकोड़ी तारे होते हैं। जम्बूद्वीप में दो चन्द्र होने से नक्षत्रादि की संख्या दुगुनी जाननी जाहिए। इस प्रकार सारे ज्योतिष्कलोक में असंख्य सूर्य, चन्द्र हैं। इनसे २८ गुणित नक्षत्र और ८८ गुणित ग्रह हैं। तथा सूर्य से ६६,९७५ कोड़ाकोड़ी गुणित तारे हैं।

मनुष्यलोकवर्ती ज्योतिष्क विमान यद्यपि स्वयं गमन स्वभावी हैं, तथापि आभियोग्य जाति के देवों सूर्य चन्द्रादि विमानों को गतिशील बनाये रखने में निमित्त-स्वरूप बनते हैं। ये देव सिंह, गज, बैल और अश्व का आकार धारण कर और क्रमशः पूर्वादि चारों दिशाओं में संलग्न रहकर सूर्यादि को गतिशील बनाये रखते हैं।

7 - ऊर्ध्वलोक

मेरुपर्वत को तीनों लोक का विभाजक माना गया है। मेरु के अधस्तन भाग को अधोलोक और मेरु के ऊपर के भाग को ऊर्ध्वलोक कहते हैं। ऊर्ध्वलोक में

श्वेताम्बरीय मान्यतानुसार स्वर्गों की संख्या बारह हैं और दिगम्बरीय मान्यतानुसार सोलह है। इन स्वर्गों में कल्पवासी देव और देवियाँ रहती हैं। इनसे ऊपर नौ ग्रैवेयक, उनके ऊपर दिगम्बरीय मान्यतानुसार नौ अनुदिश और उनके ऊपर पाँच अनुत्तर विमान हैं। इन विमानों में रहने वाले देव कल्पातीत कहलाते हैं, क्योंकि उनमें इन्द्र, सामानिक आदि व्यवहार नहीं है, वे उससे परे (अलिप्त) हैं। इन विमानों में रहने वाले देव समान वैभव वाले हैं और सभी अपने आपको इन्द्र स्वरूप से अनुभव करते हैं, इसलिए वे (अहं इन्द्रः) 'अहमिन्द्र' कहलाते हैं।

स्वर्गों में जो कल्पवासी देव रहते हैं, उनमें इन्द्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंश, पारिषद्य, आत्मरक्षक, लोकपाल, अनीक, प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्बिषिक नाम की दस जातियाँ हैं। जो सामानिक आदि अन्य देवों के स्वामी होते हैं, उन्हें ''इन्द्र'' कहते है। उनकी आज्ञा सभी देव शिरोधार्य करते हैं और उनका वैभव, ऐश्वर्य अन्य सर्व देवों से बहुत बढ़ा-चढ़ा होता है। जो आज्ञा और ऐश्वर्य को छोड़कर शेष सब बातों में इन्द्र के समान होते हैं उन्हें ''सामानिक'' कहते हैं। मंत्री और पुरोहित का काम करने वाले देव ''त्रायस्त्रिंश'' कहलाते हैं। उनकी संख्या तैंतीस ही होती है, इसलिए ये त्रायस्त्रिंश कहे जाते हैं। इन्द्र की सभा या पर्षदा के सदस्यों को ''पारिषद्य'' कहते हैं। इन्द्र के अंग-रक्षक देव ''आत्मरक्षक'' कहलाते हैं। सर्व देवों की रक्षा करने वाले देव ''लोकपाल'' कहलाते हैं। सेना में काम करने वाले देवों को ''अनीक'' कहते हैं। साधारण प्रजा-स्थानीय देवों को ''प्रकीर्णक'' कहते हैं। देवलोक में जो देव सब से हीन पुण्यवाले होते हैं, उन्हें ''किल्बिषिक'' कहते हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ में भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिष्क देवों का भी वर्णन किया है, उनमें से भवनवासियों में भी उपर्युक्त दस भेद हैं। किन्तु व्यन्तर और ज्योतिष्क देवों में ''त्रायस्त्रिंश'' और ''लोकपाल'' को छोड़कर शेष आठ भेद होते हैं। व्यन्तर देवों के आवास रत्नप्रभा पृथ्वी के प्रथम-द्वितीय काण्ड में तथा मध्यलोकवर्ती असंख्यात द्वीप और समुद्रों में पाये जाते हैं। पाँचवें ब्रह्म स्वर्ग के अन्त में सारस्वत आदि लोकान्तिक देव रहते हैं। ये देवर्षि कहलाते हैं। वे स्वर्ग के देवों में सर्वाधिक ज्ञानी होते है। वे तीर्थंकरों के महाभिनिष्क्रमण कल्याणक के सिवाय अन्य किसी कल्याणक में नहीं आते हैं और वे सभी एक भवावतारी होते हैं।

भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क और कल्पवासी इन सभी प्रकार के देवों का औपपातिक जन्म होता है। ये अपनी उपपात शय्या पर जन्म लेने के पश्चात् एक अन्तर्मुहूर्त में ही पूर्ण युवावस्था को प्राप्त हो जाते हैं।

8 - तमस्काय

जम्बूद्वीप से तीर्छे असंख्यात द्वीप-समुद्रों को लांघने पर अरुणवर-द्वीप की बाहरी वेदिका के अन्त से अरुणोद समुद्र में बयालीस हजार योजन अवगाहन करके जल के ऊपरी भाग में एक प्रदेश की श्रेणी वाला तमस्काय (अन्धकार-पिण्ड) आरम्भ होता है। पुनः वह १,७२१ योजन ऊपर उठकर विस्तार को प्राप्त होता हुआ सौधर्मादि चार कल्पों को आवृत्त करके पाँचवें ब्रह्मलोक नामक देवलोक में रिष्ट विमान को प्राप्त होकर समाप्त होता है। इस तमस्काय का आकार नीचे मल्लकमूल और मुर्गे के पींजरे के समान है। इसके लोकतमिस्त्र आदि १३ नाम हैं और इस में आठ कृष्णराजियाँ बतलायी गयी हैं। (विशेष के लिए प्रस्तुत ग्रन्थ का PART - 2 तद्विषयक प्रसंग पेज नं. ८२ में देखिए।)

9 - सिद्धलोक

ऊर्ध्वलोक के सबसे अन्त में स्थित सर्वार्थसिद्ध विमान के अग्रभाग से बारह योजन ऊपर ईषत्प्राग्भार नाम की पृथ्वी है। वह पैंतालीस लाख योजन विस्तृत गोल-आकार वाली है। यह बीच में आठ योजन मोटी(ऊंची) है फिर क्रम से घटती हुई सबसे अन्तिम प्रदेशों में मक्खी के पंख से भी पतली हो गई है। दिगम्बर मतानुसार ईषत्प्राग्भार पृथ्वी लोकान्त तक विस्तृत होने से एक रज्जु चौड़ी और सात रज्जु लम्बी है। इसके ठीक मध्यभाग में मनुष्य क्षेत्र पैंतालीस लाख योजन लम्बा-चौड़ा गोल आकार वाला सिद्धक्षेत्र है। इसका आकार रुप्यमय छत्राकार है। इस सिद्धक्षेत्र या सिद्धलोक में कर्मों का क्षय करके संसार चक्र से छूट गए मुक्त जीव निवास करते हैं और अनंत काल तक अपने आत्मिक अव्याबाध निरुपम सुख को भोगते रहते हैं।

10 - क्षेत्र / माप

जैन परम्परा में क्षेत्र-माप इस प्रकार बतलाया गया है -

परमाणु	-	पुद्गल का सबसे छोटा अविभागी अंश
अनन्तपरमाणु	-	१ उस्सणहसण्हिया (उत्संज्ञसंज्ञिका)
८ उस्सणहसण्हिया	-	१ सण्हसण्हिया (संज्ञसंज्ञिका)
८ सण्हसण्हिया	-	१ ऊर्ध्वरेणु
८ ऊर्ध्वरेणु	-	१ त्रसरेणु
८ त्रसरेणु	-	१ रथरेणु
८ रथरेणु	-	१ देवकुरु के मनुष्य का बालाग्र
८ देवकुरु के मनुष्य का बालाग्र	-	१ हरिवर्ष के मनुष्य का बालाग्र
८ हरिवर्ष के मनुष्य का बालाग्र	-	१ हैमवंत के मनुष्य का बालग्र
८ हैमवंत के मनुष्य का बालाग्र	-	१ विदेहक्षेत्रज मनुष्य का बालाग्र
८ विदेहक्षेत्रज मनुष्य का बालाग्र	-	१ भरतक्षेत्रज मनुष्य का बालाग्र
८ भरतक्षेत्रज मनुष्य का बालाग्र	-	१ लिक्षा (लीख)
८ लीखा	-	१ यूका (जूँ)
८ यूका	-	१ यवमध्य
८ यवमध्य	-	१ उत्सेधांगुल
६ उत्सेधांगुल	-	१ पाद
२ पाद	-	१ वितस्ति
२ वितस्ति	-	१ रत्नि
२ रत्नि	-	१ कुक्षि (दि. परं. किष्कु)
२ कुक्षि (किष्कु)	-	१ दण्ड (धनुष)
२००० धनुष	-	१ गव्यूति (गाउ)
४ गव्यूति (गाउ)	-	१ योजन

उपर्युक्त माप-वर्णन उत्सेधांगुल से है। उत्सेधांगुल से प्रमाणांगुल पाँच सौ गुणा होता है। एक उत्सेधांगुल लम्बी एक प्रदेश की श्रेणी (पंक्ति) को सूच्यंगुल कहते हैं। सूच्यंगुल के वर्ग को प्रतरांगुल कहते हैं और सूच्यंगुल के घन को घनांगुल कहते हैं। असंख्यात कोडाकोडी घनांगुल गुणित योजनों की पंक्ति को श्रेणी या जगच्छ्रेणी के घन को लोक या घनलोक कहते हैं। इनमें से जगच्छ्रेणी के सातवें भाग-प्रमाण क्षेत्र को राजलोक (रज्जु) कहते हैं। लोकाकाश का घनफल ३४३ रज्जु प्रमाण हैं।

समय	-काल का सूक्ष्मतम अंश	३० मुहूर्त	- १ अहोरात्र	८४ लाख त्रुटित	- १ अडडांग
जघन्य युक्त असंख्यात समय	-१ आवलिका	३० अहोरात्र	- १ मास	८४ लाख अडडांग	- १ अडड
४४४६ $^{२}/_{३}$ $^{४}/_{७}$ $^{५}/_{७}$ $^{८}/_{३}$ आवलिका	-१ प्राण	१२ मास	- १ वर्ष	८४ लाख अडड	- १ अववांग
७ प्राण	-१ स्तोक	८४ लाख वर्ष	- १ पूर्वांग	८४ लाख अववांग	- १ अवव
७ स्तोक	-१ लव	८४ लाख पूर्वांग	- १ पूर्व	८४ लाख अवव	- १ हूहूकांग
३८ $^{१}/_{२}$ लव	-१ घड़ी	८४ लाख पूर्व	- १ त्रुटितांग	८४ लाख हूहूकांग	- १ हूहूक
२ घड़ी	-१ मुहूर्त (४८मिनिट)	८४ लाख त्रुटितांग	- १ त्रुटित	८४ लाख हूहूक	- १ उत्पलांग
				८४ लाख उत्पलांग	- १ उत्पल

इसी प्रकार आगे पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अर्थनिपुरांग, अर्थनिपुर, अयुतांग, अयुत, प्रयुतांग, प्रयुत, नयुतांग, नयुत, चुलिकांग, चुलिका, शिर्षप्रेहेलिकांग, शिर्षप्रेहेलिका, को उत्तरोत्तर ८४ लाख से गुणित जानना चाहिए। यह कालमान श्वेतांबरो की मान्यतानुसार है।

दिगम्बर मान्यतानुसार उपर्युक्त कालमाप का वर्णन इस प्रकार है....

समय	-	काल का सबसे छोटा अविभागी अंश	२ पक्ष	-	१ मास	८४ लाख पर्व	-	१ नयुतांग
असंख्यात समय	-	१ आवली	२ मास	-	१ ऋतु	८४ लाख नयुतांग	-	१ नयुत
संख्यात आवली	-	१ प्राण (श्वासोच्छ्वास)	३ ऋतु	-	१ अयन	८४ लाख नयुत	-	१ कुमुदांग
७ प्राण	-	१ स्तोक	२ अयन	-	१ वर्ष	८४ लाख कुमुदांग	-	१ कुमुद
७ स्तोक	-	१ लव	८४ लाख वर्ष	-	१ पूर्वांग	८४ लाख कुमुद	-	१ पद्मांग
७७ लव	-	१ मुहूर्त	८४ लाख पूर्वांग	-	१ पूर्व	८४ लाख पद्मांग	-	१ पद्म
३० मुहूर्त	-	१ अहोरात्र	८४ लाख पूर्व	-	१ पर्वांग	८४ लाख पद्म	-	१ नलिनांग
१५ अहोरात्र	-	१ पक्ष	८४ लाख पर्वांग	-	१ पर्व	८४ लाख नलिनांग	-	१ नलिन

इसी प्रकार आगे कमलांग-कमल, तुट्यांग-तुट्य, अटटांग-अटट, अममांग-अमम, हूहूअंग-हूहू, लतांग-लता, महालतांग-महालता, शिर:प्रकम्पित, हस्तप्रहेलित और अचलात्म को उत्तरोत्तर ८४ लाख गुणित जानना चाहिए। ये सभी संख्याएँ संख्यात गणना के ही भीतर हैं। पल्योपम और सागरोपम आदि असंख्यात गणना के भीतर हैं। इन सबसे ऊपर अन्त विहीन जो राशि है, वह अनंत कहलाती है।

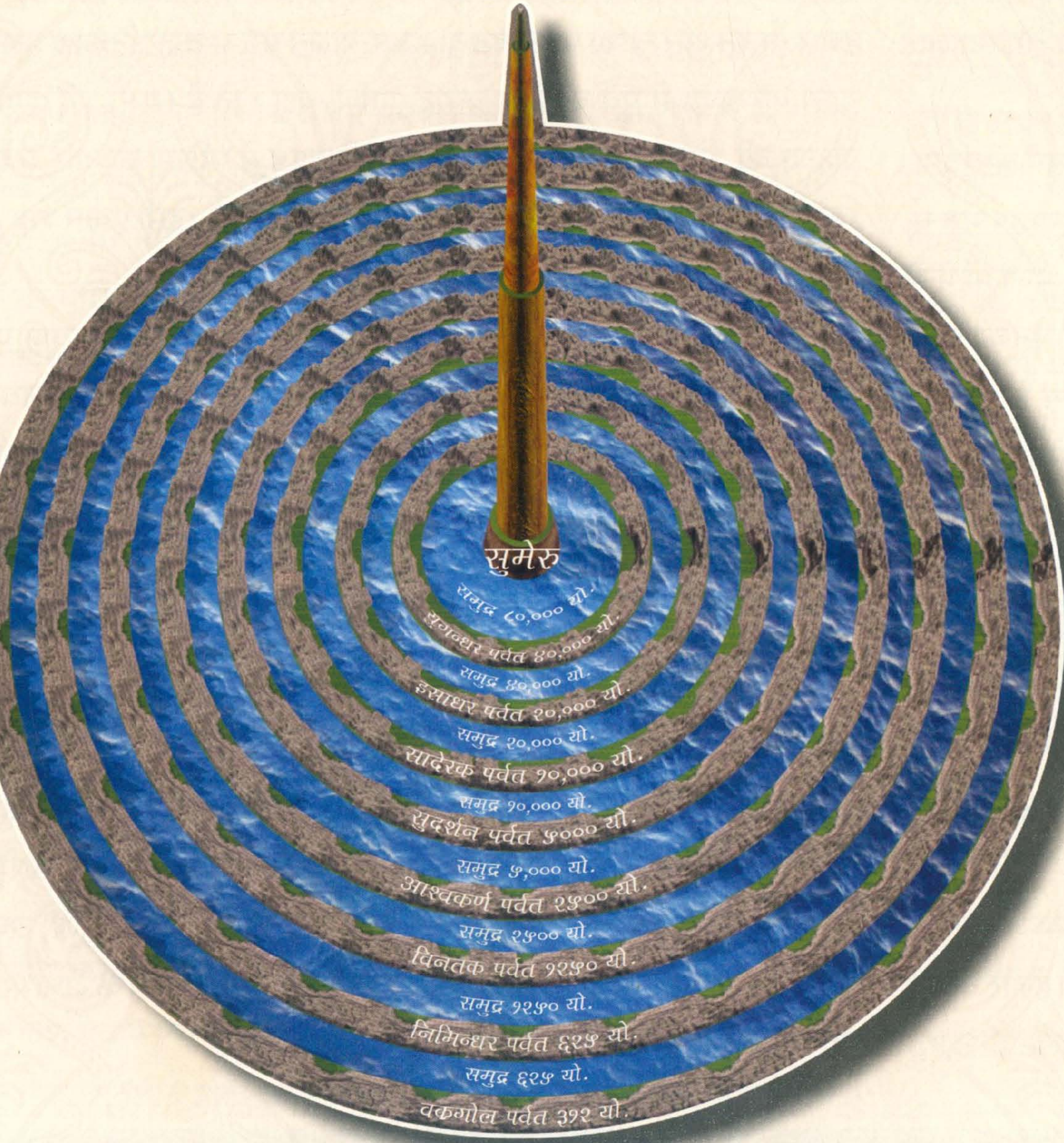

← ३,२०,००० योजन प्रमाण भूमण्डल →

बौद्धमतानुसार लोक-वर्णन

४. बौद्ध मतानुसार लोक-वर्णन

1 - लोक रचना

आचार्य वसुबन्धु ने अपने अभिधर्मकोश में लोक रचना इस प्रकार बतलाई है :-

लोक के अधोभाग में सोलह लाख योजन ऊँचा, अपरिमित वायु मण्डल है[१]। उसके ऊपर ११ लाख बीस हजार योजन ऊँचा जल मण्डल है। उसमें ३ लाख बीस हजार योजन कंचनमय भूमण्डल है[२]। जल मण्डल और कंचन मण्डल का विस्तार १२ लाख, ३ हजार, चार सौ पचास योजन तथा परिधि छत्तीस लाख, दस हजार, तीन सौ पचास योजन प्रमाण है[३]।

कांचनमय भूमण्डल के मध्य में मेरुपर्वत है। यह अस्सी हजार योजन नीचे जल में डूबा हुआ है तथा इतना ही ऊपर निकला हुआ है[४]। इससे आगे अस्सी हजार योजन विस्तृत और दो लाख चालीस हजार योजन प्रमाण परिधि से संयुक्त प्रथम सीता (समुद्र) है। जो मेरु को घेर कर अवस्थित है। इससे आगे चालीस हजार योजन विस्तृत युगन्धर पर्वत वलयाकार से स्थित है। इसके आगे भी इसी प्रकार से एक-एक सीता को अन्तरित करके आधे-आधे विस्तार से संयुक्त क्रमशः युगन्धर, ईशाधर, खदीरक, सुदर्शन, अश्वकर्ण, विनतक और निमिन्धर पर्वत हैं। सीताओं का विस्तार भी उत्तरोत्तर आधा-आधा

---

१. अभिधर्मकोश ३, ४५। २. अभिधर्मकोश ३, ४६।

३. अधिधर्मकोश, ३, ४७-४८। ४. अभिधर्मकोश ३, ५०।

होता गया है[५]। उक्त पर्वतों में से मेरु चतुर्रत्नमय और शेष सात पर्वत स्वर्णमय है। सबसे बाहर अवस्थित सीता (महासमुद्र) का विस्तार तीन लाख बाईस हजार योजन प्रमाण है। अन्त में लोहमय चक्रवाल पर्वत स्थित है।

निमिन्धर और चक्रवाल पर्वतों के मध्य में जो समुद्र स्थित है उसमें जम्बूद्वीप, पूर्वविदेह, अवरगोदानीय और उत्तरकुरु ये चार द्वीप हैं। इनमें जम्बूद्वीप मेरु के दक्षिण भाग में है, उसका आकार शकट के समान है। उसकी तीन भुजाओं में से दो भुजाएँ दो-दो हजार योजन और एक भुजा तीन हजार, पचास योजन की है।

मेरु के पूर्व भाग में अर्द्ध-चन्द्राकार पूर्वविदेह नाम का द्वीप है। इसकी भुजाओं का प्रमाण जम्बूद्वीप की तीनों भुजाओं के समान है[७]। मेरु के पश्चिम भाग में मण्डल-भार अवरगोदानीय द्वीप है। इसका विस्तार अढ़ाई हजार योजन और परिधि साढ़े सात हजार योजन प्रमाण है[८]। मेरु के उत्तर भाग में सम चतुष्कोण उत्तरकुरुद्वीप है। इसकी एक-एक भुजा दो-दो हजार योजन की है। इनमें से पूर्वविदेह के समीप में देह-विदेह, उत्तरकुरु के समीप में कुरु-गौरव, जम्बूद्वीप के समीप में चामर, अवर-चामर तथा गोदानीय द्वीप के समीप में शाटा और उत्तरमन्त्री नामक अन्तर्द्वीप अवस्थित है। इनमें से चमरद्वीप में राक्षसों का और शेष द्वीप में मनुष्य का निवास है[९]।

मेरुपर्वत के चार परिखण्ड (विभाग) हैं। प्रथम परिखण्ड शीता जल से दस हजार योजन ऊपर तक माना गया है। इसके आगे क्रमशः दस-दस हजार योजन ऊपर जाकर दूसरा, तीसरा और चौथा परिखण्ड है। इनमें से पहला परिखण्ड सोलह हजार योजन दूसरा, परिखण्ड आठ हजार योजन, तीसरा परिखण्ड चार हजार योजन और चौथा परिखण्ड दो हजार योजन मेरु से बाहर निकला हुआ है। पहले परिखण्ड में पूर्व की ओर करोट-पाणि-यक्ष रहते हैं। दूसरे परिखण्ड में दक्षिण की ओर मालाधर रहते हैं। तीसरे परिखण्ड में पश्चिम की ओर सदामद रहते हैं और चोथे परिखण्ड में चातुर्माहाराजिक देव रहते हैं। इसी प्रकार शेष सात पर्वतों पर भी उक्त देवों का निवास है[१०]।

जम्बूद्वीप में उत्तर की ओर बने कीटादि और उनके आगे हिमवान पर्वत अवस्थित हैं। हिमवान पर्वत से आगे उत्तर में पाँच सौ योजन विस्तृत अनवतप्त नाम का अगाध सरोवर है। इससे गंगा, सिन्धु, वक्षु और सीता नाम की चार नदियाँ निकली हैं। इस सरोवर के समीप जम्बूवृक्ष है, जिससे इस द्वीप का नाम जम्बूद्वीप पड़ा है। अनवतप्त-सरोवर के आगे गन्धमादक नाम का पर्वत है[११]।

2 - नरकलोक

जम्बूद्वीप के नीचे बीस हजार योजन विस्तृत अवीचि नाम का नरक है। उसके ऊपर क्रमशः प्रतापन, तपन, महारौरव, रौरव, संघात, कालसूत्र और संजीव नाम के सात नरक और हैं[१२]। इन नरकों के चारों पार्श्वभागों में कुकूल, कुणप, क्षुर्मार्गादिक, (असिपत्रवन, श्यामसबलस्वस्थान, अयः शाल्मलीवन) और खारोदक वाली वैतरणी नदी ये चार उत्सद है। अर्बुद, निरर्बुद, अटट, उहहब, हुहूब, उत्पल, पद्म और महापद्म नाम वाले ये आठ शीत नरक और हैं, जो जम्बूद्वीप के अधोभाग में महानरकों के धरातल में अवस्थित हैं[१३]।

५. अभिधर्मकोश ३, ५१-५२। ६. अभिधर्मकोश ३, ५३। ७. अभिधर्मकोश ३, ५४। ८. अभिधर्मकोश ३, ५५। ९. अभिधर्मकोश ३, ५६। १०. अभिधर्मकोश ३, ६३-६४। ११. अभिधर्मकोश ३, ५७। १२. अभिधर्मकोश ३, ५८। १३. अभिधर्मकोश ३, ५९।

3 - ज्योतिर्लोक

मेरुपर्वत के अर्द्ध भाग अर्थात् भूमि से चालीस हजार योजन ऊपर चन्द्र और सूर्य परिभ्रमण करते हैं। चन्द्र मण्डल का प्रमाण पचास योजन और सूर्य मण्डल का प्रमाण इक्यावन योजन है। जिस समय जम्बूद्वीप में मध्याह्न होता है उस समय उत्तरकुरु में अर्ध रात्रि, पूर्वविदेह में अस्तगमन और अवरगोदानीय में सूर्योदय होता है[१४]। भाद्र मास के शुक्ल पक्ष की नवमी से उसके हानि का आरम्भ होता है। रात्रि की वृद्धि, दिन की हानि और रात्रि की हानि, दिन की वृद्धि होती है। सूर्य के दक्षिणायन में रात्रि की वृद्धि और उत्तरायण में दिन की वृद्धि होती है[१५]।

4 - स्वर्गलोक

मेरु के शिखर पर त्रयस्त्रिंश (स्वर्ग) लोक है। इसका विस्तार अस्सी हजार योजन है। यहाँ पर त्रायस्त्रिंश देव रहते हैं। इसके चारों विदिशाओं में वज्रपाणि देवों का निवास है[१६]। त्रयस्त्रिंश लोक के मध्य में सुदर्शन नाम का नगर है, जो सुवर्णमय है। इसका एक-एक भाग ढ़ाई हजार योजन विस्तृत है। उसके मध्य-भाग में इन्द्र का अढ़ाई सौ योजन विस्तृत वैजयन्त नामक प्रासाद है। नगर के बाहरी भाग में चारों ओर चैत्ररथ, पारुष्य, मिश्र और नन्दन ये चार वन हैं[१७]। इनके चारों ओर बीस हजार योजन के अन्तर से देवों के क्रीडा स्थल हैं[१८]।

त्रयस्त्रिंश लोक के ऊपर विमानों में याम, तुषित, निर्माणरति और परनिर्मितवशवर्ती देव रहते हैं। कामधातुगत देवों में से चातुर्माहाराजिक और त्रायस्त्रिंश देव मनुष्य के समान काम सेवन करते हैं। याम, तुषित, निर्माणरति, परनिर्मितवशवर्ती देव क्रमशः आलिंगन, पाणिसंयोग, हसित और अवलोकन से ही तृप्ति को प्राप्त होते हैं[१९]।

कामधातु के ऊपर सत्तर स्थानों से संयुक्त रूपधातु हैं। वे सत्तर स्थान इस प्रकार हैं। प्रथम स्थान में ब्रह्मकायिक, ब्रह्मपुरोहित और महाब्रह्म लोक हैं। द्वितीय स्थान में परिताभ, अप्रभाणाभ और आभस्वर लोक हैं। तृतीय स्थान में परित्तशुभ, अप्रमाणशुभ और शुभकृत्स्न लोक हैं। चतुर्थस्थान में अनभ्रक, पुण्यप्रसव, बृहद्फल, पंचशुद्धावासिक, अवृह, अतप, सुदृश-सुदर्शन और अकनिष्ठ नाम वाले आठ लोक हैं। ये सभी देवलोक क्रमशः ऊपर-ऊपर अवस्थित हैं। इनमें रहने वाले देव ऋद्धि-बल अथवा अन्य देव की सहायता से ही अपने से ऊपर के देवलोक को देख सकते हैं[२०]।

जम्बूद्वीपस्थ मनुष्यों का शरीर साढे तीन या चार हाथ, पूर्व विदेहवासियों का ७-८ हाथ, गोदानीय द्वीपवासियों का १४-१६ हाथ और उत्तरकुरुस्थ मनुष्यों का शरीर २८-३२ हाथ ऊँचा होता है। कामधातुवासी देवों में चातुर्महाराजिक देवों का शरीर १/४ कोश और त्रायस्त्रिंशो का १/२ कोश, यामों का ३/४ कोश, तुषितो का १ कोश, निर्माणरति देवों का १ १/४ कोश और परनिर्मितवशवर्ती देवों का शरीर १ १/२ कोश ऊँचा है। आगे ब्रह्मपुरोहित, महाब्रह्म, परिताभ, अप्रभाणाभ, आभस्वर, परित्तशुभ, अप्रमाणशुभ और शुभकृत्स्न देवों का शरीर क्रमशः १, १ १/२, २, ४, ८, १६, ३२ और ६४ योजन प्रमाण ऊँचा है। अनभ्र देवों का शरीर १२५ योजन ऊँचा है, आगे पुण्यप्रसव आदि देवों के शरीर उत्तरोत्तर दुगुनी-दुगुनी ऊँचाई वाले हैं[२१]।

१४. अभिधर्मकोश ३, ६० । १५. अभिधर्मकोश ३, ६१ । १६. अभिधर्मकोश ३, ६५ । १७. अभिधर्मकोश ३, ६६-६७ । १८. अभिधर्मकोश ३, ६८ । १९. अभिधर्मकोश ३, ३९ । २०. अभिधर्मकोश ३, ७१-७२ । २१. अभिधर्मकोश ३, ७५-७७ ।

बौद्ध मतानुसार संपूर्ण विश्व दर्शन...

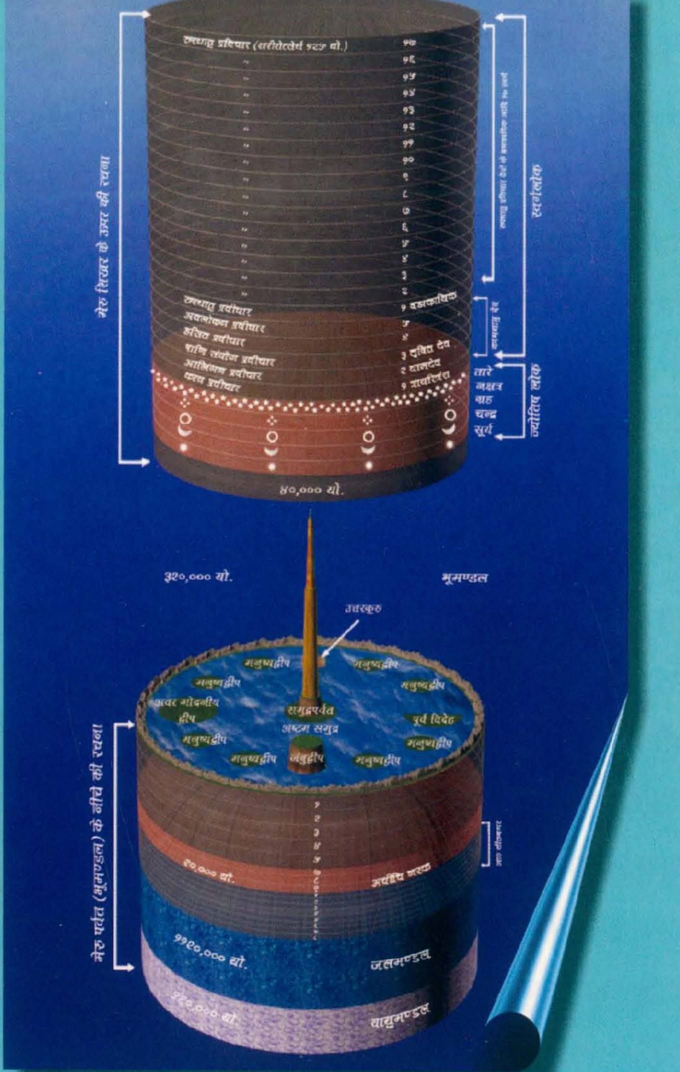

२२. अभिधर्मकोश ३, ६५-८७। २३. अभिधर्मकोश ३, २२, २९।
२४. अभिधर्मकोश ३, ९०। २५. नरक प्रेत क्षिर्यच्छो मानुषाः षड् दिवोकसः (अभिधर्म कोश - ३, १)

5 - क्षेत्र माप बौद्ध ग्रन्थों में योजन का प्रमाण इस प्रकार बतलाया गया है[22]

७ परमाणु	-१ अणु	७ मेषरज	- १ गोरज	२४ अंगुलीपर्व	-१ हस्त
७ अणु	- १ लौहरज	७ गोरज	-१ छिद्ररज	४ हस्त	- १ धनुष
७ लौहरज	- १ जलरज	७ छिद्ररज	-१ लिक्षा (लीख)	५०० धनुष	- १ कोश
७ जलरज	-१ शशरज	७ लिक्षा	-१ यव	८ कोश	- १ योजन
७ शशरज	- १ मेषरज	७ यव	- १ अंगुलीपर्व		

6 - काल माप बौद्ध ग्रन्थों में काल का प्रमाण इस प्रकार बतलाया गया है[23]

१२० क्षण	- १ तत्क्षण	६० मुहूर्त	- १ अहोरात्रि
६० तत्क्षण	- १ लव	३० अहोरात्र	- १ मास
३० लव	- १ मुहूर्त	१२ मास	- १ संवत्सर

कल्पों के अन्तरकल्प, संवर्तकल्प और महाकल्प आदि अनेक भेद बतलाये गये है।[24]

7 - तुलना और समीक्षा

बौद्धों ने दस लोक माने हैं - नरकलोक, प्रेतलोक, तिर्यक्लोक, मनुष्यलोक और ६ देवलोक।[25] छह देवलोकों के नाम इस प्रकार हैं - चातुर्महाराजिक, त्रयस्त्रिंश, याम, तुषित, निर्माणरति और परनिर्मितवशवर्ती। प्रेतों को जैनों ने देवयौनिक माना है। अतः एव इसे उक्त ६ देवलोकों में अन्तर्गत करने पर नरक, तिर्यक्, मनुष्य और देव, ये चार लोक ही सिद्ध होते हैं, जो कि जैनाभिमत चारों गतियों का स्मरण कराता हैं।

नरकादिस्वनामोक्ता गतयः पंच तेषु ताः (अभिधर्मकोश ३, ४)

ऊपर बतलाये देवों में से चातुर्महाराजिक देव-इन्द्र का, तुषित-लौकान्तिक देवों का, त्रयस्त्रिंश देवों का, तथा शेष भेद व्यन्तर-देवों का स्पष्ट रूप से स्मरण कराते है।

नारका उपपादुकाः अन्तरा भव देवश्च। (अभिधर्मकोश ३, ४)

बौद्धों ने भी जैनो के समान नारकी जीवों का उत्पन्न होने के साथ ही ऊर्ध्वपाद और अधोमुख होकर नरक-भूमि में गिरना माना है। यथा :-

एते पतंति निरय उद्धपादा अवंसिरा। (सुत्तनिपात)

ऊर्ध्वपादास्तु नारकाः। (अभिधर्मकोश ३, १५)

५. वैदिक धर्मानुसार लोक-वर्णन

1 - मर्त्य लोक

जिस प्रकार जैन ग्रन्थों में आगे भूगोल का वर्णन किया गया है लगभग उसी प्रकार से हिन्दू पुराणों में भी भूगोल का वर्णन पाया जाता है। विष्णुपुराण के द्वितीयांश के द्वितीयाध्याय में बतलाया गया है कि इस पृथ्वी पर १ जम्बू, २ प्लक्ष, ३ शाल्मल, ४ कुश, ५ क्रौंच, ६ शाक और ७ पुष्कर नाम वाले सात द्वीप हैं। ये सभी चूड़ी के समान गोलाकार और क्रमशः १ लवणोद, २ इक्षुरस, ३ मदिरारस, ४ घृतरस, ५ दधिरस, ६ दूधरस और, ७ मधुररस वाले सात समुद्रों से वेष्टित हैं। इन सबके मध्यभाग में जम्बूद्वीप है। इसका विस्तार एक लाख योजन है। उसके मध्य भाग में ८४ हजार योजन ऊँचा स्वर्णमय मेरुपर्वत है। इसकी नींव पृथ्वी के भीतर १६ हजार योजन है। मेरु का विस्तार मूल में १६ हजार योजन है और फिर क्रमशः बढ़कर शिखर पर ३२ हजार योजन हो जाता है[1]।

इस जम्बूद्वीप में मेरुपर्वत के दक्षिणभाग में हिमवान, हेमकूट और निषध तथा उत्तर भाग में नील, श्वेत और श्रृंगी ये छः वर्ष-पर्वत है। इन से जम्बूद्वीप के सात भाग हो जाते हैं। मेरु के दक्षिणवर्ती निषध और उत्तरवर्ती नील पर्वत, पूर्व-पश्चिम लवणसमुद्र तक १ लाख लम्बे, दो-दो हजार योजन ऊँचे और इतने ही चौड़े हैं। इनमें परवर्ती हेमकूट और श्वेत-पर्वत लवण समुद्र तक पूर्व-पश्चिम में नब्बे (९०) हजार योजन लम्बे, दो हजार योजन ऊँचे और इतने ही विस्तार वाले हैं। इनसे परवर्ती हिमवान और श्रृंगी-पर्वत पूर्व-पश्चिम में अस्सी (८०) हजार योजन लम्बे, दो हजार योजन ऊँचे और इतने ही विस्तार वाले हैं। इन पर्वतों के द्वारा जम्बूद्वीप के सात भाग हो जाते हैं। जिनके नाम दक्षिण की ओर से क्रमशः इस प्रकार हैं - १. भारतवर्ष, २. किम्पुरुष, ३. हरिवर्ष, ४. इलावृत, ५. रम्यक्, ६. हिरण्य, और ७. उत्तरकुरु[2]। इनमें इलावृत को छोड़कर शेष ६ का विस्तार उत्तर-दक्षिण में नौ-नौ हजार योजन है। इलावृत-वर्ष मेरु के पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर इन चारों ही दिशाओं में नौ-नौ हजार योजन विस्तृत है। इस प्रकार सर्व पर्वतों व वर्षों के विस्तार को मिलाने पर जम्बूद्वीप का विस्तार १ लाख योजन प्रमाण हो जाता है।

मेरुपर्वत के दोनों और पूर्व-पश्चिम में इलावृत वर्ष की सीमा स्वरूप माल्यवान और गन्धमादन पर्वत हैं, जो नील और निषध पर्वत तक विस्तृत हैं। इनके कारण दोनों ओर दो विभाग और हैं, जिनके नाम भद्राश्व और केतुमाल हैं। इस प्रकार उपर्युक्त सात वर्षों को और मिला देने से जम्बूद्वीप सम्बन्धी सर्व वर्षों (क्षेत्रों) की संख्या नौ (९) हो जाती है[3]।

१. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, द्वितीय-अध्याय, श्लोक - ५-६, मार्कण्डेय पुराण अ. ५४ श्लोक - ५-७

२. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, द्वितीय अध्याय, श्लोक - १०-१५ मार्कण्डेय पुराण, अ. ५४, श्लोक - ८-१४

३. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, द्वितीय अध्याय, श्लोक - १६ मार्कण्डेय पुराण, अ. ५४, श्लोक - १४-१९

जम्बूद्वीप
उत्तरकुरु
हिरण्यमय
रम्यक
इलावृत
माल्यवान पर्वत
श्रृंगी पर्वत
वट वृक्ष
कदंब वृक्ष
सुपार्श्व पर्वत
मन्दर पर्वत
श्वेत पर्वत
सुमेरु
गंधमादन पर्वत
हरिवर्ष
विपुल पर्वत
जम्बू वृक्ष
नील पर्वत
पीपल वृक्ष
गंधमादन पर्वत
किंपुरुष
इलावृत
भारत
निषध पर्वत
हेमकूट पर्वत
हिमवान पर्वत

जम्बूद्वीप

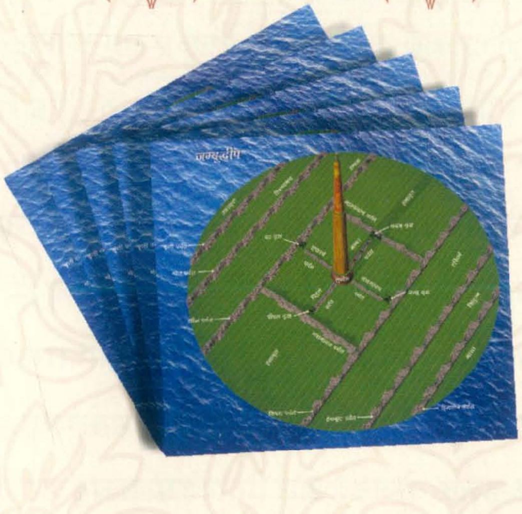

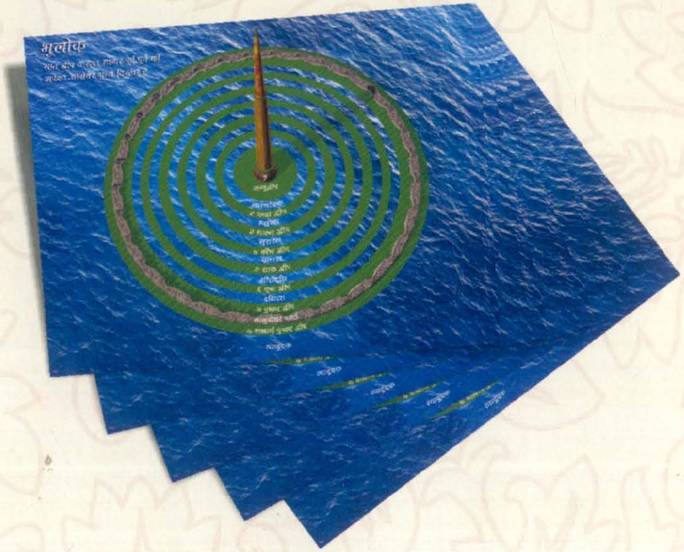

भूलोक

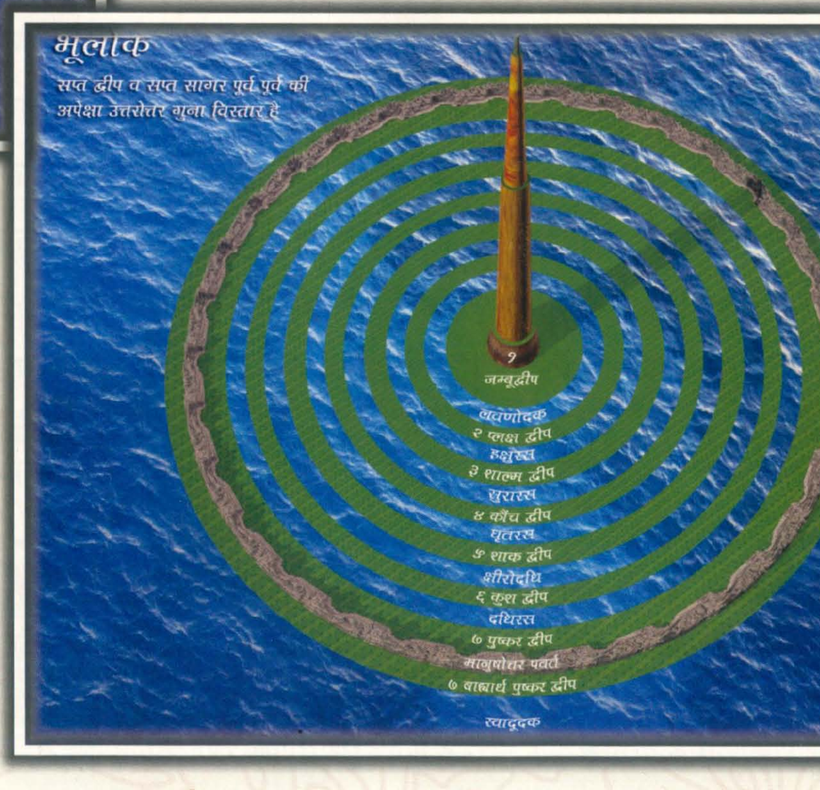
भूलोक
सप्त द्वीप व सप्त सागर पूर्व पूर्व की
अपेक्षा उत्तरोत्तर गुना विस्तार है
१
जम्बूद्वीप
लवणोदक
२ प्लक्ष द्वीप
इक्षुरस
३ शाल्म द्वीप
सुरारस
४ क्रौंच द्वीप
घृतरस
५ शाक द्वीप
क्षीरोदधि
६ कुश द्वीप
दधिरस
७ पुष्कर द्वीप
मानुषोत्तर पर्वत
७ बाह्यार्ध पुष्कर द्वीप
स्वादूदक

मेरु के चारों ओर पूर्वादिक दिशाओं में क्रमशः मन्दर, गन्धमादन, विपुल और सुपार्श्व नाम वाले चार पर्वत हैं। इनके ऊपर क्रमशः १,१०० योजन ऊँचे कदम्ब, जम्बू, पीपल और वट के वृक्ष हैं। इनमें से जम्बूवृक्ष के नाम से यह जम्बूद्वीप कहलाता है[४]।

जम्बूद्वीपस्थ भारतवर्ष में महेन्द्र, मलय, सह्य, सूक्तिमान्, ऋक्ष, विन्ध्य, पारियात्र ये कुल सात पर्वत हैं।[५] इनमें से हिमवान से शत्तद्रु और चन्द्रभागा आदि, पारियात्र से वेद और स्मृति आदि, विन्ध्य से नर्मदा और सुरसा आदि, ऋक्ष से तापी, पयोष्णी और निर्विन्ध्यादि, सह्य से गोदावरी, भीमरथी और कृष्णवेणी आदि, मलय से कृतमाला और ताम्रपर्णी आदि, महेन्द्र से त्रिसामा और आर्यकुल्या आदि, तथा सूक्तिमान् पर्वत से ऋशिकुल्या और कुमारी आदि नदियाँ निकली हैं।[६] इन नदियों के किनारों पर मध्यप्रदेश को आदि लेकर कुरु और पांचाल, पूर्व देश को आदि लेकर कामरूप, दक्षिण को आदि लेकर पुण्ड्र, कलिंग और मगध, पश्चिम को आदि लेकर सौराष्ट्र, सूर, आभीर और अर्बुद तथा उत्तर देश को आदि लेकर मालव, कोशभ, सौवीर, सैन्धव, हूण, शाल्व और पारसीकों को आदि लेकर भाद्र, आराम और अम्बष्ठ देशवासी रहते हैं।[७]

उपर्युक्त सप्त क्षेत्रों में से केवल भारतवर्ष में ही कृत, त्रेता, द्वापर, और कलि नामक चार युगों से काल परिवर्तन होता है। किम्पुरुषादिक शेष क्षेत्रों में काल परिवर्तन नहीं होता है। उन आठ क्षेत्रों में रहने वाली प्रजा को शोक, परिश्रम, उद्वेग और क्षुधा आदि की बाधा नहीं होती है। वहाँ के लोग सदा स्वस्थ एवं आतंक और दुःख से विमुक्त रहते हैं। वे सदा जरा और मृत्यु से निर्भय रहकर आनन्द का उपभोग करते हैं। इसलिए वहाँ पर भोगभूमि कही गयी है। वहाँ पर पुण्य-पाप, और ऊँच-नीच आदि का भी भेद नहीं है। उन क्षेत्रों में स्वर्ग-मुक्ति की प्राप्ति के कारणभूत व्रत-तपश्चरणादि के द्वारा स्वर्ग-मोक्षादिक की प्राप्ति संभव है। इसलिए यह सर्व क्षेत्रों में श्रेष्ठ माना गया है। यहाँ के लोग असि, मषि, आदि कर्मों के द्वारा अपनी आजीविका का उपार्जन करते हैं। इसलिए यहाँ की भूमि को कर्मभूमि कहा गया है।[८]

जम्बूद्वीप को सर्व ओर से घेरकर लवणसमुद्र अवस्थित है। यह १ लाख योजन विस्तृत है।[९] लवणसमुद्र को घेरकर दो लाख योजन विस्तार वाला प्लक्षद्वीप है। इसके भीतर गोमेध, चन्द्र, नारद, दुन्दुभि, सोमक और सुमना नामक ६ पर्वत हैं। इनसे विभाजित होकर शान्तद्वय, शिशिर, सुखोदय, आनन्द, शिव, क्षेमक और ध्रुव नामक सात वर्ष (क्षेत्र) अवस्थित हैं। इन वर्षों और पर्वतों के ऊपर देव और गन्धर्व रहते हैं, वे आधि-व्याधि से रहित और अतिशय पुण्यवान हैं। वहाँ युगों का परिवर्तन नहीं है। केवल सदा काल त्रेतायुग जैसा समय रहता है। उनमें चातुर्वर्ण-व्यवस्था है और वे अहिंसा-सत्यादि पाँच धर्मों का पालन करते हैं। इस द्वीप में १ प्लक्ष वृक्ष है, इस कारण यह द्वीप प्लक्ष नाम से प्रसिद्ध है।[१०]

४. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, द्वितीय अ. १७-१९ / मार्कण्डेय पुराण, अ. ५४, श्लोक - ६

५. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, द्वितीय अ. १६ / मार्कण्डेय पुराण, अ. ५४, श्लोक - १४-१९

६. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, द्वितिय अ. श्लोक १६ / मार्कण्डेय पुराण, अ. ४५, श्लोक - १४-१९, १०-१४

७. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, द्वितिय अ. श्लोक १५-१७

८. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, तृतीय अ. श्लोक १९-२२

९. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, तृतीय अ. श्लोक २८

१०. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, चतुर्थ अ. श्लोक १-१८

प्लक्षद्वीप को चारों ओर से घेरकर इक्षु रसोद समुद्र अवस्थित है, जो प्लक्षद्वीप के समान ही विस्तार वाला है। इसे चारों ओर से घेरकर चार लाख योजन विस्तार वाला शाल्मलद्वीप है। इसी क्रम से आगे सुरोद समुद्र, कुशद्वीप, घृतोद समुद्र, क्रौंचद्वीप, दधिरसोद, शाकद्वीप और क्षीरसमुद्र अवस्थित हैं। ये सभी द्वीप अपने पूर्ववर्ती द्वीप की अपेक्षा दुगुने-दुगुने विस्तार वाले हैं और समुद्रों का विस्तार अपने-अपने द्वीप के समान है। इन द्वीपों की रचना प्लक्षद्वीप के समान है।[११]

क्षीरसमुद्र को घेरकर सातवाँ पुष्करद्वीप अवस्थित है। इसके ठीक मध्यभाग में गोलाकार वाला मानुषोत्तर पर्वत हैं। इसके बाहरी भाग का नाम महावीर वर्ष और भीतरी भाग का नाम धातकी वर्ष है। इस द्वीप में रहनेवाले लोग भी रोग-शोक, एवं राग-द्वेष से रहित होते हैं। वहाँ न ऊँच-नीच का भेद है, और न वर्णाश्रम व्यवस्था है। इस पुष्कर द्वीप में नदियाँ और पर्वत भी नहीं हैं।[१२]

इस द्वीप को सर्व ओर से घेरकर मधुरोदक समुद्र अवस्थित है। इससे आगे प्राणियों का निवास नहीं है। मधुरोदक समुद्र से आगे उससे दुगुने विस्तार वाली स्वर्णमयी भूमि है। उसके आगे १० हजार योजन विस्तृत और इतना ही ऊँचा लोकालोक पर्वत है। उसको चारों ओर से विष्टित तमस्तम स्थित है। इस अण्डकटाह के साथ उपर्युक्त द्वीप-समुद्रों वाला यह समस्त भूमण्डल ५० करोड़ योजन विस्तार वाला है और इसकी ऊँचाई ७० हजार योजन है।[१३]

इस भूमण्डल के नीचे दस-दस हजार योजन के ७ पाताल हैं। जिनके नाम इस प्रकार हैं-अतल, वितल, नितल, गभस्तिमत, महातल, सूतल, और पाताल। ये क्रमशः शुक्ल, कृष्ण, अरुण, पीत, शर्करा, शैल और काञ्चन स्वरूप है। यहाँ उत्तम भवनों से युक्त भूमियाँ हैं और यहाँ दानव, दैत्य, यक्ष, एवं नाग आदि निवास करते है।[१४]

पातालों के नीचे विष्णु भगवान का शेष नामक तामस शरीर स्थित है जो अनन्त कहलाता है। यह शरीर सहस्त्रफणों से संयुक्त होकर समस्त भूमण्डल को धारण करके पाताल मूल में अवस्थित है। कल्पान्त के समय इसके मुख से निकली हुई संकर्षात्मक रुद्र विषाग्नि शिखा तीनों लोकों का भक्षण करती है।[१५]

2 - नरक-लोक

पृथ्वी और जल के नीचे रौरव, सूकर, रौध, ताल, विशासन, महाज्वाल, तप्तकुम्भ, लवण, विलोहित, रुधिर, वैतरणी, कृमीश, कृमिभोजन, असिपत्रवन, कृष्ण, अलाभक्ष, दारुण, पूयवह, वन्हिज्वाल, अधःशिरा, सैदेस, कालसूत्र, तम, आवीचि, श्वभोजन, अप्रतिष्ण और अग्रवि इत्यादि नाम वाले अनेक महान भयानक नरक हैं। इनमें पापी जीव मरकर जन्म लेते हैं।[१६] वे वहाँ से निकल कर क्रमशः स्थावर, कृमि, जलचर, मनुष्य और देव आदि होते हैं। जितने जीव स्वर्ग में हैं उतने ही जीव नरकों में भी रहते हैं।[१७]

११. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, चतुर्थ अध्याय, श्लोक २०-७२

१२. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, चतुर्थ अध्याय, श्लोक ७३-८०

१३. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, चतुर्थ अध्याय, श्लोक ९३-९६

१४. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, पंचम अध्याय, श्लोक २-४

१५. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, पंचम अध्याय, श्लोक १३-१५-१९-२०

१६. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, षष्ठम अध्याय, श्लोक १-६

१७. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, षष्ठम अध्याय, श्लोक ३४

3 - ज्योतिर्लोक

भूमि से १ लाख योजन दूरी पर सौर-मण्डल है। इससे १ लाख योजन ऊपर चन्द्रमण्डल, इससे १ लाख योजन ऊपर नक्षत्रमण्डल, इससे २ लाख योजन ऊपर बुध, इससे २ लाख योजन ऊपर शुक्र, इससे २ लाख योजन ऊपर मंगल, इससे २ लाख योजन ऊपर बृहस्पति, इससे २ लाख योजन ऊपर शनि, इससे १ लाख योजन ऊपर सप्तर्षिमण्डल तथा इससे १ लाख योजन ऊपर ध्रुवतारा स्थित है।[१८]

4 - महर्लोक (स्वर्गलोक)

ध्रुव से १ करोड़ योजन ऊपर जाकर महर्लोक है, यहाँ कल्प काल तक जीवित रहने वाले कल्पवासियों का निवास है। इससे २ करोड़ योजन ऊपर जनलोक है यहाँ नन्दनादि से सहित ब्रह्माजी के प्रसिद्ध पुत्र रहते हैं। इससे ८ करोड़ योजन ऊपर तपलोक है। यहाँ वैराज देव निवास करते हैं। इससे १२ करोड़ योजन ऊपर सत्यलोक है, यहाँ कभी न मरने वाले अमर (अपुनमरिक) रहते हैं। इसे ब्रह्मलोक भी कहते हैं। भूमि (भूलोक) और सूर्य के मध्य में सिद्धजनों और मुनिजनों में सेवित स्थान भुवर्लोक कहलाता है। सूर्य और ध्रुव के मध्य चौदह लाख योजन प्रमाण क्षेत्र स्वर्गलोक नाम से प्रसिद्ध है।[१९]

भूलोक, भुवर्लोक और स्वर्गलोक ये तीनों लोक कृतक, तथा जनलोक, तपलोक और सत्यलोक ये तीन लोक अकृतक है। इन दोनों लोकों के बीच मे महर्लोक है। यह कल्पांत मे जन शून्य हो जाता है, किन्तु सर्वथा नष्ट नहीं होता।[२०]

5 - तुलना और समीक्षा

विष्णुपुराण के आधार पर जो लोक स्थिति या भूगोल का वर्णन किया है उसका हम जैन सम्मत लोक के वर्णन से मिलान करते हैं तो अनेक तथ्य सामने आते हैं। जिनका दोनों मान्यताओं के नाम निर्देश के साथ यहाँ उल्लेख किया जाता है -

द्वीप

जैन मान्यता

१. द्वीप-समुद्र	असंख्यात
२. प्रथम द्वीप	जम्बूद्वीप
३. कुश द्वीप	पन्द्रहवाँ द्वीप[२१]
४. क्रौंच द्वीप	सोलहवाँ द्वीप[२२]
५. पुष्कर द्वीप	तीसरा द्वीप

वैदिक मान्यता

१. द्वीप समुद्र	७ द्वीप
२. प्रथम द्वीप	जम्बूद्वीप
३. कुश द्वीप	चौथा द्वीप
४. क्रौंच द्वीप	पाँचवा द्वीप
५. पुष्कर द्वीप	सातवाँ द्वीप

१८. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, सप्तम अध्याय, श्लोक २-९
१९. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, षष्ठम अध्याय, श्लोक १२-१८
२०. विष्णु पुराण, द्वितीयांश, षष्ठम अध्याय, श्लोक १९-२०
२१. तिलोयपण्णत्ती....।
२२. तिलोयपण्णत्ती....।

समुद्र

जैन मान्यता			वैदिक मान्यता	
१.	लवणोद	प्रथम समुद्र	१. लवणोद	प्रथम समुद्र
२.	वारुणीवर	चौथा समुद्र	२. मदिरा रस	तीसरा समुद्र
३.	क्षीरवर	पाँचवा समुद्र	३. दूध रस	छट्ठा समुद्र
४.	घृतवर	छट्ठा समुद्र	४. मधुर रस	सातवाँ समुद्र
५.	इक्षुवर	सातवाँ समुद्र	५. इक्षु रस	दूसरा समुद्र

क्षेत्र

जैन मान्यता	वैदिक मान्यता
१. भरतक्षेत्र	१. भारतवर्ष
२. हैमवंत	२. किम्पुरुष
३. हरिवर्ष	३. हरिवर्ष
४. महाविदेह	४. इलावृत
५. रम्यक्	५. रम्यक्
६. हैरण्यवंत	६. हिरण्मय
७. ऐरावत	७. उत्तरकुरु

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि जैन मान्यतानुसार उत्तरकुरु विदेह-क्षेत्र का एक भाग है। इलावृत ऐरावत का ही रूपान्तर है। हाँ, दूसरे हैमवंत क्षेत्र के स्थान पर किम्पुरुष नाम अवश्य नया है।

6 - पर्वत

जैन मान्यता	वैदिक मान्यता
१. हिमवंत	१. हिमवान्
२. महाहिमवंत	२. हेमकूट
३. निषध	३. निषध
४. नीलवंत	४. नील
५. रुक्मी	५. श्वेत
६. शिखरी	६.श्रृंगी

यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि शिखरी एवं श्रृंगी ये दोनों एकार्थक नाम हैं। पाँचवे रुक्मी पर्वत का वर्ण जैन मान्यतानुसार श्वेत ही माना गया है जो वैदिक मान्यता के श्वेत पर्वत का ही बोधक है। केवल महाहिमवंत के स्थान पर हेमकूट नाम नवीन है।

जैन और वैदिक दोनों ही मान्यताओं के अनुसार मेरुपर्वत जम्बूद्वीप के मध्य भाग में स्थित है। अन्तर केवल ऊँचाई का है। वैदिक मान्यता के अनुसार मेरु चौरासी हजार योजन ऊँचा है। जबकि जैन मान्यता इसे १ लाख योजन ऊँचा मानती है।

7 - नदियाँ

वैदिक मान्यतानुसार ऊपर जो नदियों के नाम दिये गये हैं वे प्रायः सब आधुनिक नदियों के नाम हैं। जैन मान्यतानुसार जम्बूद्वीप के सात क्षेत्रों में १४ प्रधान नदियाँ हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं - गंगा, सिन्धु, रोहिता-रोहितांसा, हरिकांता-हरिसलिला, सीता-सीतोदा, नरकांता-नारीकांता, स्वर्णकूला-रुप्यकूला, रक्ता और रक्तवती। भारतवर्ष आदि क्षेत्रों में क्रमशः उक्त दो नदियाँ बहती हैं। उनमें से पहली नदी पूर्व के समुद्र और दूसरी नदी पश्चिम के समुद्र में जाकर मिलती है। इस प्रकार दोनों ही मान्यताओं वाली नदियों के नामों में कोई समानता नहीं है।

8 - नरक-स्थिति

जैन मान्यता के समान ही वैदिक मान्यता में भी अत्यन्त दुःख भोगने वाले नारकी जीवों का अवस्थान इस धरातल के नीचे माना गया है। दोनों के कुछ नामों में समानता है, और कुछ नामों में विषमता है।

9 - ज्योतिर्लोक

जैन मान्यतानुसार समभूमितल से सूर्य-चन्द्र आदि की ऊँचाई का जो उल्लेख है उससे वैदिक मान्यता में बहुत भारी अन्तर है। जो दोनों के पूर्व वर्णनों से पाठक भली भाँति जान सकेंगे।

10 - स्वर्गलोक

दोनों ही मान्यताओं के अनुसार स्वर्गलोक की स्थिति ज्योतिर्लोक के ऊपर मानी गई है। वैदिक मान्यता में स्वर्गलोक का नाम महर्लोक दिया गया है तथा वहाँ के निवासियो को जैन मान्यता के समान कल्पवासी कहा गया है। वैदिक मान्यता में स्वर्गलोक की स्थिति सूर्य और ध्रुव के मध्य में चौदह लाख योजन प्रमाण क्षेत्र में है। जबकि जैन मान्यता से वह सुमेरु के ऊपर से लेकर असंख्यात योजन ऊपरी क्षेत्र तक बतलाई गई है।

11 - कर्मभूमि और भोगभूमि

जिस प्रकार जैनागमों में कर्मभूमि और भोगभूमि का वर्णन आया है उसी प्रकार हिन्दू पुराणों में भी मिलता है, विष्णु पुराण के द्वितीयांश के तीसरे अध्याय में कर्मभूमि का वर्णन इस प्रकार किया गया है -

उत्तरं यत्समुद्रस्यः हिमाद्रेश्च दक्षिणम्।
वर्ष तद्भारतं नाम भारती यत्र संततिः ॥१॥
नवयोजनसहस्रो विस्तारो अस्य महामुने !।
कर्मभूमिरियं स्वर्गमपवर्गञ्च गच्छताम् ॥२॥

अतः सम्प्राप्यते स्वर्गो मुक्तिमस्मात् प्रायन्ति वै।
तिर्यक्त्वं नरकं चापि यान्त्यतः पुरुषा मुने ॥३॥
इतः स्वर्गश्च मोक्षश्च, मध्यं चान्तश्च गम्यते।
तं खल्वन्यत्र मर्त्यानां, कर्मभूमौ विधीयते ॥४॥

भावार्थ - समुद्र के उत्तर और हिमाद्रि के दक्षिण में भारतवर्ष अवस्थित है। इसका विस्तार नौ हजार योजन विस्तृत है। यह स्वर्ग और मोक्ष जाने वाले पुरुषों की कर्मभूमि है। इसी स्थान से यतः मनुष्य स्वर्ग और मुक्ति प्राप्त करते हैं और यहीं से तिर्यंच और नरक गति में भी जाते हैं अतः ये कर्मभूमि है। इस भारतवर्ष के सिवाय अन्य क्षेत्र में कर्मभूमि नहीं है।

अग्निपुराण के एक सौ अठारहवें अध्याय के द्वितीय श्लोक में भी भारतवर्ष को कर्मभूमि कहा गया है। यथा - कर्मभूमिरियं स्वर्गमपवर्गञ्च गच्छताम्।

विष्णुपुराण के अन्त में कर्मभूमि का उपसंहार करते हुए लिखा है - कि भारतवर्ष में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र रहते हैं तथा वे क्रमशः पूजन-पाठ, आयुध-धारण, वाणिज्य-कर्म और सेवादि कार्य करते हैं। यथा -

ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्या मध्ये शूद्राश्च भागशः। इज्याऽऽयुध्वाणिज्याद्यैर्वर्तयन्तो व्यवस्थिताः ॥९॥

R-3631

इस अध्याय का उपसंहार करते हुए कहा गया है कि भारतवर्ष के सिवाय अन्य सब क्षेत्रों में भोगभूमि है। यथा -

अत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बूद्वीपे महामुने । यतो हि कर्मभूरेषा ह्यतोऽन्या भोगभूमयः ॥

भावार्थ - इस जम्बूद्वीप में भारतवर्ष सर्वश्रेष्ठ है। क्योंकि यहाँ पर स्वर्ग और मोक्ष प्राप्त कराने वाली कर्मभूमि है। भारतभूमि के सिवाय अन्य सर्व क्षेत्र की भूमियाँ तो भोगभूमियाँ हैं। क्योंकि वहाँ पर रहने वाले जीव सदाकाल बिना किसी रोग-शोक बाधा के भोगों का उपभोग करते रहते हैं।

मार्कण्डेय-पुराण के ५५ वें अध्याय के श्लोक २०/२१ में भी भोगभूमि और कर्मभूमि का वर्णन मिलता है।

12 - उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल

जैनागमों में काल के परिवर्तन स्वरूप का वर्णन करते हुए बतलाया गया है कि जिस समय मनुष्य की आयु, सम्पत्ति, सुख-समृद्धि एवं भोगोपभोगों की वृद्धि हो उसे उत्सर्पिणी काल कहते हैं और जिस समय उक्त वस्तुओं की हानि या ह्रास हो तो उसे अवसर्पिणी काल कहते हैं। दोनों प्रकार के कालों का परिवर्तन कर्मभूमि वाली पृथ्वियों में ही होता है - अन्यत्र भोगभूमि वाली पृथ्वियों में नहीं। विष्णुपुराण में भी इसका उल्लेख इस प्रकार से मिलता है -

अवसर्पिणी न तेषां वै न चोत्सर्पिणी द्विज ! न त्वेषाऽस्ति युगावस्था तेषु स्थानेषु सप्तसु ॥

अर्थात् - हे द्विज ! जम्बूद्वीपस्थ अन्य सात क्षेत्रों मे भारतवर्ष के समान काल की न अवसर्पिणी अवस्था है और न उत्सर्पिणी अवस्था है।

13 - वर्षधर पर्वतों पर सरोवर

जैन मान्यता के समान मार्कण्डेय पुराण में भी वर्षधर पर्वतों के ऊपर सरोवरों का तथा उनमें कमलों का उल्लेख इस प्रकार हैं -

एतेषां पर्वतानां तु द्रोण्योऽतीव मनोहराः । वनैरमलपानीयैः सरोभिरुपशोभिताः ॥ (अध्याय ५५, श्लोक १४-१५)

उक्त सरोवरों में कमलों का उल्लेख इस प्रकार हैं -

तदेतत् पार्थिवं पद्मं चतुष्पत्रं मयोदितम् । (अध्याय ५५, श्लोक २०)

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि जैन मान्यता के समान ही पुराणकार ने भी पद्म को पार्थिव माना है।

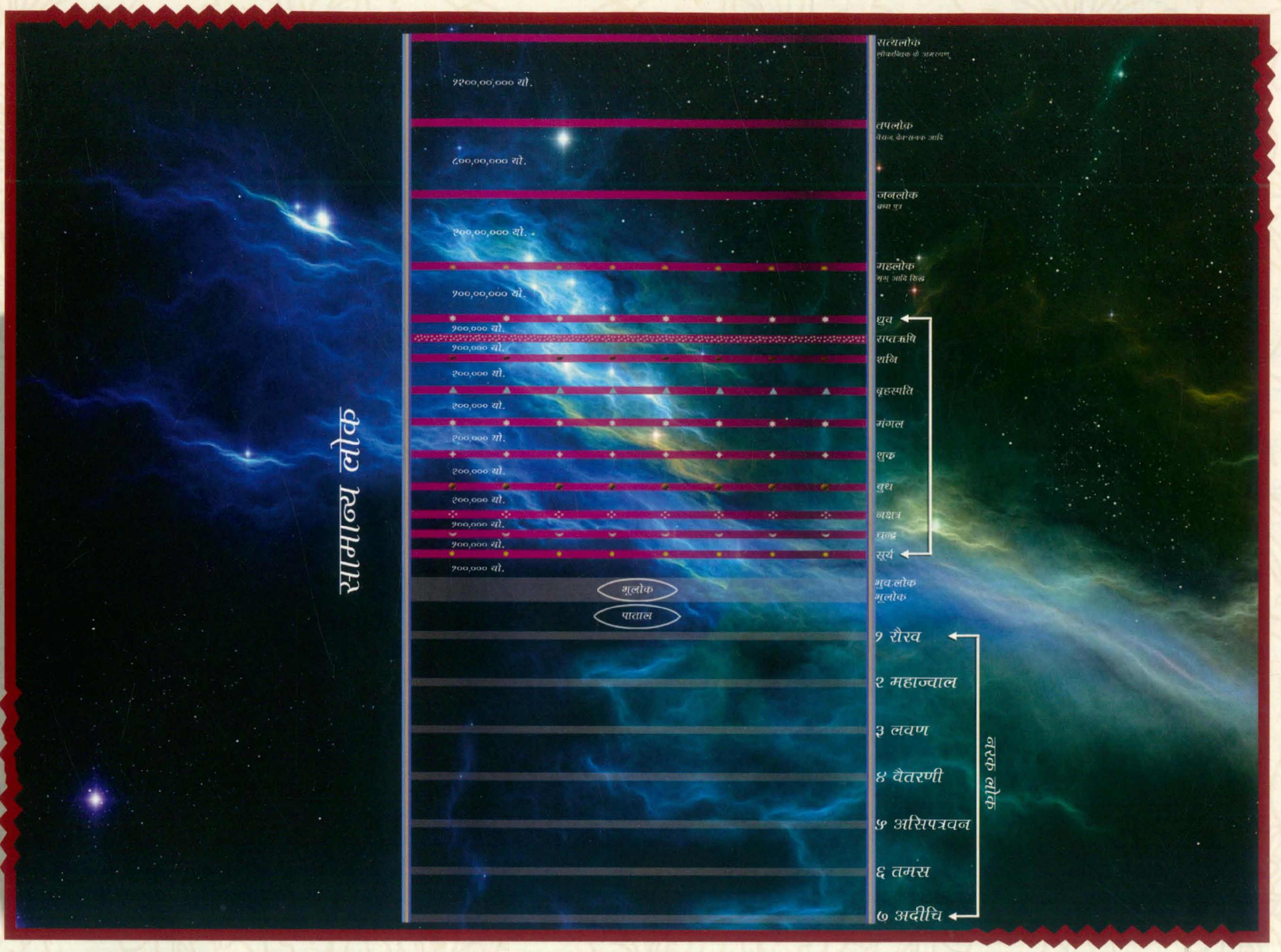
सामान्य लोक
सत्यलोक
१२००,००,००० यो.
तपलोक
८००,००,००० यो.
जनलोक
ब्रह्मा पुत्र
२००,००,००० यो.
महलोक
भृगु आदि सिद्ध
१००,००,००० यो.
ध्रुव
१००,००० यो.
सप्तऋषि
१००,००० यो.
शनि
२००,००० यो.
बृहस्पति
२००,००० यो.
मंगल
२००,००० यो.
शुक्र
२००,००० यो.
बुध
२००,००० यो.
नक्षत्र
१००,००० यो.
चन्द्र
१००,००० यो.
सूर्य
१००,००० यो.
भुव लोक
भूलोक
भूलोक
पाताल
१ रौरव
२ महाज्वाल
३ लवण
४ वैतरणी
५ असिपत्रवन
६ तमस
७ अदीचि
नरक लोक

०६. "भारतवर्ष" का नामकरण

जम्बूद्वीप के प्रथम वर्ष या क्षेत्र का नाम ''भारतवर्ष'' है। इसका यह नाम कैसे पड़ा, इस विषय में जैन मान्यता है कि आदि तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के सौ पुत्रों में ज्येष्ठ आदि पुत्र भरत जो कि प्रथम चक्रवर्ती थे, उन्होंने इस क्षेत्र का सर्वप्रथम राज्यसुख भोगा, इस कारण इस क्षेत्र का नाम ''भारतवर्ष'' प्रसिद्ध हुआ। श्रीमदुमास्वातिजी रचित तत्त्वार्थसूत्र के महान् भाष्यकार श्रीमदकलंक देव ने तीसरे अध्याय के दशवें सूत्र की व्याख्या करते हुए लिखा है :-

''भरतक्षत्रिययोगाद्वर्षो भरतः विजयार्धस्य दक्षिणतो जलधेरुत्तरतः गंगा-सिन्ध्वोर्बहुमध्यदेशभागे विनीता नाम नगरी। तस्यामुत्पन्नः सर्वराजलक्षण सम्पन्नो भरतो नामाद्यश्चक्रधरः षट्खण्डाधिपतिः अवसर्पिण्या राज्यविभाग-काले तेनादौ भुक्तत्वात्, तद्योगाद्'भरत'इत्याख्यायते वर्षः।''

हिन्दुओं के प्रसिद्ध मार्कण्डेयपुराण में भी व्यास महर्षि ने उक्त कथन का ही समर्थन करते हुए तिरपनवें अध्याय में कहा है -

ऋषभाद् भरतो जज्ञे वीरः पुत्रंशताद्वरः।
सोऽभिषिच्यर्षभः पुत्रं, महाप्राव्राज्यमास्थितः ॥४१॥
तपस्तेपे महाभागः पुलहाश्रमसंश्रयः।
हिमाह्वं दक्षिणं वर्षं, भरताय पिता ददौ ॥४२॥
तस्मात्तु भारतं वर्षं, तस्य नाम्ना महात्मनः ॥४३॥

अर्थात् - ऋषभ से भरत पैदा हुआ, जो उनके सौ पुत्रों में सर्वश्रेष्ठ था। उसका राज्याभिषेक करके ऋषभ महानुभाव प्रव्रजित होकर पुलहाश्रम में चले गये। जम्बूद्वीप का हिम नामक दक्षिण क्षेत्र पिता ने भरत को दिया। इसके कारण उस महात्मा के नाम से यह क्षेत्र ''भारतवर्ष'' कहलाने लगा। इसके अतिरिक्त जम्बूद्वीप-प्रज्ञप्ति में 'भरतक्षेत्र' इस नाम के दो कारण और भी प्रतिपादित किये गये हैं - प्रथम इस क्षेत्र के अधिष्ठायक देव का नाम भरत है। दूसरा यह नाम शाश्वत है। यहाँ यह भी स्मरणीय है कि प्रत्येक उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल के प्रथम चक्रवर्ती का नाम भरत ही होता है। इन सब कारणों से यह क्षेत्र भरत नाम से प्रसिद्ध है। कुछ लोग दुष्यन्त-पुत्र भरत के नाम से इस क्षेत्र का नामकरण हुआ कहते हैं। किन्तु इस भरत का व्यक्तित्व इतना असाधारण नहीं रहा है कि उसके नाम पर इस क्षेत्र की प्रसिद्धि मानी जाय। इसके अतिरिक्त इससे पूर्व इस क्षेत्र का नाम क्या था, यह अब तक किसी भी इतिहासवेत्ता ने प्रकट नहीं किया है। इसी कारण अब विचारशील इतिहासज्ञों ने इस अभिमत को अस्वीकार कर दिया है।

७. वैज्ञानिकों के मतानुसार आधुनिक विश्व

- पं. हीरालाल "सिद्धांतशास्त्री",
न्यायतीर्थ

1. भूमण्डल

जिस पृथ्वी पर हम निवास करते हैं वह मिट्टी पत्थर का एक नारंगी के समान चपटा गोला है। इसका व्यास लगभग आठ हजार मील ($^{७९२६.६}/_{७८९९.९}$-२६.७) और परिधि लगभग पचीस हजार मील ($^{२४९०२}/_{२४८६०}$-४२) है। वैज्ञानिकों के मतानुसार आज से खरबों वर्ष पूर्व किसी समय यह ज्वालामयी अग्नि का गोला था। यह अग्नि धीरे-धीरे ठण्डी होती गई और अब यद्यपि पृथ्वी का धरातल सर्वत्र शीतल हो चुका है, तथापि अभी इसके गर्भ में अग्नि तीव्रता से जल रही है, जिसके कारण पृथ्वी का धरातल भी कुछ उष्णता को लिए हुए है। नीचे की ओर खुदाई करने पर उत्तरोत्तर अधिक उष्णता पाई जाती है। कभी-कभी यही भूगर्भ की ज्वाला कुपित होकर भूकम्प उत्पन्न कर देती है और कभी ज्वालामुखी के रूप में भी फूट निकलती है, जिससे पर्वत, भूमि, नदी, समुद्र आदि के जल और स्थल भागों में परिवर्तन होता रहता है। इसी अग्नि के ताप से पृथ्वी का द्रव्य यथायोग्य दबाव और शीतलता पाकर नाना प्रकार की धातु-उपधातुओं एवं तरल पदार्थों में परिवर्तित हो गया है जो हमें पत्थर, कोयला, लोहा, सोना, चाँदि आदि, तथा जल और वायु मण्डल के रूप में दिखाई देता है। जल और वायु ही सूर्य के ताप से मेघ आदि का रूप धारण कर लेते हैं। यह वायुमण्डल पृथ्वी के धरातल से उत्तरोत्तर विरल होते हुए लगभग ४०० मील तक फैला हुआ अनुमान किया जाता है। पृथ्वी का धरातल भी सर्वत्र समान नहीं है। पृथ्वीतल का उच्चतम भाग हिमालय का गौरीशंकर शिखर (माउण्ट एवरेस्ट) माना जाता है, जो समुद्र तल से उनतीस हजार फुट, अर्थात् लगभग साढे पाँच मील ऊँचा है। समुद्र की अधिकतम गहराई ३५,४०० फुट अर्थात् लगभग छह मील तक नापी जा चुकी है। इस प्रकार पृथ्वी तल की ऊँचाई-नीचाई में साढे ग्यारह मील का अन्तर पाया जाता है।

पृथ्वी की ठंडी होकर जमी हुई परत सत्तर मील समझी जाती है। इसकी द्रव्य रचना के अध्ययन से अनुमान लगाया गया है कि उसे जमे हुए अरबों खरबों वर्ष हो गये हैं। सजीव तत्त्व के चिह्न केवल चौंतीस मील की ऊपरी परत में पाये जाते हैं। जिससे अनुमान लगाया गया है कि पृथ्वी पर जीवतत्त्व उत्पन्न हुए दो करोड़ वर्ष से अधिक समय नहीं हुआ है। इसमें भी मनुष्य के विकास के चिह्न केवल एक करोड़ वर्ष के भीतर ही अनुमान किये जाते हैं।

पृथ्वी तल के ठंड़े हो जाने के पश्चात् उस पर आधुनिक जीवशास्त्र के अनुसार जीवन का विकास इस क्रम से हुआ... सर्व प्रथम स्थिर जल के ऊपर जीवकोश प्रकट हुए, जो पाषाणादि जड़ पदार्थों से मुख्यतया तीन बातों मे भिन्न थे। एक तो वे आहार ग्रहण करते और बढ़ते थे। दूसरे वे इधर-उधर चल भी सकते थे। कालक्रम से इनमें से कुछ कोश भूमि में जड़ जमाकर स्थावरकाय वनस्पति बन गये, और कुछ जल में ही विकसित होते-होते मत्स्य बन गये। क्रमशः धीरे-धीरे ऐसे वनस्पति और मेंढक आदि प्राणी उत्पन्न हुए, जो जल में ही नहीं, किन्तु स्थल पर भी श्वासोच्छ्वास ग्रहण कर सकते थे। इन्हीं स्थलचर प्राणियों में से उदर के बल रेंगकर चलनेवाले केंचुआ-साप आदि प्राणी उत्पन्न हुए। इनका विकास दो दिशाओं में हुआ...एक पक्षी के रूप में और दूसरे स्तनधारी प्राणी के रूप में। स्तनधारी प्राणी की यह विशेषता है कि वे अण्डे से उत्पन्न न होकर गर्भ से उत्पन्न होते हैं और पक्षी अण्डे से उत्पन्न होते हैं। मगर से लेकर भेड, बकरी, गाय, भैंस, घोडा आदि सब इसी स्तनधारी जाति के प्राणी हैं। इन्हीं स्तनधारी प्राणियों की एक वानर जाति उत्पन्न हुई। किसी समय कुछ वानरों ने अपने अगले दो पैर उठाकर पीछे के दो पैरो पर चलना-फिरना सीख लिया। बस, यहीं से मनुष्य जाति का विकास प्रारम्भ हुआ माना जाता है। उक्त जीवकोश से लगाकर मनुष्य के विकास तक प्रत्येक नयी धारा उत्पन्न होने में ''लाखों-करोड़ों'' वर्ष का अन्तर माना जाता है।

इस विकास-क्रम में समय-समय पर तत्कालिन परिस्थितियों के अनुसार नाना प्रकार की जीव-जातियाँ उत्पन्न हुई। उनमें से अनेक जातियाँ समय के परिवर्तन, विप्लव और अपनी अयोग्यता के कारण विनष्ट हो गई, जिनका पता हमें भूगर्भ में उनके निष्णातो के द्वारा मिलता हैं।

पृथ्वी-तल पर भूमि से जल का विस्तार लगभग तिगुना है। (थल २९% जल ७१%)। जल के विभागानुसार पृथ्वी के पाँच प्रमुख खण्ड पाये जाते हैं - एशिया, यूरोप और अफ्रीका मिलकर एक, उत्तरी-दक्षिणी अमेरिका मिलकर दूसरा, आस्ट्रेलिया तीसरा, उत्तरी ध्रुव चौथा, पाँचवा दक्षिणी ध्रुव। इनके अतिरिक्त अनेक छोटे मोटे द्वीप भी हैं। यह भी अनुमान किया जाता है कि सुदूर पूर्व में सम्भवतः ये प्रमुख भूमिभाग परस्पर जुड़े हुए थे। उत्तरी दक्षिणी अमेरिका की पूर्वी समुद्र तटीय रेखा ऐसी दिखाई देती है कि यह यूरोप-अफ्रीका की पश्चिमी समुद्रतटीय रेखा के साथ मिलकर ठीक बैठ सकती है। तथा हिन्द-महासागर के अनेक द्वीप समूह की श्रृंखला एशिया खण्ड को आस्ट्रेलिया के साथ जोड़ती हुई दिखाई देती है। वर्तमान में नहरें खोदकर अफ्रीका का एशिया-यूरोप भूमि खण्ड से, तथा उत्तरी अमेरिका का दक्षिणी अमेरिका से भूमि सम्बन्ध तोड दिया गया है। इन भूमिखण्डों का आकार, परिमाण और स्थिति परस्पर अत्यन्त विषम है।

भारतवर्ष एशियाखण्ड का दक्षिणी-पूर्वी भाग है। यह त्रिकोणाकार हैं। दक्षिणी कोण लंका द्वीप को प्रायः स्पर्श करता है। वहाँ से भारतवर्ष की सीमा उत्तर की और पूर्व-पश्चिम दिशाओं में फैलती हुई चली गई है और हिमालय पर्वत की श्रेणियों पर जाकर समाप्त होती है। भारत का पूर्व-पश्चिम और उत्तर-दक्षिणी विस्तार लगभग दो-दो हजार मील का है। इसकी उत्तरी सीमा पर हिमालय पर्वत है। मध्य में विन्ध्य और सतपुडा की पर्वतमालाएँ हैं। तथा दक्षिण के पूर्वी और पश्चिमी समुद्र तटों पर पूर्वी-घाट और पश्चिमी-घाट नाम वाली पर्वत श्रेणियाँ फैली हुई हैं।

भारतवर्ष की प्रमुख नदियों में हिमालय के प्रायः मध्य भाग से निकलकर पूर्व की ओर समुद्र में जानेवाली ब्रह्मपुत्र और गंगा है। इनकी सहायक नदियों में जमुना, चम्बल, वेतवा और सोन आदि हैं। हिमालय से निकलकर पश्चिम की ओर समुद्र में जानेवाली सिन्धु और उसकी सहायक नदियाँ झेलम, चिनाव, रावी, व्यास और सतलज हैं। गंगा और सिन्धु की लम्बाई लगभग पन्द्रह सौ मील की है। देश के मध्य में विन्ध्य और सतपुडा के बीच पूर्व से पश्चिम की ओर समुद्र तक बहनेवाली नर्मदा नदी है। सतपुडा के दक्षिण में तापती नदी है। दक्षिण भारत की प्रमुख नदियाँ गोदावरी, कृष्णा, कावेरी पश्चिम से पूर्व की ओर बहती हैं।

देश के उत्तर में सिन्धु से गंगा के कछार तक प्रायः आर्य जाति के, तथा सतपुडा से सूदूर दक्षिण में द्रविड जाति के, एवं पहाड़ी प्रदेशों में गोंड, भील, कोल और किरात आदि आदिवासी जन-जातियों के लोग रहते हैं।

वर्तमान में उपलब्ध इस आठ हजार मील विस्तृत और पच्चीस हजार मील परिधि वाले भू-मण्डल के चारों और अनन्त आकाश है जिसमें हमें दिन को सूर्य और रात्रि को चन्द्रमा एवं ताराओं के दर्शन होते हैं और उनसे प्रकाश मिलता है। इनमें पृथ्वी के सबसे अधिक समीप चन्द्रमा है, जो इस भूमण्डल से लगभग अढ़ाई लाख मील दूर है। यह पृथ्वी के समान ही एक भूमण्डल है जो पृथ्वी से बहुत छोटा है और उसी के चारों और घूमा करता है, जिससे हमारे यहाँ शुक्ल और कृष्ण पक्ष होते हैं। चन्द्रमा में स्वयं प्रकाश नहीं है, किन्तु वह सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होता है, इसलिए अपने परिभ्रमण के अनुसार घटता-बढ़ता दिखाई देता है। अनुसन्धान से ज्ञात हुआ है कि चन्द्रमा बिल्कुल ठंड़ा हो गया है और पृथ्वी के गर्भ के समान अब उसमें अग्नि नहीं है। उसके आस-पास वायुमण्डल भी नहीं है और न उसके धरातल पर जल भी है। इन्हीं कारणों से वहाँ श्वासोच्छ्वास प्रधान प्राणी और वनस्पति उपलब्ध नहीं है। वहाँ पर्वत तथा कन्दराओं के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। अनुमान किया जाता है कि चन्द्रमा पृथ्वी का ही एक भाग है, जिसे टूटकर अलग हुए पाँच-छह करोड़ वर्ष हुए हैं।

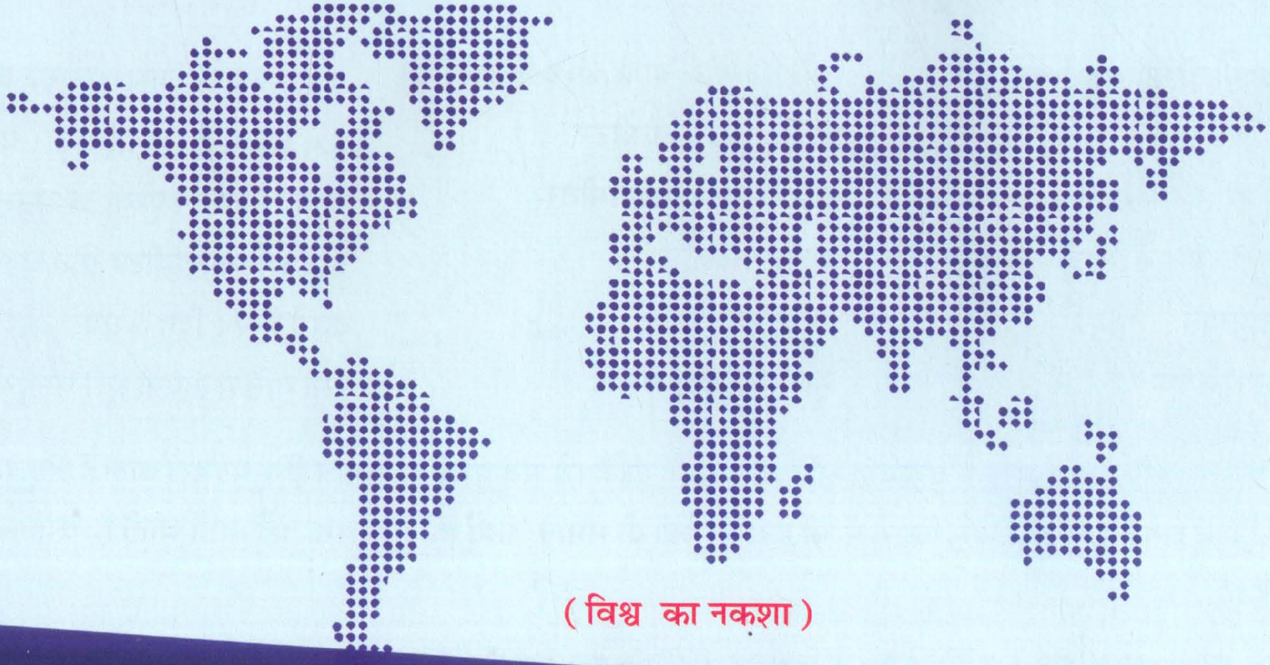

(विश्व का नकशा)

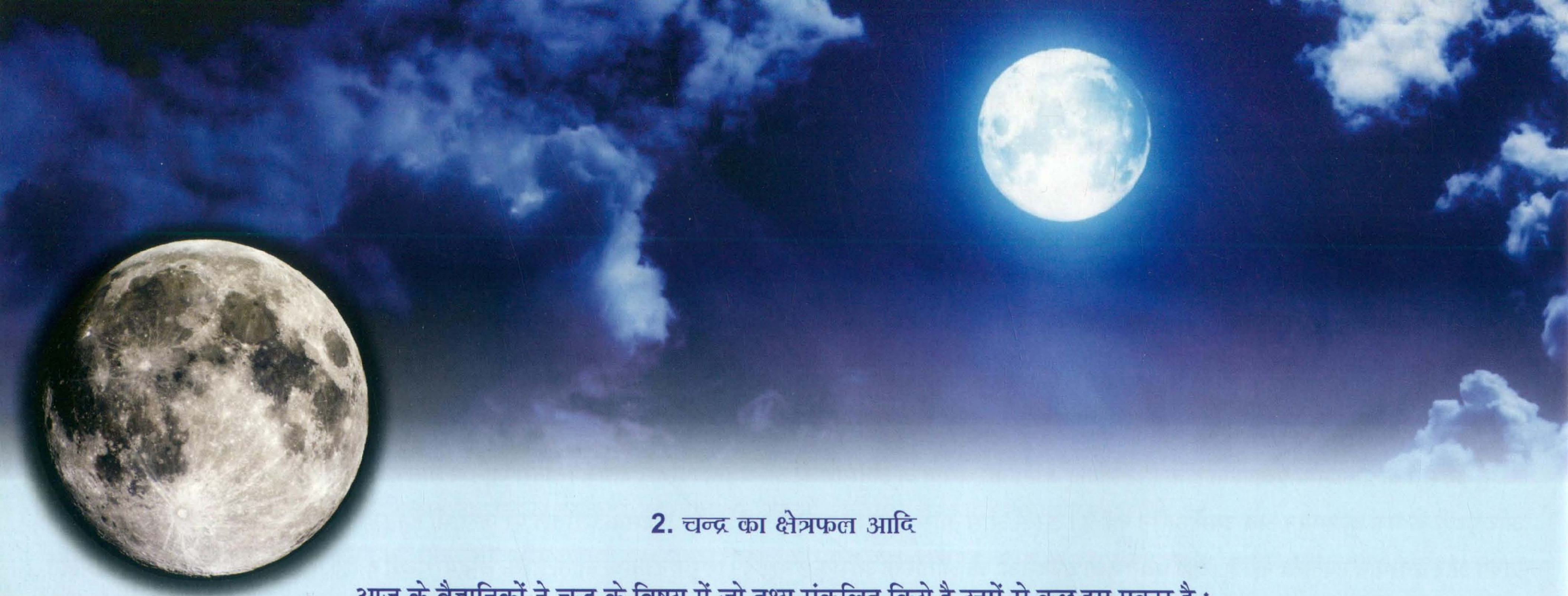

2. चन्द्र का क्षेत्रफल आदि

आज के वैज्ञानिकों ने चन्द्र के विषय में जो तथ्य संकलित किये है उनमें से कुछ इस प्रकार है :-

१. चन्द्र व्यास अथवा पृथ्वी का चतुर्थ भाग	-	२,१६० मील या ३,४५६ किलोमीटर
२. चन्द्र की परिधि	-	१०,८६४ किलोमीटर
३. चन्द्र की पृथ्वी से दूरी	-	३,८१,१७१ किलोमीटर
४. चन्द्र का तापमान (जब सूर्य सिर के ऊपर हो)	-	११७ सेन्टीग्रेड
५. चन्द्र का रात में तापमान	-	१३७ सेटीग्रेड
६. चन्द्र सतह में गुरुत्वाकर्षण	-	पृथ्वी का छट्ठा अंश...

पृथ्वी पर जिस वस्तु का वजन २७ किलो है, उसका वजन चांद पर ४.५ किलो है। चन्द्रविस्तार या बिम्ब पृथ्वी का १०० वां अंश है, और उसका आयतन पृथ्वी के आयतन का ५ वां भाग है। चन्द्रमा की गति ३,६६९ किलोमीटर प्रति घण्टा है। चन्द्र को पृथ्वी की एक परिक्रमा करने में २७ दिन ७ घण्टे और ४३ मिनट लगते हैं, क्योंकि वह लगभग इसी गति से अपनी धुरी पर घूमता है।

चन्द्रमा से परे क्रमशः शुक्र, बुध, मंगल, बृहस्पति और शनि आदि ग्रह हैं। ये सब पृथ्वी के समान ही भूमण्डल वाले हैं और सूर्य की परिक्रमा किया करते हैं, तथा सूर्य के ही प्रकाश से प्रकाशित होते हैं। इन ग्रहों में से किसी में भी हमारी पृथ्वी के समान जीवों की संभावना नहीं मानी जाती है, क्योंकि वहाँ की परिस्थितियाँ जीवन के साधनों से सर्वथा प्रतिकूल हैं।

इन ग्रहों से पृथ्वी से लगभग साढे नौ करोड़ मील की दूरी पर सूर्य-मण्डल है, जो पृथ्वी से लगभग पन्द्रह लाख गुना बड़ा है, अर्थात् पृथ्वी के समान लगभग पन्द्रह लाख भूमण्डल उसके गर्भ में समा सकते हैं। सूर्य का व्यास ८,६०,००० मील है। यह महाकाय सूर्य-मण्डल अग्नि से प्रज्वलित है और उसकी ज्वाला लाखों मील तक उठती हैं। सूर्य की ज्वाला से करोड़ों मील विस्तृत सौर-मण्डल भर में प्रकाश और उष्णता फैलती है। सूर्य के धरातल पर १०,००० फेरेनहीट गर्मी है। जेम्स जीन्स वैज्ञानिक का मत है कि इसी सूर्य की विच्छिन्नता से पृथ्वी, बुध, बृहस्पति आदि ग्रह और उनके उपग्रह बने हैं, जो सब अभी तक उसके आकर्षण से निबद्ध होकर उसी के आस-पास घूम रहे हैं। हमारा भूमण्डल सूर्य की परिक्रमा ३६५ $^{१}/_{४}$ दिन में तथा प्रति चौथे वर्ष ३६६ दिन में पूरी करता है और इसी के आधार पर हमारा वर्ष-मान अवलम्बित है। इसी परिभ्रमण में पृथ्वी निरन्तर अपनी कीली पर ६० हजार मील प्रति घण्टे के हिसाब से घूमा करती है, जिसके कारण हमारे यहाँ दिन और रात्रि हुआ करते हैं। पृथ्वी का जो गोलार्ध सूर्य के सन्मुख पड़ता है, वहां दिन और शेष गोलार्ध में रात्रि होती है। वैज्ञानिकों का यह भी मत है कि ये पृथ्वी आदि ग्रह और उपग्रह पुनः सूर्य की और आकृष्ट हो रहे हैं।

ऊपर जिस महाकाय सूर्य-मण्डल का उल्लेख किया गया है उसकी बराबरी का अन्य कोई भी ज्योतिर्मण्डल आकाश में दिखाई नहीं देता। किन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिए कि उन अति लघु दिखाई देने वाले तारों में सूर्य के समान कोई एक भी नहीं है। वस्तुतः हमें जिन तारों का दर्शन होता है, उनमें सूर्य से छोटे एवं सूर्य की बराबरी वाले तारे तो बहुत थोड़े हैं। उनमें अधिकांश तो सूर्य से भी बहुत विशाल है, तथा उससे सैंकडों, हजारों, लाखों गुने बड़े है। किन्तु उनके छोटे दिखाई देने का कारण यह है कि वे हम से सूर्य की अपेक्षा बहुत अधिक दूरी पर हैं। ज्येष्ठा नक्षत्र इतना विशाल है कि उसमें ७००,००,००,००,००,००० पृथ्वीयाँ समा जायें।

3. प्रकाशवर्ष

तारों की दूरी समझने के लिए हमारे संख्यावाचक शब्द काम नहीं देते। उनकी गणना के लिए वैज्ञानिकों की दूसरी ही विधि है। प्रकाश की गति प्रति सेकण्ड एक लाख छयासी हजार (१,८६,०००) मील, तथा प्रति मिनिट एक करोड़ ग्यारह लाख साठ हजार (१,११,६०,०००) मील मापी गई है। इस प्रमाण से सूर्य का प्रकाश हमारी पृथ्वी तक आने में साढ़े आठ (८ १/२) मिनिट लगते हैं। तारे हमसे इतनी दूर है कि उनका प्रकाश हमारे समीप वर्षों में आ पाता है और जितने वर्षों में वह आता है उतने ही प्रकाशवर्ष की दूरी पर वह तारा कहा जाता है। सेन्चुरी नामक अति निकटवर्ती तारा हमसे साढे चार प्रकाशवर्ष की दूरी पर है क्योंकि उसके प्रकाश को हमारे पास तक आने में साढे चार प्रकाशवर्ष लगते हैं। इस प्रकार दस, बीस, पचास एवं सैकडों प्रकाशवर्षों की दूरी के ही नहीं, किन्तु ऐसे-ऐसे तारों का ज्ञान हो चुका है जिनकी दूरी दस लाख प्रकाशवर्ष की मापी गई है तथा जो परिमाण में इस पृथ्वी से तो क्या, हमारे सूर्य से भी लाखो गुने बड़े हैं।

ताराओं की संख्या का पार नहीं है। हमें अपनी दृष्टि से तो अधिक से अधिक छट्ठे प्रमाण तक के लगभग छह-सात हजार तारे ही दिखाई देते हैं। किन्तु दूर-दर्शक यन्त्रों की जितनी शक्ति बढ़ती जाती है, उतने ही अधिकाधिक तारे दिखाई देते हैं। अभी तक बीसवें प्रमाण तक के तारों को देखने योग्य यन्त्र बन चुके हैं, जिनके द्वारा दो अरब से भी अधिक तारे देखे जा चुके हैं। जिनकी तालिका आगे दी जाती है।

4. वैज्ञानिकों के अनुसार तारों की संख्या

आज के वैज्ञानिकों ने प्रकाश की हीनाधिकता के अनुसार तारों को कई वर्गों में बाँटा है। पहिले, दूसरे और तीसरे वर्ग के तारे अधिक चमकीले हैं, किन्तु उनकी संख्या बहुत कम है। आठवें वर्ग तक के तारों को आँखों से देखा और गिना जा सकता हैं, किन्तु इससे आगे के वर्गों के तारो को दूरबीन की सहायता से ही देखा और गिना गया हैं।

वर्ग	संख्या	वर्ग	संख्या
१	१९	११	८७,०००
२	६५	१२	२२,७०,०००
३	२००	१३	५७,००,०००
४	५३०	१४	१,३८,००,०००
५	१,६२०	१५	३,२०,००,०००
६	४,८५०	१६	७,१०,००,०००
७	१४,३००	१७	११,५०,००,०००
८	४१,०००	१८	२९,६०,००,०००
९	१,१७,०००	१९	५६,००,००,०००
१०	३,२४,०००	२०	१,००,००,००,००० (एक अबज)

जेम्स जीन्स सदृश वैज्ञानिक ज्योतिषी का मत है कि तारों की संख्या हमारी पृथ्वी के समस्त समुद्र-तटों की रेत के कणों के बराबर हो तो आश्चर्य नहीं है। ये असंख्य तारे एक दूसरे से कितने दूर-दूर हैं, इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि सूर्य से अति निकटवर्ती तारा साढे चार प्रकाशवर्ष अर्थात् अरबों-खरबों मील की दूरी पर है। ये सब तारे बड़े वेग से गतिशील हैं और उनका प्रवाह दो भिन्न दिशाओं में पाया जाता है।

5. नीहारिका

बिखरी बाष्प की शक्ल में जो अनेक तारों का समूह पाया जाता है, उन्हें नीहारिका कहते हैं। बिना दूरबीन के हम अपनी आँखों से एकाध ही नीहारिका देख सकते हैं और वह भी देखने में तारों जैसी ही मालूम होती है। दूरबीन से देखने पर उनमें कुछ गोल दिखाई देती हैं और कुछ की आकृती शंख के चक्कर की भांती है। गोल नीहारिकाएँ हमारे स्थानीय विश्व या आकाशगंगा के तारागुच्छ है। चक्करदार नीहारिकाएँ महान विश्व से छोटी, किन्तु करोड़ों तारा गुच्छकों से मिलकर बने छोटे विश्व हैं। यद्यपि विशेष विवरण के साथ जाँच-पडताल की गई नीहारिकाएँ सौ (१००) से भी कम है, किन्तु दूरबीन से बीस लाख के करीब चक्करदार नीहारिकाओं के अस्तित्व का पता चला है। आकाशगंगा भी इसी श्रेणी का एक द्वीप-विश्व है। हमारी पृथ्वी न बृहस्पति की भाँति विशाल और न शुक्र की भाँति छोटा ग्रह है। सूर्य भी मध्यम आकार का एक ग्रह है। किन्तु आकाश-गंगा अपनी श्रेणी के द्वीप-विश्वों से बहुत बड़ी है। आकाश-गंगा भी एक मध्यम आकार की नीहारिका है, जिसकी मात्रा एक अरब सूर्यों से भी ज्यादा है। सूर्य हमारी पृथ्वी से पन्द्रह लाख गुना बड़ा है।

6. आकाश गंगा

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि आकाश गंगा क्या वस्तु है ? रात को आकाश में एक सफेद बालुका पथ या गंगा जैसी सफेद चौड़ी धारा दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व की ओर लम्बे आकार में दिखाई देती है, इसे ही आकाश-गंगा कहते है। आकाश-गंगा स्वयं तारों का एक समूह है। इसमें सूर्य जैसे दो खरब के करीब तारे हैं। इसकी आकृती अण्डाकार जैसी घड़ी या दो जुड़े गोल तवों की भाँति बीच में मोटी और किनारों पर पतली है। इसका व्यास ३ लाख प्रकाशवर्ष और मोटाई १० हजार प्रकाशवर्ष है।

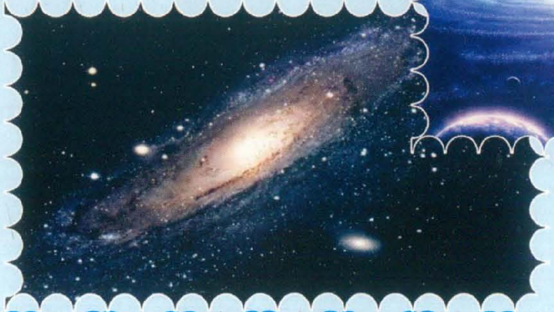

7. ग्रह

ज्योतिर्मण्डल में ग्रहों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है, उनका किंचित् परिचय निम्नलिखित कोष्ठक से ज्ञात हो सकेगा ।

क्रम	ग्रहो का नाम	सूर्य से औसत दूरी मीलों में	औसत व्यास मीलों में	परिक्रमा का समय वर्षों में	उपग्रहो की संख्या
१	बुध	३,६०,००,०००	३,०३०	०.२२	०
२	शुक्र	६,७२,००,०००	७,७००	०.६२	०
३	पृथ्वी	९,२६,००,०००	७,९१८	१.००	१
४	मंगल	१४,१५,००,०००	४,२३०	१.८८	२
५	बृहस्पति	४८,३२,००,०००	८६,५००	११.८६	९
६	शनि	८८,५९,००,०००	७३,०००	२९.४६	९
७	अरुण	१,७८,२२,००,०००	३१,९००	८४.०२	४
८	वरुण	२,७९,१६,००,०००	३४,८००	१६४.७८	१
९	कुबेर	३,७०,००,००,०००	३,६०५	२५०.००	अज्ञात

-सूर्य तथा उसका ग्रह-कुटुम्ब मिलकर "सौर्य-मण्डल" कहा जाता है ।

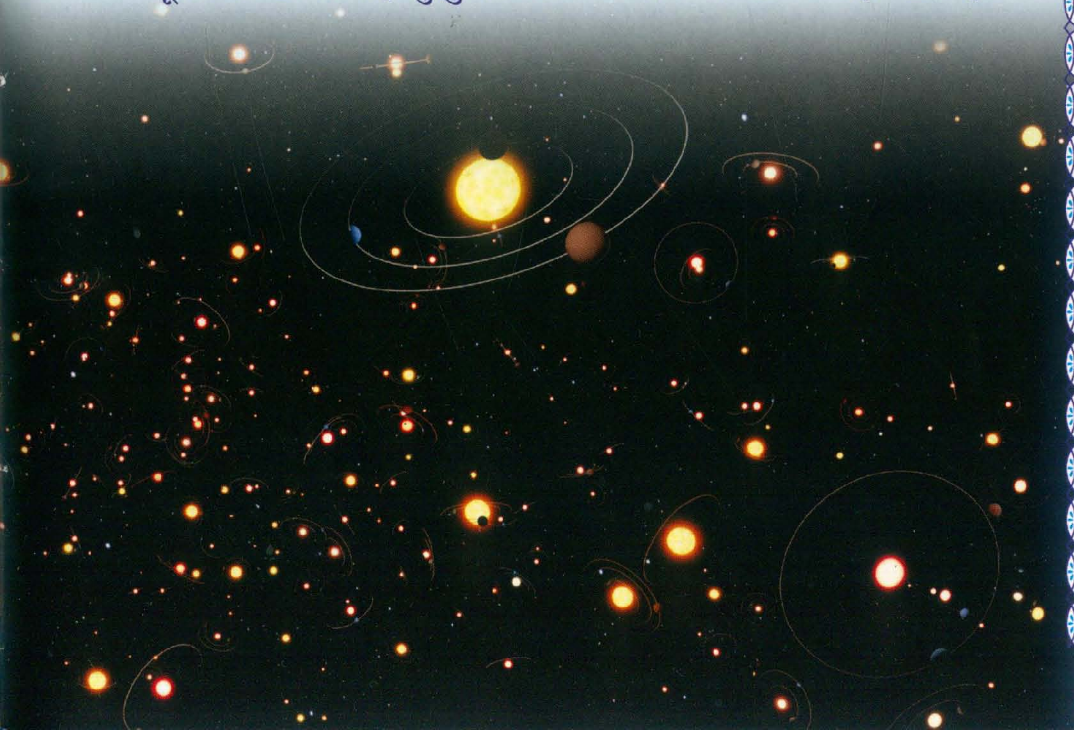

8. लोक या ब्रह्माण्ड का आकार

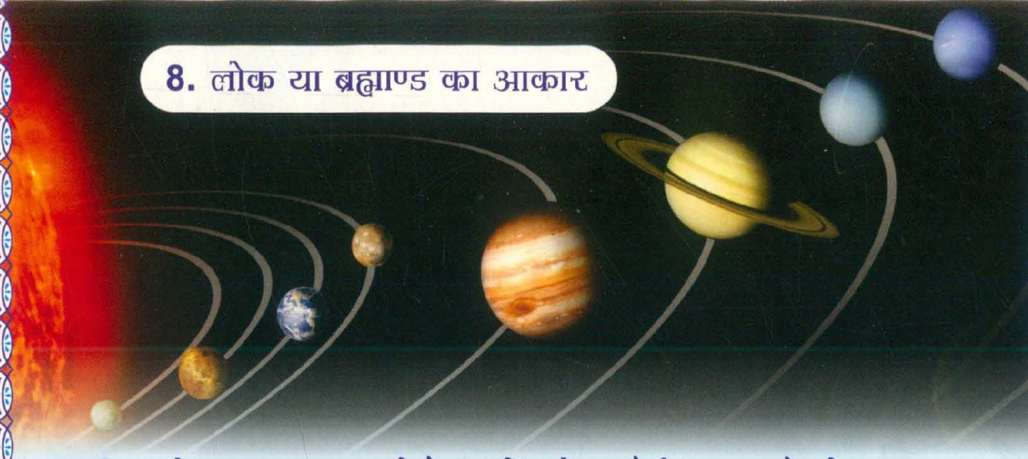

जिसको हम ब्रह्माण्ड कहते हैं, उसमें अनेक सौर्य-मण्डल हैं । ऐसा अनुमान किया जाता कि ऐसे सौर्य-मण्डलों की संख्या लगभग १० करोड़ है । हमारा सौर्य-मण्डल "ऐरावत पथ" (मिल्की वे) नामक ब्रह्माण्ड में स्थित है । ऐरावत-पथ के चन्द्र रूपी पथ के लगभग २/३ भाग पर एक पीला बिन्दु है । यही बिन्दु हमारा सूर्य है, जो अपने ग्रहों को साथ लिए ऐरावत पथ पर बराबर घूम रहा है । पूर्व ऐरावत पथ में लगभग ५०० करोड़ तारे विद्यमान हैं । इनमें से बहुतों को हम नहीं देख सकते हैं, क्योंकि वे हमारे सामने से दिन में निकलते हैं, अतः सूर्य के प्रकाश में उनका प्रकाश हमें नहीं दिखाई देता है । तारों के अतिरिक्त ऐरावत-पथ में धुन्ध, गैस और धूल भी अधिक मात्रा में है । रात्रि में अनेक तारागणों का प्रकाश एकत्रित होकर इस गैस और धूल को प्रकाशित कर देता है । इस प्रकार सारे विश्व या लोक का प्रमाण असंख्य है और आकाश का तो कहीं अन्त ही नहीं दिखाई देता है । तारागणों का आकाश में जिस प्रकार वितरण है, तथा आकाश-गंगा में जो तारापुञ्ज दिखाई देता है, उस पर से अनुमान लगाया गया है कि तारामण्डल सहित समस्त लोक का आकार लेन्स के समान है, अर्थात ऊपर नीचे से उभरा हुआ और बीच में फैला हुआ गोल है, जिसकी परिधि पर आकाश गंगा, दिखाई देती है और उभरे हुए भाग के मध्य में सूर्य-मण्डल है।

("गणितानुयोग" ग्रंथ में से साभार.....)

८. चातुर्द्वीपिक भूगोल परिचय

(ज.प./प्र. १३८/**H.L. Jain** का भावार्थ) १. काशी नगरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित सम्पूर्णानन्द अभिनन्दन ग्रन्थ में दिये गये, श्री राधाकृष्णदासजी के एक लेख के अनुसार, वैदिक धर्म मान्य सप्तद्वीपिक भूगोल की अपेक्षा चातुर्द्वीपिक भूगोल अधिक प्राचीन है। इसका अस्तित्व अब भी वायुपुराण में कुछ-कुछ मिलता है। चीनी यात्री मेगस्थनीज के समय में भी यही भूगोल प्रचलित था; क्योंकि वह लिखता है - भारत के सीमान्त पर तीन और देश माने जाते हैं - सीदिया, बैक्ट्रिया व एरियाना। सीदिया से उसके भद्राश्वव उत्तरकुरु तथा बैक्ट्रिया व एरियाना से केतुमाल द्वीप अभिप्रेत है। अशोक के समय में भी यही भूगोल प्रचलित था, क्योंकि उसके शिलालेखों में जम्बूद्वीप भारतवर्ष की संज्ञा है। महाभाष्य में आकर सर्वप्रथम सप्तद्वीपिक भूगोल की चर्चा है। अतः एव वह अशोक तथा महाभाष्य काल के बीच की कल्पना जान पडती है। २. सप्तद्वीपिक भूगोल की भाँति यह चातुर्द्वीपिक भूगोल कल्पना मात्र नहीं है, बल्कि इसका आधार वास्तविक है। उसका सामंजस्य आधुनिक भूगोल से हो जाता है। ३. चातुर्द्वीपिक भूगोल में जम्बूद्वीप पृथ्वी के चार महाद्वीपों में से एक है और भारतवर्ष जम्बूद्वीप का ही दूसरा नाम है। वही सप्तद्वीपिक भूगोल में आकर इतना बड़ा हो जाता है कि उसकी बराबरीवाले अन्य तीन द्वीप (भद्राश्व, केतुमाल व उत्तरकुरु) उसके वर्ष बनकर रह जाते हैं और भारतवर्ष नामवाला एक अन्य वर्ष (क्षेत्र) भी उसी के भीतर कल्पित कर लिया जाता है। ४. चातुर्द्वीपिक भूगोल का भारत (जम्बूद्वीप) जो मेरु तक पहुँचता है, सप्तद्वीपिक भूगोल में जम्बूद्वीप के तीन वर्षों या क्षेत्रों में विभक्त हो गया है - भारतवर्ष, किंपुरुष व हरिवर्ष। भारत का वर्ष पर्वत हिमालय है।

किंपुरुष हिमालय के परभाग में मंगोलों की बस्ती है, जहाँ से सरस्वती नदी का उद्गम होता है, तथा जिसका नाम आज भी कन्नौर में अवशिष्ट है। यह वर्ष पहले तिब्बत तक पहुँचता था, क्योंकि वहाँ तक मंगोलों की बस्ती पायी जाती है। तथा इसका वर्ष पर्वत हेमकूट है, जो कतिपय स्थानों में हिमालयान्तर्गत ही वर्णित हुआ है। (जैन मान्यता में किंपुरुष के स्थान पर हैमवंत और हिमकूट के स्थान पर महाहिमवान का उल्लेख है।) हरिवर्ष से हिरात का तात्पर्य है जिसका पर्वत निषध है, जो मेरु तक पहुँचता है। इसी हरिवर्ष का नाम अवेस्ता में हरिवरजी मिलता है। ५. इस प्रकार रम्यक्, हिरण्यमय और उत्तरकुरु नामक वर्षों में विभक्त होकर चातुर्द्वीपिक भूगोलवाले उत्तरकुरु महाद्वीप के तीन वर्ष बन गये हैं। ६. किन्तु पूर्व और पश्चिम के भद्राश्व व केतुमाल द्वीप यथापूर्व दो के दो ही रह गये। अन्तर केवल इतना है कि यहाँ वे दो महाद्वीप न होकर एक द्वीप के अन्तर्गत दो वर्ष या क्षेत्र हैं। साथ ही मेरु को मेखलित करनेवाला, सप्तद्वीपिक भूगोल का, इलावृत भी एक स्वतन्त्र वर्ष बन गया है। ७. यों उक्त चार द्वीपों से पल्लवित भारतवर्ष आदि तीन दक्षिणी, हरिवर्ष आदि तीन उत्तरी, भद्राश्व व केतुमाल ये दो पूर्व व पश्चिमी तथा इलावृत नाम का केन्द्रीय वर्ष, जम्बूद्वीप के नौ वर्षों (क्षेत्रों) की रचना कर रहा है। ८. (जैनाभिमत भूगोल में ९ की बजाय १० वर्षों का उल्लेख है। भारतवर्ष, किंपुरुष व हरिवर्ष के स्थान पर भरत, हैमवत व हरि ये तीन मेरु के दक्षिण में हैं। रम्यक्, हिरण्यमय तथा उत्तरकुरु के स्थान पर रम्यक्, हैरण्यवंत व ऐरावत ये तीन मेरु के उत्तर में हैं। भद्राश्व व केतुमाल के स्थान पर पूर्व विदेह व पश्चिम विदेह ये दो मेरु के पूर्व व पश्चिम में हैं। तथा इलावृत के स्थान पर देवकुरु व उत्तरकुरु ये दो मेरु के निकटवर्ती हैं। यहाँ वैदिक मान्यता में तो मेरु के चौगिर्द एक ही वर्ष मान लिया गया और जैन मान्यता में उसे दक्षिण व उत्तर दिशावाले दो भागों में विभक्त कर दिया है। पूर्व व पश्चिमी भद्राश्व व केतुमाल द्वीपों में वैदिक जनोनें क्षेत्रों का विभाग न दर्शाकर अखण्ड रखा पर जैन मान्यता में उनके स्थानीय पूर्व व पश्चिम विदेहों को भी १६,१६ क्षेत्रो में विभक्त कर दिया गया।) ९. मेरुपर्वत वर्तमान भूगोल का पामीर प्रदेश है। उत्तरकुरु पश्चिमी तुर्किस्तान है। सीता नदी यारकन्द नदी है। निषध पर्वत हिन्दुकुश पर्वतों की श्रृंखला है। हैमवत भारतवर्ष का ही दूसरा नाम रहा है।

("जैनेन्द्र सिद्धांत कोश" ग्रंथ में से साभार....)

९. चलिए ! पृथ्वी की जानकारी प्राप्त करते हैं.... वैज्ञानिकों के मुख से.....

- 'जो दिख रही है वह पृथ्वी है.....' यह बात अब वैज्ञानिकों की असत्य बन गई हैं। कारण की, अमेरिकन डॉ. ब्रुके अपनी पृथ्वी जैसी दूसरी अन्य १० करोड़ पृथ्वी बता रहे हैं। यह अहेवाल (बात) ''धर्मयुग'' हिन्दी दिनांक : ०८/०७/१९६७ के अंक में प्रगट हुआ था।
- ''अमेरिकन इन्फर्मेशन सर्विस'' के द्वारा बाहर आता ''पाक्षिक बुलेटिन'' दिनांक : ०४/११/१९६३ के अंक में इस ब्रह्मांड में अनेक पृथ्वियाँ हैं यह बात साबित की हैं।
- रशियन वैज्ञानिकों भी अब जितनी पृथ्वी दिख रही है उतने ही मापवाली अन्य १,००,००,००० (एक करोड़) पृथ्वी का अस्तित्व स्वीकार रहे हैं।
- रशियन वैज्ञानिक के द्वारा जाहिर हुआ है कि - उत्तरध्रुव के तरफ रडार द्वारा दूसरा २५,००० (पच्चीस हजार) माईल का प्रदेश भासमान हो रहा है।
- न्युयोर्क के हावर्ड वैधशाला के खगोल विज्ञानी डॉ. हालो शेपली के मतानुसार.... १०,००,००,००० (दस करोड़) से भी अधिक ग्रहों पर घास, वृक्ष, पानी एवं जीवादि रहेते होंगे, उसमें भी बहुत से स्थानों पर तो सुविकसित ऐसे बुद्धिशाली प्राणीयों का भी अस्तित्व होगा।
- डॉ. एस. मिलर जीवरसायण शास्त्री की ऐसी धारणा है कि पृथ्वी से भी अन्य ताराओं के ग्रह पर जीवन अस्तित्व में आये ऐसी ज्यादा अनुकूलता होने से वहाँ ज्यादा झडप (स्पीड) से जीवन प्रादुर्भाव हुआ होगा।(इनकी मान्यता से १,००,००० ग्रहों पर अपने से भी ज्यादा विकसित प्रजा रहती होगी...।)
- खगोलीय वैज्ञानिक विली ले कहते हैं कि केवल अपनी आकाशगंगा में ही ३० अबज ताराओं का अस्तित्व है। उसमें भी १८ अबज जितने तारों में प्लेनेटरी सिस्टम होगी। उसमें भी १८ लाख जितने ग्रहों पर जीवसृष्टि होगी और उसमें भी १८,०००जितने ग्रहों पर तो मानवी से ज्यादा बुद्धिशाली प्रजा का वसवाट (अस्तित्व) होगा।
- उसी तरह रशिया के खगोलशास्त्री **I.S.** श्क्लेवेस्किए द्वारा एक सुंदर पुस्तक लिखी गई है जिसका नाम है **"Intelligent Life In The Universe"** उसमें यह बतातें है कि अपनी आकाशगंगा में लगभग १०,००,००० (दश लाख) जितने ऐसे ग्रह हैं कि जिसमें पृथ्वीवासी जैसे ही विकसित लोग रहेते होंगे।
- जैनशासन तो वर्तमान में दिखती पृथ्वी से असंख्यगुणी पृथ्वी की मान्यता को अनादिकाल से धारण किए बैठा है उसमें भी असंख्य द्वीप-समुद्र तथा असंख्य सूर्य-चंद्र वगैरह की बात सिद्ध करता हैं....। जो वैज्ञानिक अब दूसरी पृथ्वियों को भी मानते हुए हैं अर्थात् उनके लिए अब पृथ्वी का आकार गोल गेंद **(Ball)** जैसा जो कल्पा था उसे बदलना पड़ेगा...। इस पृथ्वी से अन्य भी पृथ्वियों का अस्तित्व है इस बात में अब वैज्ञानिकों का भी समर्थन होने लगा है... जो जैनशासन के लिए एक आनंद की बीना है।

१०. अमेरीका की "फ्लेट अर्थ सोसायटी" भी पृथ्वी को सपाट मानती हैं....

''पृथ्वी कैसी है ?'' शाला में अभ्यासरत किसी भी विद्यार्थी से यदि यह सवाल पूछा जाय तो उसका जवाब होगा - ''पृथ्वी नारंगी की तरह गोल है और वह सूर्य के आसपास प्रदक्षिणा करती है।''

विश्व की अधिकांश जनता इस मनः कल्पित मान्यता को स्वीकार कर चुकी है, फिर भी अमेरीका में एक विशाल वर्ग है जो आज भी मानता है कि पृथ्वी थाली जैसी गोल है, वह स्थिर है तथा सूर्य-चन्द्र उसके चारों और घूमते हैं। ऐसी समान मान्यता रखनेवाले लोगों ने मिलकर ''फ्लेट अर्थ सोसायटी'' नामक एक संस्था की स्थापना की है और वे अपनी स्वयं की एक पत्रिका भी प्रकाशित करते हैं।

इस ''फ्लेट अर्थ सोसायटी'' की स्थापना आज से पचास वर्ष पूर्व दक्षिण केलिफोर्निया में रहनेवाले सेमुअल शेन्टन नामक एक ब्रिटिशर ने की थी। सन् १९७१ में सेमुअल शेन्टन का निधन हो गया और उसके पश्चात् चार्ल्स के. जान्सन उसके प्रमुख बने। उन्नीसवीं सदी में ब्रिटेन में ''यूनिवर्सल झेटेटिक सोसायटी'' थी, उसकी पृथ्वी के सम्बन्ध में जो मान्यताएँ थीं, उन्हें विकसित करने का कार्य यह सोसायटी आज कर रही है।

इस सोसायटी ने अपनी मान्यता के अनुसार सपाट पृथ्वी का एक नक्शा भी प्रस्तुत किया है। इस नक्शे में पृथ्वी के केन्द्र के रूप में उत्तर ध्रुव को दर्शाया गया है। थाली जैसी इस पृथ्वी के बाहर के भाग में बर्फ से आच्छादित अन्टार्कटिका खण्ड है, जिसके सिरे पर १५० फुट ऊँची ऐसी बर्फ की दीवार है जिसे पार नहीं किया जा सकता है।

इस दीवार की दूसरी ओर क्या है, इसकी कोई जानकारी सोसायटी के सदस्यों को नहीं है, ऐसा वे मानते हैं। वे यह भी मानते हैं कि सूर्य व चन्द्र का व्यास मात्र ३२ मील का ही है और वे भूमध्य रेखा पर पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर रहे हैं।

अमेरीका की फ्लेट अर्थ सोसायटी पृथ्वी, सूर्य व चन्द्र के बारे में जो भी मान्यता रखती है, उसके मूल में ईसाईयों का पवित्र ग्रंथ बाईबल है। ओल्ड टेस्टामेन्ट के कई उद्धरण यही दर्शाते हैं कि पृथ्वी सपाट है। चार्ल्स जान्सन का कहना है कि ''कोपरनिकस का पृथ्वी को गेंद जैसा मानने का सिद्धान्त ईसा मसीह के अपमान के समान है। यदि यह सच है तो फिर पूरी बाईबल ही एक बडा मजाक है।'' फिर भी चार्ल्स जान्सन कहते हैं कि -

''बाईबल नहीं बल्कि मैंने स्वयं की सामान्य बुद्धि से यह जाना है कि पृथ्वी समतल है। जब मैं विद्यालय में अध्ययन करता था, तब भी मुझे यह विचार आया था। आज भी दुनिया के कई प्रखर व्यक्ति मानते हैं कि पृथ्वी सपाट है तथा इस सोसाईटी की ओर से ''फ्लेट अर्थ न्यूज'' नामक पत्रिका भी प्रकाशित होती है।''

चार्ल्स के. जान्सन अपनी अत्यन्त रोचक दलील में यह भी कहते हैं कि ''ऐसे कई महानुभाव जिन्होंने दुनिया के इतिहास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, वे मानते थे कि पृथ्वी समतल है। मॉजिस उनमें से एक थे। वे इजरायल के बालकों को इजिप्त के बाहर ले गए और माउन्ट सिनाई पर उन्हें टेन कमान्डेन्टस दिए थे।'' यह वाकया (समाचार) सन् १४९१ का था, इसलिए चार्ल्स के. जान्सन का तो कहना है कि फ्लेट अर्थ सोसायटी की स्थापना तो सन् १४९१ में ही हो गई थी। फ्लेट अर्थ सोसायटी मानती है कि अमेरीका की सन् १४९२ में खोज करनेवाले क्रिस्टोफर कोलम्बस भी मानते थे कि पृथ्वी गोल नहीं बल्कि सपाट है। इसलिए उन्होंने नाव के द्वारा समुद्र में इतनी दूर तक प्रवास करने की हिम्मत जुटाई थी।

अमेरीका की फ्लेट अर्थ सोसायटी के सदस्य यह भी मानते हैं कि यूनान के दार्शनिक कोपरनिकस ने जो पृथ्वी के गेंद जैसी गोल होने की मान्यता प्रस्तुत की, उसे वास्तविक समर्थन इंग्लैन्ड के प्रोटेस्टेंट सुधारकों से ही मिला था। चार्ल्स के. जान्सन का यह भी कहना था कि अमेरीकन प्रमुख जार्ज वाशिंगटन भी मानते थे कि पृथ्वी सपाट है। उनके कथनानुसार संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना भी ''पृथ्वी सपाट है'' इस सिद्धान्त के आधार पर की गई थी। इसलिए संयुक्त राष्ट्र संघ के नक्शे में पृथ्वी को सपाट दर्शाया गया है और केन्द्र में उत्तर ध्रुव बताया गया है। वास्तविकता तो यह है कि संयुक्त राष्ट्र संघ का जो पृथ्वी का नक्शा है, उसका ही उपयोग फ्लेट अर्थ सोसायटी के सदस्य अपने सिद्धान्त के अनुसार की पृथ्वी के नक्शे के रूप में करते हैं।

चार्ल्स के. जान्सन कहते हैं कि - ''रूस व अमेरीका में जो अंतरिक्षीय कार्यक्रम प्रारंभ किया गया, वह इस धारणा को समर्थन

देने के लिए ही प्रारंभ किया गया था कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है।'' सन् १९६९ में अमेरीका ने जो नाटक किया वह भी पूरी तरह झूठा था। हॉलीवुड के एक स्टुडियो में चन्द्रमा पर अपोलो यान के उतरने की शूटिंग की गई। इस पूरे नाटक के संवाद लेखन का कार्य आर्थर सी. क्लार्क नामक एक विज्ञान-लेखक द्वारा किया गया।

इन दिनों स्पेस शटल के जो कार्यक्रम किए जा रहे हैं वे मात्र लोगों की आँखों में धूल झोंकने के लिए ही है। यह स्पेस शटल पृथ्वी के चारों और प्रदक्षिणा कर सकता है, यह पूरी तरह असंभव है, क्योंकि पृथ्वी गेंद जैसी गोल नहीं है।

पृथ्वी थाली जैसी सपाट है, लेकिन वह गेंद जैसी गोल नहीं है, ऐसा मानने वाले मात्र बाईबल जैसे ग्रंथों के आधार पर ही आगे बढ़ रहे हैं .... ऐसा नहीं है। अपनी मान्यता के समर्थन में उन्होंने ऐसे कई वैज्ञानिक तर्क प्रस्तुत किए हैं, जिससे बुद्धिमान व्यक्ति भी हतप्रभ हो जाते हैं। फ्लेट अर्थ सोसाइटी की ओर से जो वैज्ञानिक तर्क हैं, उनमें से पाँच मुख्य मुद्दे निम्नानुसार हैं।

१. पृथ्वी स्थिर है यह वैज्ञानिकों ने ही प्रयोगों के द्वारा सिद्ध किया है

विज्ञान की दृष्टि से किसी भी प्रकाश या विद्युतीय चुम्बकीय तरंगों को प्रवाहित होने के लिए माध्यम की जरूरत रहती है। वैज्ञानिक स्वयं ही मानते थे कि अवकाश (आकाश) ईथर नामक माध्यम से भरा हुआ है, जिसमें से प्रकाश आदि तरंगें गुजरती हैं। दो अमेरीकी वैज्ञानिकों ने सन् १८८७ में पृथ्वी के परिभ्रमण की गति को मापने के लिए प्रयोग किए थे। इस प्रयोग में पृथ्वी पर से प्रकाश की एक किरण छोडी गई और पृथ्वी की गति के कारण एक निश्चित समय में वह पृथ्वी से कितनी दूर रही, उसकी गणना की गई। यह प्रयोग ऐसा ही था, जैसे तेज दौड रही मोटरकार की गति मापने के लिए उसकी खिडकी में से एक गेंद हवा में उछाल दी जाय। इस प्रयोग के समय यह मान लिया गया था कि यदि अंतरिक्ष में ईथर जैसा कोई माध्यम होगा, तो प्रकाश की किरण अंतरिक्ष में टकराकर पुनः पृथ्वी पर आएगी और उसके आधार पर पृथ्वी की गति मालूम की जा सकेगी। इस पद्धति के द्वारा अमेरीकी वैज्ञानिकों ने अंतरिक्ष में पृथ्वी की गति करने की चाल को मापा तो वह आंकडा शून्य का प्राप्त हुआ।

इस परिणाम से अमरीकी वैज्ञानिक चौंक गए, क्योंकि उन्हें बताया गया था कि पृथ्वी सूर्य के चारों और प्रचण्ड वेग से घूम रही है। इस वास्तविकता को स्वीकार न करने के स्थान पर उन्होंने यह घोषित किया कि अंतरिक्ष में ईथर का अस्तित्व ही नहीं है और प्रकाश की किरणें बिना किसी माध्यम के अंतरिक्ष में गति करती हैं। अब यदि प्रकाश को तरंग माना जाता है, तो उन्हें आगे बढ़ने के लिए किसी न किसी माध्यम की आवश्यकता तो रहेगी ही। वैज्ञानिक आज भी इस मान्यता से चिपके हैं कि प्रकाश एक तरंग है, लेकिन साथ ही वे ईथर के अस्तित्व से भी इन्कार कर रहे हैं। ये दोनों स्थितियाँ एक साथ कैसे हो सकती है ?

२. पृथ्वी क्यों नहीं रुक जाती है ?

लाखों मील प्रति घंटे की गति से सूर्य के चारों और पृथ्वी के चक्कर लगाने की मान्यता को माननेवाले यह स्पष्टीकरण नहीं दे पाए कि यदि पृथ्वी अरबों वर्ष से इस प्रकार प्रदक्षिणा करती रही है तो वह फिर रुक क्यों नहीं जाती है ? न्यूटन की गति के प्रथम नियम के अनुसार गतिशील वस्तु यदि शून्यावकाश में हो तो वह अनन्तकाल तक

गतिशील ही रहेगी, लेकिन वैज्ञानिक तो मानते हैं कि अवकाश में ईथर भरा हुआ है। इस पदार्थ के साथ घर्षण के कारण पृथ्वी की गति कम हो जानी चाहिए और अंत में रुक जानी चाहिए। ऐसा क्यों नहीं होता है ? इसका जवाब किसी भी वैज्ञानिक के पास नहीं है।

३. हम क्यों नहीं गिर जाते हैं ?

एक लकडी के गोले के शीर्ष पर यदि कुछ अनाज के दाने रखे जाएँ तो कुछ दाने वहीं शीर्ष पर ही रह जाते हैं और शेष दाने नीचे गिर जाते हैं। इस प्रकार पृथ्वी यदि गेंद जैसी गोल हो तो उसके शीर्ष के कुछ भागों पर मानव बस्ती बस सकती है। इस गोले के ऊपर और नीचे तथा बाजू की और बसनेवाले लोग तो अंतरिक्ष में गिर ही जाना चाहिए, लेकिन ऐसा होता नहीं है। इसके लिए आधुनिक वैज्ञानिकों की दलील रहती है कि पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण केन्द्र में है, इसलिए सब पदार्थों को केन्द्र अपनी और खींचे रखता है और लोगों को गिरने से रोकता है। इस स्पष्टीकरण से चौथा प्रश्न उत्पन्न होता है।

४. गतिशील पदार्थ किस प्रकार पृथ्वी के केन्द्र बिन्दु की और आकर्षित हों सकता है ?

हम मान लेते हैं कि स्थिर पदार्थ पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण केन्द्र की और खिंचे रहते हैं, इसलिए नहीं गिरते हैं। अब विचार करें कि पृथ्वी के इस गोले पर अत्यन्त तेजी से दौड़ रहीं मोटरकारों और ट्रेनों के बारे में, जिस गति से वे पृथ्वी के गोले पर प्रवास कर रही हैं, उस गति से उन पर लागू पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण बल दिशा बदलेगा और वस्तु के अपने ध्रुवीकरण (पोलारिटी) में परिवर्तन आएगा, जो संभव नहीं है, इसलिए तेज गति में रहनेवाले पदार्थ, पृथ्वी के केन्द्र के गुरुत्वाकर्षण बल के प्रभाव से बाहर निकलकर अंतरिक्ष में घूमना चाहिए, लेकिन वास्तव में ऐसा होता नहीं है।

५. महासागरों का जल किस प्रकार पृथ्वी के गोले से चिपका रहता है ?

पानी सदैव सतह ढूंढता है। पानी को कभी भी गेंद के आकार में ढाल कर स्थिर नहीं रखा जा सकता है। फुटबाल पर यदि पानी की बूंदें गिराई जाएँ तो वे नीचे ही गिर जाएगी। तो इतने सब महासागरों के जल को किस प्रकार पृथ्वी गेंद के आकार में ढाल कर अपनी सतह पर पकड़ कर रख पाती होगी ? यह पानी यदि स्थिर हो तो उसे केन्द्रस्थ गुरुत्वाकर्षण बल के प्रभाव को माना जाय, लेकिन यहाँ तो महासागरों में सदैव ज्वार व भाटा आता ही रहता है। इस गतिशील तरल पदार्थ को गेंद के आकार में घूमने के लिए किस प्रकार बाध्य किया जा सकता है ?

लगभग एक हजार वर्षों से यह विवाद चल रहा है कि पृथ्वी थाली जैसी गोल है या वह गेंद जैसी गोल है। जिस प्रकार ईसाई धर्म की बाईबल में पृथ्वी को सपाट बताया गया है, उसी प्रकार मुसलमानों की कुरान व हिन्दुओं की भागवत में भी पृथ्वी को समतल ही दर्शाया गया है। जो पृथ्वी को गेंद जैसी गोल मानते हैं, वे आज भी प्रश्नों के तर्कयुक्त जवाब नहीं दे पाते हैं और इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि इस विषय के बारे में हमें भी अपना दिमाग खुला रखना चाहिए और किसी भी सिद्धान्त या मान्यता पर अपनी आँखें बन्द कर विश्वास नहीं करना चाहिए।

११. रहस्यमय उत्तर ध्रुव

आधुनिक वैज्ञानिकों का दावा है कि उन्होंने ज्ञात विश्व के समस्त प्रदेशों के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त कर ली है। यह दावा सत्य से परे हैं। आज भी पृथ्वी के ऐसे कई प्रदेश हैं, जिनका पूर्ण विवरण वैज्ञानिक अब तक प्राप्त नहीं कर पाए हैं। उत्तर ध्रुव व दक्षिण ध्रुव के प्रदेश इनके ज्वलन्त उदाहरण हैं।

ऐसा माना जाता है कि पृथ्वी का चुम्बकीय केन्द्र उत्तर ध्रुव पर है। इसलिए ही कुतुबनुमा की चुम्बकीय सुई सदैव उत्तर दिशा में ही रहती है। स्टीमर पर नियन्त्रण रखनेवाले कैप्टन दिशा की जानकारी मालूम करने के लिए इस कुतुबनुमा का ही प्रयोग करते हैं। उत्तर ध्रुव का प्रदेश पूरे वर्ष बर्फ से आच्छादित रहता है और वहाँ यात्रा करना अत्यन्त कठिन है। उत्तर ध्रुव के केन्द्र बिंदु के आसपास आर्कटिक समुद्र है। इस समुद्र के चारों और साईबीरिया, ग्रीनलैन्ड, अलास्का, आईसलैण्ड, नार्वे आदि देश-प्रदेश फैले हुए हैं। आज तक कोई भी इंसान इस उत्तर ध्रुव को पार कर दूसरी और के प्रदेश में नहीं जा सका है। यह हकीकत बताती है कि उत्तर ध्रुव के उत्तर-भाग में भी कोई अनजान क्षेत्र है, जिसके बारे में वैज्ञानिक आज तक कुछ भी नहीं जान पाए हैं।

पृथ्वी को गेंद जैसी गोल मानने वाले वैज्ञानिक, पृथ्वी के गोले पर उत्तर ध्रुव के एक ओर साईबीरिया और दूसरी ओर केनेडा का प्रदेश बताते हैं। यह मान्यता भ्रम उत्पन्न करती है। वास्तव में रूस का साईबीरिया भाग, अलास्का, ग्रीनलैण्ड, केनेडा, नार्वे, आईसलैण्ड प्रदेश उत्तर ध्रुव की दक्षिण, पूर्व व पश्चिम दिशा में स्थित हैं। इनमें से कोई भी प्रदेश उत्तर ध्रुव के उत्तर में नहीं है। यदि वास्तव में ऐसा होता तो विमान में बैठ कर उत्तर ध्रुव की उत्तरी दिशा में प्रवास कर रूस से केनेडा और यूरोप से अमेरीका की यात्रा की जा सकती थी, लेकिन आज तक कोई भी इस प्रकार की मुसाफिरी नहीं कर सका है। इससे मालूम होता है कि आज भी कोई भी मनुष्य उत्तर ध्रुव की उत्तर दिशा में नहीं जा सकता है।

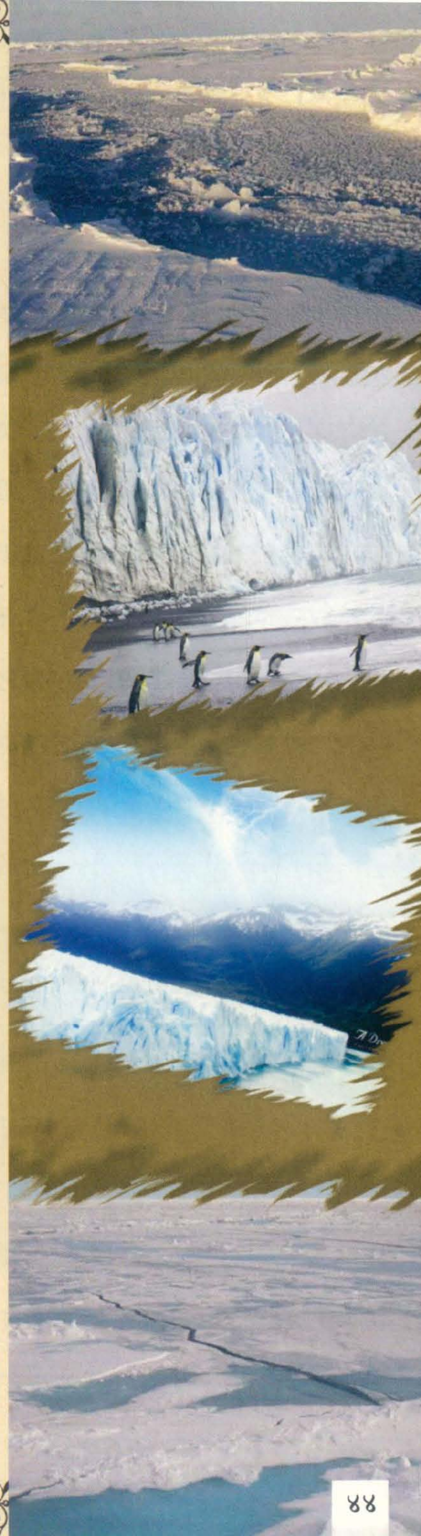

जरेरड्स मर्केटर नामक भूगोलशास्त्री (सन् १५१२-९४) पृथ्वी का नक्शा बनाने के लिए जगप्रसिद्ध था। उसने जिस पद्धति से नक्शे बनाए, उसे मर्केटर सिस्टम के नाम से जाना जाता है। आज भी पृथ्वी के नक्शे बनाने के लिए इस प्रणाली का उपयोग किया जाता है। अपने अनेक नक्शों में मर्केटर ने उत्तर ध्रुव का प्रदेश दर्शाया है। आधुनिक वैज्ञानिक मानते हैं कि आर्कटिक समुद्र के बीच, उत्तर ध्रुव बिन्दु स्थित है और उसके आसपास बिलकुल भी जमीन नहीं है। वैज्ञानिकों की कल्पना के उत्तर-ध्रुव में व मर्केटर के नक्शों में दर्शाए उत्तर ध्रुव में जमीन-आसमान का फर्क है। मर्केटर के नक्शों में उत्तर ध्रुव बिन्दु पर एक ऊँचा विराट पर्वत दर्शाया गया है, जिसका रंग काला है। यह पर्वत चुम्बकीय पत्थर का बना है और पृथ्वी का चुम्बकीय केन्द्र उसमें दर्शाया गया है। मर्केटर के नक्शों में उत्तर ध्रुव पर जो पर्वत दर्शाया गया है, वह चारों और पानी से घिरा हुआ है। इस जल में चार बड़े टापू हैं, जो उत्तर ध्रुव के आसपास वर्तुलाकार जमे हुए हैं। इन चारों टापुओं के दक्षिणी हिस्से में पर्वतों की श्रृंखला है। इन टापुओं की रचना चार बड़ी नदियों के द्वारा हुई है, जो उत्तर ध्रुव की चारों दिशाओं में बह रही हैं। उत्तर ध्रुव बिन्दु पर उत्तर, पश्चिम या पूर्व दिशा का अस्तित्व ही नहीं है। इस केन्द्र की चारों दिशाओं में मात्र दक्षिण दिशा ही मानी जाती है। उत्तर ध्रुव को चारों और से उत्तर ही माना जाता है।

मर्केटर के वर्णन के अनुसार पृथ्वी पर के समस्त समुद्रों का पानी इन चार नदियों के द्वारा उत्तर ध्रुव की ओर खिंच जाता है। यह पानी पर्वत की तलहटी में स्थित किसी गहरे रिक्त स्थान में गायब हो जाता है। मर्केटर बताते है कि इन टापुओं पर चार फुट की ऊँचाई वाले बौने मनुष्यों की बस्ती है।

उत्तर ध्रुव बिन्दु पर आर्कटिक समुद्र के स्थान पर ऊँचा पर्वत दिखाने के मामले में मर्केटर कोई अपवाद नहीं है। सोलहवीं सदी में नक्शे बनानेवाले अन्य कई प्रसिद्ध भूगोलशास्त्रियों ने भी मर्केटर के नक्शों से मिलते-जुलते नक्शे उत्तर ध्रुव के बारे में बनाए हैं। मर्केटर के जन्म के भी पहले अवसान प्राप्त मार्टिन बैहैम नामक वैज्ञानिक द्वारा बनाए गए नक्शे में भी उत्तर ध्रुव के चारों और जमीन दर्शाई गई है। सन् १४९२ में बनाए गए इस नक्शे में यूरोप के उत्तर में दो बड़े टापू दर्शाए गए हैं। इसके साथ ही उत्तर ध्रुव के आसपास चार टापू दर्शाए गए हैं। ये भूगोलशास्त्री कहते हैं कि इन चार टापुओं के आसपास बहने वाला नदियों का पानी जमीन में शोषित हो जाता है। इस नक्शे में चार मुख्य टापूओं के आसपास अगणित छोटे टापू दिखाई देते हैं जो पहाडियों से घिरे हुए हैं। सोलहवीं सदी में प्रकाशित अगणित नक्शों में भी इसी प्रकार के टापूओं से घिरे उत्तर ध्रुव की प्रस्तुति हुई है।

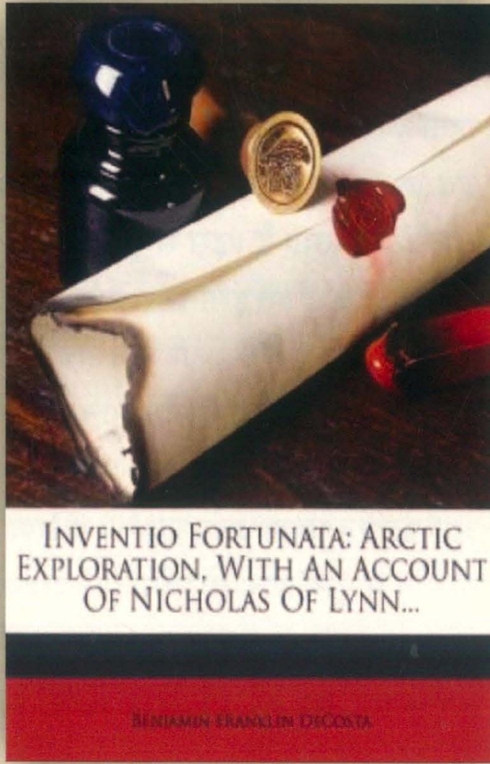

तेरहवीं सदी में कुतुबनुमा यंत्र की शोध हुई और तब से माना जाने लगा कि पृथ्वी के उत्तरी ध्रुव में चुम्बकीय पत्थरों से बना एक विराट पर्वत है। लेकिन मर्केटर ने किस आधार पर वह नक्शा बनाया, जिसमें यह पर्वत पानी तथा चार टापुओं से घिरा हुआ है? उसने किस आधार पर यह लिखा कि टापू के आसपास की नदियों का पानी उत्तर ध्रुव की ओर बहता है और टापुओं पर बौने बसते है? मर्केटर का कहना है कि सन् १३६० के आसपास आक्सफोर्ड के एक गणितज्ञ ने नाव में बैठकर उत्तर ध्रुव प्रदेश का प्रवास किया था। इस प्रवास का वर्णन ''इन्वेन्टियो फारटूनेटा'' नामक पुस्तक में किया गया था। यह

पुस्तक तो इस समय उपलब्ध नहीं है लेकिन उसके आधार पर मर्केटर ने उत्तर ध्रुव का जो वर्णन किया है वह हमारे पास उपलब्ध है। मर्केटर के अनुसार सन् १३६० में उत्तर ध्रुव की ओर प्रवास करने वाले गणितज्ञ का नाम निकोलस डी. लिन्ना था लेकिन इस प्रकरण पर वैज्ञानिकों में मतभेद है।

फ्रिडजोफ नेन्सन नामक लेखकने अपनी ''हेवरगेल्मर'' नामक पुस्तक में लिखा है कि - ''उत्तर ध्रुव के पास के समुद्र में एक भंवर है और उसमें से पानी बाहर आने पर ज्वार आता है और पानी के अंदर जाने पर भाटा आता है।''

लेखक पोलस वार्नेफिदी (सन् ७२०-९०) ने अपनी पुस्तक ''लोंगोबोर्ड'' में वर्णन किया है कि - ''पश्चिम दिशा में समुद्र विशाल है और वहाँ एक मोटी खाई है, जिसे हम समुद्र की नाभि की रूप में समझ सकते हैं। यह खाई दिन में दो बार समुद्र के पानीं को अपने अन्दर चूस लेती है और दो बार ही पानी अपने आन्तरिक भाग में से बाहर निकाल भी देती है। सभी समुद्री किनारों पर यह क्रिया देखी जा सकती है। हमने जिस भंवर की बात की, उसमें जहाज तीर की तरह खिंच जाते हैं और कभी वह पूरी तरह नष्ट भी हो जाते हैं। कई बार तो वे जितनी तीव्रता से अन्दर खिंच जाते हैं, उतनी ही शीघ्रता से वे बाहर भी फिंक जाते हैं।'' ऐसा माना जाता है कि इन लेखकों द्वारा किए गए वर्णन के आधार पर ही मर्केटर ने सोलहवीं सदी में उत्तर ध्रुव का नक्शा बनाया था। पुस्तक ''इन्वेन्टियो फारटूनेटा'' में उत्तर ध्रुव के भूगोल का जिस प्रकार वर्णन किया गया था, उसका प्रभाव १५० वर्ष तक बने हुए नक्शों पर भी रहा।

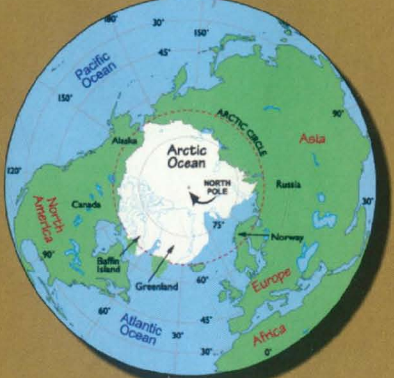

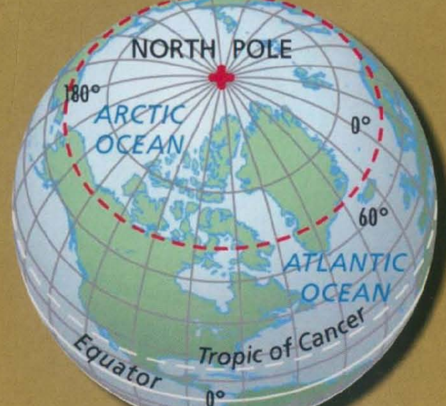

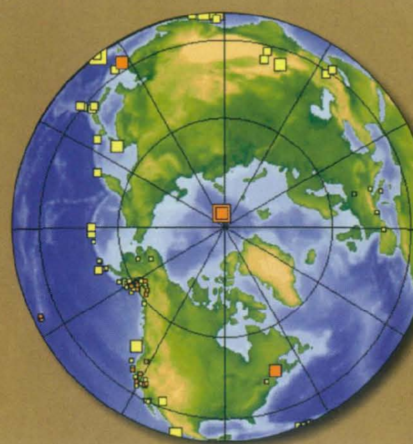

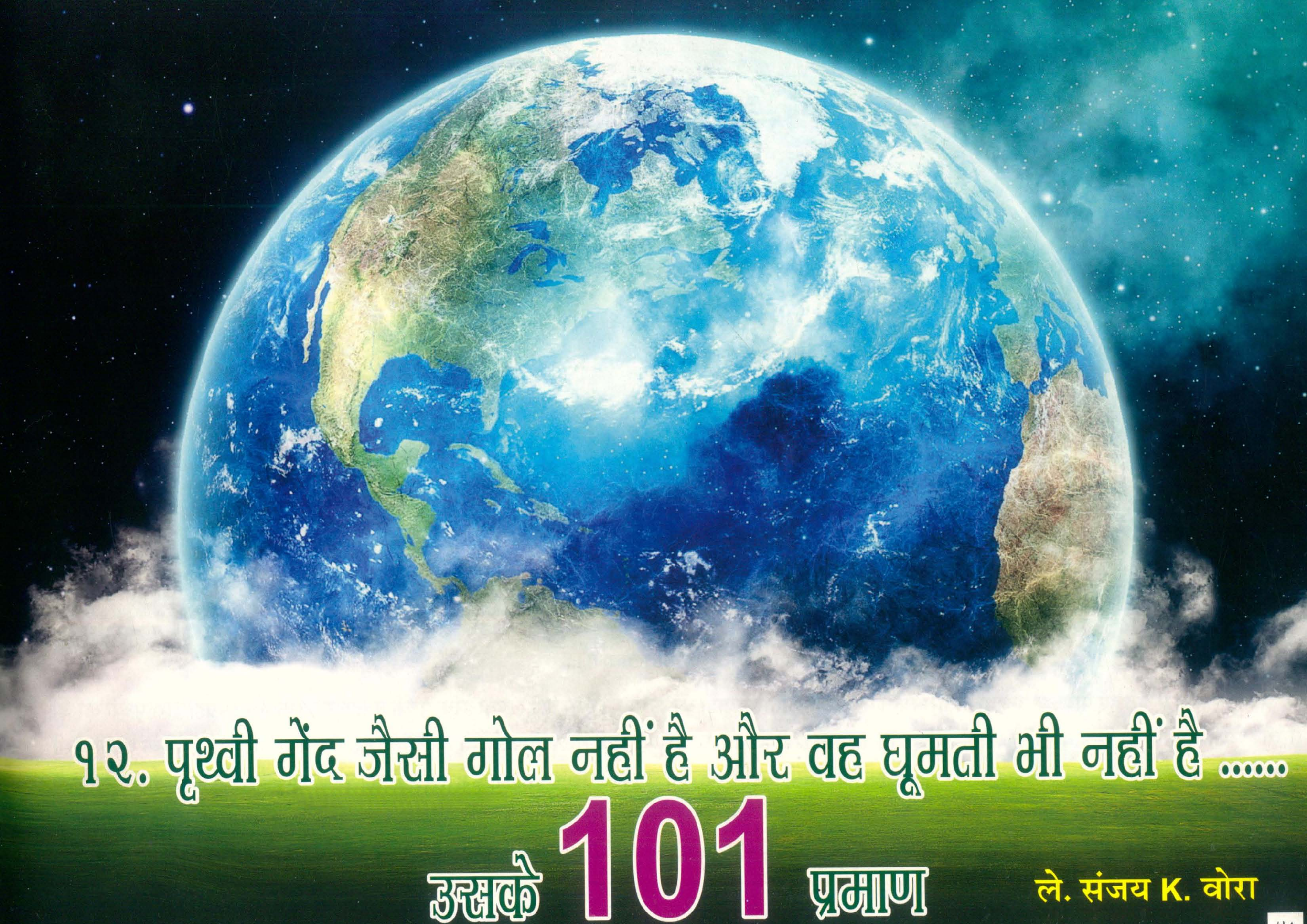
१२. पृथ्वी गेंद जैसी गोल नहीं है और वह घूमती भी नहीं है ......
उसके 101 प्रमाण
ले. संजय K. वोरा

(1) अंतरिक्षयात्रियों के अवलोकन.....

हवाई जहाज में बैठे हुए पायलट अथवा अंतरिक्षयान में बैठे हुए अंतरिक्षयात्री को कभी भी ऐसा नहीं लगता है कि पृथ्वी उन्नतोदर है। कृत्रिम उपग्रहों द्वारा पृथ्वी की जो तस्वीरें भेजी जाती हैं, वे त्रिआयामी नहीं होती, बल्कि द्विआयामी होती हैं। इन तस्वीरों में पृथ्वी गोल दिखाई देती है, लेकिन वह गेंद जैसी गोल नहीं, बल्कि थाली जैसी गोल होती है। पृथ्वी को गेंद जैसी गोल सिद्ध करने के लिए त्रिआयामी तस्वीरें खींचना चाहिए। यद्यपि आज तक ऐसे कैमरों की शोध नहीं हुई है, जो त्रिआयामी तस्वीरें ले सकें। अंतरिक्ष में कैमरे के द्वारा जो तस्वीरें ली जाती हैं, उनमें पृथ्वी थाली जैसी गोल दिखाई देती है, लेकिन उसका कारण इतना ही है कि कैमरे के लेन्स की मर्यादा सभी दिशाओं में एक समान होती है, इसलिए उसकी सीमाएँ स्वाभाविक रूप से गोलाकार बन जाती हैं। इसी प्रकार हमारी आँख की दृष्टि-मर्यादा से अधिक कोई भी बड़ी चीज हमें गोलाकार ही दिखाई देती है। इस प्रकार कृत्रिम उपग्रहों की तस्वीरों के द्वारा भी पृथ्वी को गेंद जैसी या नारंगी जैसी गोल सिद्ध नहीं किया जा सकता है।

(2) पानी की सतह उन्नतोदर नहीं.....

जब भी पानी की स्थिर सतह पर प्रयोग किए जाते हैं, तब वह सतह हमेशा समतल ही दिखाई देती है। यदि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है तो स्थिर पानी की सतह उन्नतोदर होना चाहिए, लेकिन ऐसा दिखाई नहीं देता है। इस प्रकार के प्रयोग कर भी यह सिद्ध किया जा सकता है कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल नहीं है। साथ ही पानी सदैव एक ही सतह पर रहने के कारण वह उन्नतोदर नहीं रह सकता है। सपाट सतह गेंद जैसी नहीं हो सकती है।

(3) रेलवे के निर्माणकार्य में भी पृथ्वी सपाट मालूम होती है.....

जब भी लम्बी रेलवे लाईन बिछाई जाती है, सड़क बनाई जाती है या नहर खोदी जाती है तब उसकी डिजाईन बनाने वाले इंजीनियर कभी भी डिजाईन तैयार करते समय पृथ्वी के गोलाकार भाग को गणना में नहीं लेते हैं, बल्कि सपाट कागज पर सपाट जमीन की डिजाईन ही बनाते हैं, क्योंकि उन्हें मालूम है कि पृथ्वी की सतह उन्नतोदर नहीं है बल्कि सपाट ही है।

(4) नदी में आरोह-अवरोह दिखाई नहीं देते हैं.....

दुनिया में ऐसी कई नदियाँ हैं, जो सैकड़ों मील लम्बी हैं। भारत में गंगा, नर्मदा व गोदावरी जैसी नदियाँ जब समुद्र में मिलती हैं, तब ऐसा नहीं लगता है कि पृथ्वी का उन्नतोदर भाग ऊपर से नीचे गिर रहा हो। इजिप्त की नील नदी की लम्बाई एक हजार मील की है, लेकिन उसमें कहीं भी आरोह-अवरोह दिखाई नहीं देते हैं। यदि पृथ्वी गेंद जैसी गोल हो तो यह संभव नहीं है।

(5) प्रकाशस्तंभ दूर से दिखाई देते है.....

विश्व में ऐसे कई प्रकाशस्तंभ हैं जिन्हें ६०-६५ मील दूर से देखा जा सकता है। इतनी लंबाई में यदि पृथ्वी के गोलाकार भाग की ऊँचाई को ध्यान में लिया जाय तो वह सैकडों फुट की हो जायगी। केप हेटेरास नामक बंदरगाह का प्रकाशस्तंभ ४० मील दूर से देखा जा सकता है। यदि पृथ्वी उन्नतोदर हो, तो यह प्रकाशस्तंभ समुद्र के क्षितिज से ९०० फुट नीचे होना चाहिए। यह प्रकाशस्तंभ ४० मील दूर से इसलिए देखा जा सकता है, क्योंकि पृथ्वी उन्नतोदर नहीं बल्कि सपाट है।

(6) समुद्र तट पर स्टीमर का अवलोकन.....

यदि हम समुद्र किनारे खडें रहकर अपनी ओर आ रहे स्टीमर को निहारें, तो मालूम होगा कि वह जैसे-जैसे नजदीक आएगा, उसकी ऊँचाई में वृद्धि होती जाएगी। यदि हम कुछ ऊँचाई पर जाकर स्टीमर को देखेंगे, तो यही परिणाम हमें देखने को मिलेगा। इसका कारण पृथ्वी का गोलकार होना नहीं है, बल्कि दृष्टिसापेक्षता के नियम के कारण ऐसा होता है। इस नियम के अनुसार हमें नजदीक की वस्तु बड़ी दिखाई देती है और दूर की वस्तु छोटी दिखाई देती है। इस नियम के कारण ही समुद्र में जब हम ऊँचाई पर जाते हैं, तब हमें क्षितिज भी हमारी आँख के स्तर से ऊपर उठता हुआ दिखाई देता है। यदि समुद्र में पाँच मील दूर से आ रहे स्टीमर को हम देखें तो ऐसा दिखाई देगा, मानो वह कोई ढाल-चढ़ रहा हो। अब यदि हम समुद्र किनारे की किसी छोटी पहाड़ी पर चढ़ जाएँ, तब हम समुद्र में २५ मील दूर तक देख पाएगे। यह भाग यदि पृथ्वी के गोलाकार भाग से वास्तव में नीचे हो तो पहाड़ी पर से भी वह हमें दिखाई नहीं देगा। इस प्रकार स्टीमर का अवलोकन करने से यह सिद्ध नहीं होता है कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है।

(7) स्टीमर पर ऐसा क्यों होता है ?.....

कोई भी स्टीमर जब समुद्र में दूर से आ रहा हो, तो पहले उसका धुआं दिखाई देता है, फिर उसकी चिमनी दिखाई देती है, इसके बाद उसका बीच का भाग दिखाई देता है, फिर उसका मस्तूल दिखाई देता है और अन्त में उसका नीचे का तल दिखाई देता है। इसके लिए कहा जाता है कि पृथ्वी के गोलकार में से यह आ रहा है और उस वजह से ऐसा होता है। हकीकत में यह मात्र हमारा दृष्टिभ्रम है। इसके लिए पृथ्वी का तथाकथित गोलाकार भाग जवाबदेह नहीं है। जब नंगी आंखों से हमें दूर से आ रहे स्टीमर का मात्र धुआं ही दिखाई देता हैं तब यदि हम शक्तिशाली दूरबीन के द्वारा इसे देखें, तब पूरा स्टीमर स्पष्ट दिखाई देगा। यदि स्टीमर का शेष भाग पृथ्वी के गोलकार भाग के नीचे छुपा हो, तो वह दूरबीन के द्वारा भी दिखाई नहीं देगा। इससे सिद्ध हो जाता है कि पृथ्वी सपाट है।

(8) खलासी पृथ्वी का गोला साथ नहीं ले जाते हैं.....

समुद्र के सफर पर जब खलासी निकलते हैं, तब वे दिशाओं व स्थलों की जानकारी के लिए वे शालाओं वाला पृथ्वी का गोला (ग्लोब) साथ नहीं ले जाते हैं बल्कि वे अपने साथ नक्शा रखते हैं। ये नक्शे सपाट कागज पर खींचे हुए होते हैं, क्योंकि समुद्र को खेनेवाले (नाव चलानेवाले नाविक) खलासियों को मालूम होता है कि पृथ्वी सपाट है। यदि पृथ्वी के गोले के आधार पर वे अपना जहाज ले जाएँ, तो जहाज का पता भी नहीं लगेगा। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी सपाट है।

(9) नक्शे भी सपाट होते हैं.....

समुद्री मुसाफरी के लिए जो नक्शे तैयार किए जाते हैं, उनमें अक्षांश, देशांश, नगर आदि दर्शाए जाते हैं, लेकिन उनमें कहीं भी पृथ्वी के गोलकार भाग को गणना में नहीं लिया जाता है। ये नक्शे सिद्ध करते हैं कि पृथ्वी सपाट है।

(10) कुतुबनुमा यंत्र भी पृथ्वी के सपाट होने का प्रमाण है.....

किसी भी कुतुबनुमा को जब स्थिर सतह पर रखा जाता है, तब उसका ऊपर का छोर उत्तर ध्रुव की ओर तथा नीचे का छोर दक्षिण की ओर होता है। यदि उत्तर व दक्षिण ध्रुव एक ही सतह पर हों, तब ही कुतुबनुमा की सुई एक साथ उत्तर व दक्षिण दिशा बता सकेगी। यदि पृथ्वी गेंद जैसी गोल हो और गेंद पर कुतुबनुमा की सुई रखी जाय तो सुई एक साथ कभी भी उत्तर व दक्षिण दिशा नहीं बता सकेगी। मानो कि सुई का एक छोर उत्तर दिशा में हो तो दूसरा छोर दक्षिण में नहीं, बल्कि आकाश की ओर होगा। यदि ऐसा माने के नीचे का छोर दक्षिण दिशा में हो तो ऊपर का छोर आकाश पर होना चाहिए। ऐसा नहीं होता है, क्योंकि पृथ्वी सपाट है और उसके दोनों ध्रुव एक ही समतल पर हैं।

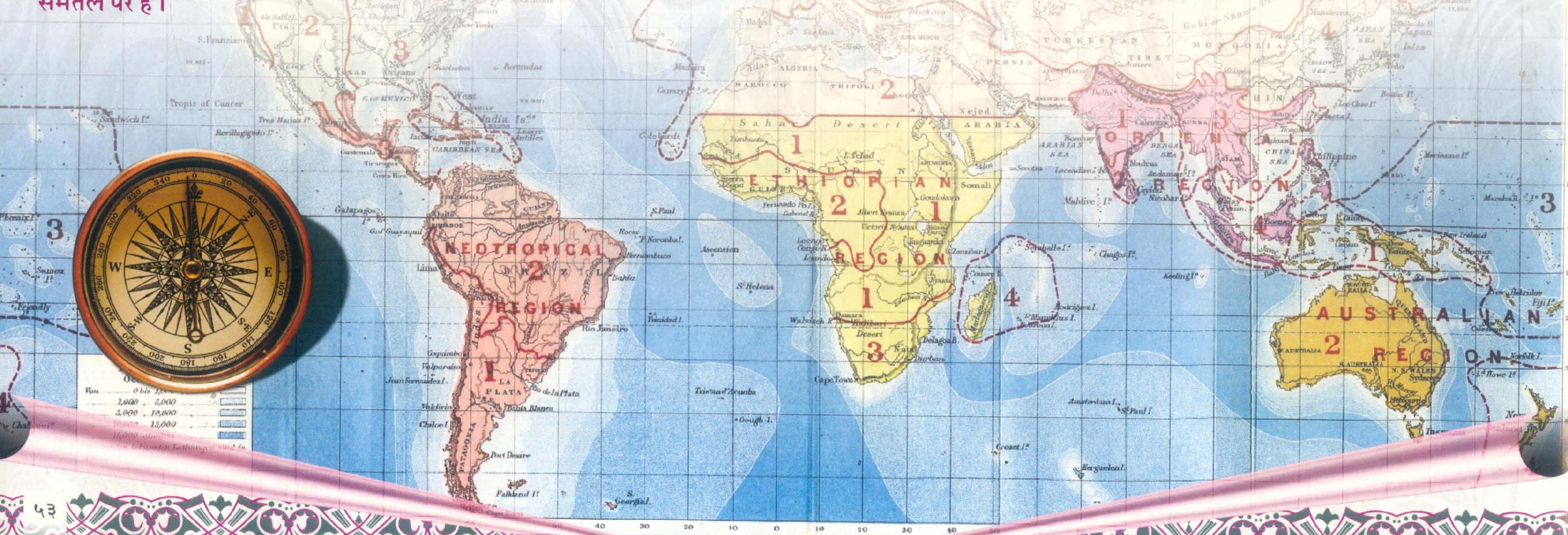

(11) दक्षिण ध्रुव का अस्तित्व ही नहीं है.....

कुतुबनुमा की सुई एक साथ उत्तर व दक्षिण दिशा बताती है, इससे भी सिद्ध होता है कि पृथ्वी सपाट है। हकीकत यह है कि पृथ्वी का उत्तर दिशा में जो केन्द्र है, उसे उत्तर ध्रुव माना जाता है। दक्षिण दिशा में पृथ्वी का कोई केन्द्र नहीं है, इसलिए दक्षिण ध्रुव का कोई अस्तित्व ही नहीं है। इसलिए कोई भी वैज्ञानिक या समुद्र-प्रवासी कभी भी दक्षिण-ध्रुव तक नहीं पहुंचा है। हम जिसे दक्षिण ध्रुव मानते हैं, वह वास्तव में उत्तर ध्रुव की विपरीत दिशा है। पृथ्वी के जितने भाग में हमें उत्तर ध्रुव का तारा दिखाई देता है, उसे हम उत्तर गोलार्ध कहते हैं। वास्तव में वह उत्तर का सपाट प्रदेश है। जहाँ ध्रुव का तारा दिखाई नहीं देता है, उसे गलत रूप में दक्षिण गोलार्ध कहा जाता है। यह प्रदेश ध्रुव के तारे से अत्यन्त दूर है और वहाँ ध्रुव का तारा दिखाई नहीं देता है।

(12) दक्षिण में मात्र महासागर है.....

हमने पाया कि दक्षिण में कोई ध्रुव नहीं है। उत्तर ध्रुव से निश्चित दूरी पर स्थित बिंदु गोलाकार हालत में जम कर एक सपाट वृत्त बनाते हैं, जिसे हम भूल से इन दिनों दक्षिण ध्रुव कहते हैं लेकिन हकीकत यह है कि उत्तर ध्रुव की विपरीत दिशा में ऐसे असंख्य बिंदु हैं, जिन्हें हम भूल से दक्षिण ध्रुव मान बैठे हैं। ये सभी बिंदु कभी भी उत्तर की तरह किसी एक बिंदु पर एकत्रित नहीं होते हैं। दक्षिण में मात्र विराट महासागर है। इस उत्तर ध्रुव के आधार पर पूर्व ,पश्चिम व दक्षिण दिशाएँ तय होती हैं। जिधर सूर्य उदित होता है वह पूर्व दिशा होती है और जिधर वह अस्त होता है वह पश्चिम दिशा हो जाती हैं। पृथ्वी की प्रदक्षिणा का अर्थ वास्तव में उत्तर ध्रुव की प्रदक्षिणा ही होता है। यह सपाट पृथ्वी पर ही संभव है।

(13) देशांश सीधी रेखाएँ हैं.....

किसी भी कुतुबनुमा की सुई को जब स्थिर सतह पर रखा जाता है, तब वह एक साथ उत्तर व दक्षिण दिशाओं को दर्शाती है। इससे कहा जा सकता है कि उत्तर व दक्षिण दिशाओं को जोड़ने वाली सीधी रेखा एक ही समतल पर है। पृथ्वी के उत्तर व दक्षिण ध्रुव को जोड़ती रेखाएँ देशांश के नाम से जानी जाती हैं। ऊपरोक्त तर्कों से स्पष्ट है कि देशांश सीधी रेखा के स्वरूप में है। यदि किसी गोले पर उत्तर व दक्षिण को जोड़ने वाली रेखाएँ खींची जाएँ तो ये रेखाएँ सीधी नहीं बल्कि अर्धवृत्त के आकार में होती हैं। हम जो देशांश व्यवहार में पाते हैं वे अर्धवृत्त में न होकर सीधी रेखा में होते हैं। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल नहीं है।

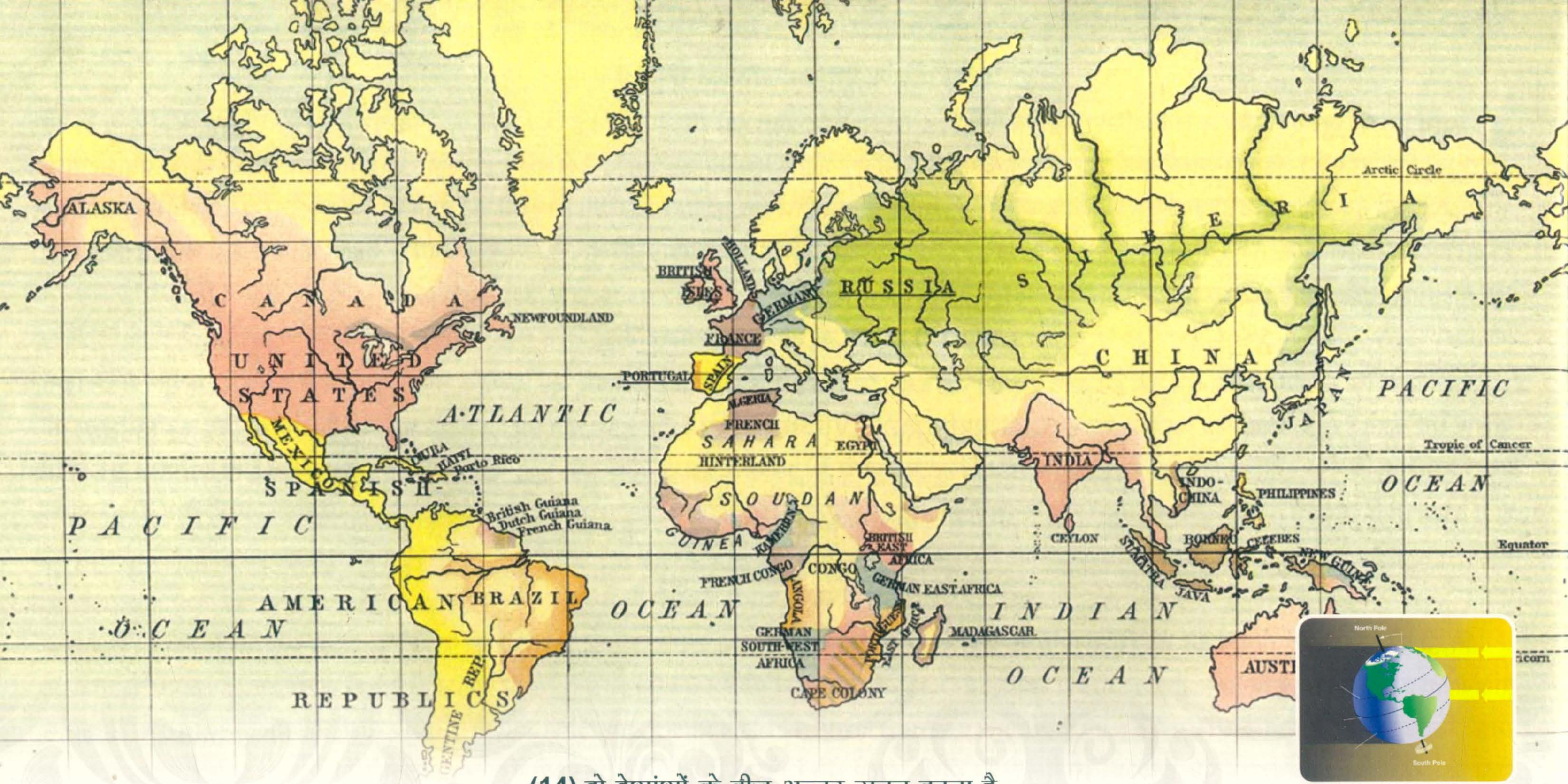

(14) दो देशांशों के बीच अन्तर सतत बढ़ता है.....

पृथ्वी के उत्तर ध्रुव बिंदु पर समस्त देशांश मिल जाते हैं, इसलिए दो देशांशों के बीच का अन्तर शून्य हो जाता है। उत्तर ध्रुव से भूमध्य रेखा की और दो देशांशों के बीच अन्तर सतत बढ़ता ही रहता है। पृथ्वी यदि गेंद जैसी गोल हो, तो भूमध्य रेखा के दक्षिण में दो देशांशों के बीच की दूरी पुनः कम हो जाना चाहिए और दक्षिण ध्रुव के बिन्दु पर यह अन्तर पुनः शून्य हो जाना चाहिए। हकीकत में ऐसा नहीं होता है। वास्तविकता तो यह है कि भूमध्य रेखा के दक्षिण में भी दो देशांशों के बीच का अन्तर सतत बढ़ता ही रहता है। हम पहले जान चुके हैं कि दक्षिण ध्रुव का अस्तित्व नहीं है। इसलिए दक्षिण ध्रुव पर समस्त देशांशों के एकत्रित होने का कोई प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता है। पृथ्वी गेंद जैसी गोल है, इस सिद्धान्त के आधार पर जो नक्शे तैयार किए गए हैं, उन नक्शों के आधार पर समुद्र में यात्रा पर जाने वाले जहाज टकराते रहते हैं, जिससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी सपाट है।

(15) पृथ्वी के आरपार नहीं निकला जा सकता है.....

आज के वैज्ञानिकों का मत है कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है और उसका व्यास लगभग १२,७०० किलोमीटर है। यदि यह अनुमान सच हो तो पृथ्वी के एक छोर पर यदि १२,७०० किलोमीटर का भूगर्भ मार्ग खोदा जाय तो पृथ्वी के गोले की दूसरे ओर वह निकल जाना चाहिए। आज तक वैज्ञानिक ऐसा बोगदा नहीं खोद सके हैं, जिससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी का आकार गोले जैसा नहीं है। माना कि वैज्ञानिक बोगदा नहीं खोद सकते हैं, लेकिन वे लेसर किरणें तो आरपार भेज ही सकते हैं। ऐसा करने में भी वैज्ञानिकों को कोई सफलता नहीं मिली है। अब वैज्ञानिकों ने हिडन फोटोन नामक प्रकाशकणों की शोध की है, जो दीवार के आरपार निकल जाते हैं। ये हिडन फोटोन पृथ्वी के आरपार नहीं जा सकते हैं, जिससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गेंद जैसी नहीं है।

(16) पृथ्वी की प्रदक्षिणा के दौरान मिलने वाले प्रमाण....

कोई व्यक्ति यदि उत्तर ध्रुव को केन्द्र में रखकर पूर्व या पश्चिम दिशा में सतत प्रवास करे तो वृत्ताकार मार्ग पर वह अपने मूल स्थान पर पुनः आ सकता है। इसके लिए पृथ्वी का गेंद की तरह गोल होना जरूरी नहीं है। यदि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है तो उत्तर व दक्षिण गोलार्ध पर किसी विशेष अक्षांश पर उसका घेराव एक जैसा होना चाहिए। माना कि कोई व्यक्ति ४५ डिग्री उत्तर अक्षांश पर पृथ्वी की प्रदक्षिणा करता है, तो कुछ दूरी तय करने के पश्चात् उसे अपने मूल स्थान पर आ जाना चाहिए। अब यही व्यक्ति यदि ४५ डिग्री दक्षिण अक्षांश पर पृथ्वी की प्रदक्षिणा करे, तो तब भी उसे उतनी ही दूरी तय करना चाहिए। लेकिन हकीकत यह है कि उत्तर अक्षांश की तुलना में दक्षिण अक्षांश पर उसे लगभग दुगुनी दूरी तय करना होती है, जिससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल नहीं बल्कि सपाट है।

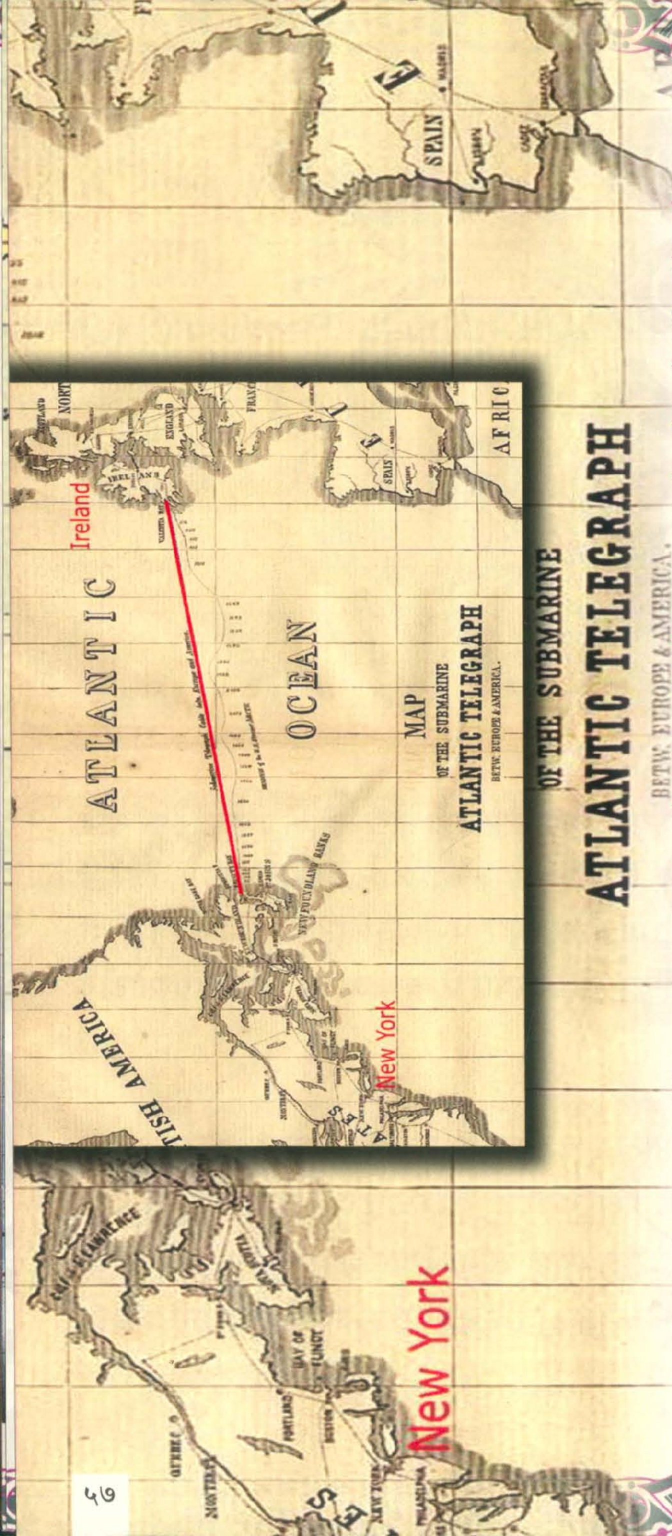

(17) हमारी नजर गलत नहीं.....

सृष्टि और उसके स्वरूप को निहारने के लिए कुदरत ने हमें आँखें दी हैं। अपनी स्वंय की आंखों से हम पृथ्वी का जो स्वरूप निहारते हैं, वही उसका वास्तविक स्वरूप है। हम किसी विशाल मैदान पर खड़े रहकर जब अवलोकन करते हैं, तो जमीन हमें उन्नतोदर दिखाई नहीं देती है, बल्कि सपाट ही दिखाई देती है, क्योंकि वह वास्तव में सपाट ही है। हम समुद्र तट पर खड़े रहकर जब पानी की सतह की ओर देखते हैं, तब वह भी सपाट ही दिखाई देती है, क्योंकि वह सपाट है। अंतरिक्ष में जाने का दावा करने वाला, यदि कोई अंतरिक्षयात्री हमें छलने के लिए यदि कहता है कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है, तो वह बात हमें क्यों मान लेना चाहिए ? वैज्ञानिक कहते हैं कि बिना किसी प्रत्यक्ष सबूत के हमें कोई भी बात नहीं मान लेना चाहिए। पृथ्वी गोला जैसी है, इसका कोई प्रत्यक्ष प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

(18) पृथ्वी की उत्तर-दक्षिण प्रदक्षिणा नहीं होती है.....

आज तक जितने भी नाविकों अथवा पाइलटों ने पृथ्वी की प्रदक्षिणा करने का दावा किया है, उन्होंने पृथ्वी की पूर्व-पश्चिम प्रदक्षिणा ही की है और यदि पृथ्वी गेंद जैसी गोल न हो, तब भी उसकी सतह पर उत्तर ध्रुव को केन्द्र बना कर वर्तुलाकार प्रदक्षिणा की जा सकती है। पृथ्वी यदि गेंद जैसी गोल हो तो फिर पूर्व-पश्चिम प्रदक्षिणा की तरह ही उत्तर-दक्षिण प्रदक्षिणा भी आसानी से हो जानी चाहिए। आज तक कोई भी स्टीमर पृथ्वी की उत्तर-दक्षिण प्रदक्षिणा नहीं कर सका है। यदि पृथ्वी की उत्तर-दक्षिण प्रदक्षिणा करना हो तो उत्तर ध्रुव और तथाकथित दक्षिण ध्रुव के भी आरपार निकलना होगा। संभवतः तूफानी महासागरों के कारण स्टीमर उत्तर ध्रुव की प्रदक्षिणा न कर सके, लेकिन विमान को ऐसी प्रदक्षिणा करने से कौन रोक सकता है इससे साबित होता है कि पृथ्वी गोल नहीं है।

(19) एटलान्टिक टेलीग्राफ केबल के सबूत.....

यूरोप व अमेरीका खण्ड को संदेश-व्यवहार से जोड़ने के लिए एटलान्टिक महासागर में १,६६५ मील की लम्बाई का केबल बिछाया गया था। आयरलैंड के वेलेन्टिया से न्यू फाउन्डलैंड (अमरीका) के सेंट जान तक यह केबल डाला गया था। इस केबल को डालते समय जो सर्वे किया गया था, उसमें एटलान्टिक महासागर की सतह को उन्नतोदर नहीं बल्कि सपाट माना गया था। यदि पृथ्वी की सतह की गणना उन्नतोदर आधार पर की गई होती तो केबल की लम्बाई भी १,६६५ मील की अपेक्षा इससे ३०० मील और अधिक होना चाहिए थी। इस केबल की ड्राइंग भी यदि तैयार की जाय, तब उसमें भी इस गोलाकार को गणना में लेना पड़े। वास्तविकता यह भी थी कि ट्रान्सएटलान्टिक टेलीग्राफ केबल के लिए पृथ्वी को सपाट मान कर ही डिजाइन तैयार की गई थी। इस डिजाइन को सार्वजनिक भी किया गया था, जिससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी सपाट है।.

(20) क्षितिज नीचे खिसक जाना चाहिए.....

यदि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है तो बलून या विमान में बैठकर ऊपर की ओर जा रहे मनुष्य को क्षितिज गोलाकार दरार में खिसकते हुए दूर जाता दिखना चाहिए। वास्तविकता यह है कि यदि पृथ्वी गोलकार है तो क्षितिज जैसा कुछ होना ही नहीं चाहिए। जो बलून या विमान में बैठकर आकाश में जाते हैं, उनका अनुभव कुछ अलग ही तथ्य बतलाता है। क्षितिज उन्हें दरार में सरकता हुआ नहीं दिखाई देता है, बल्कि उनके साथ ऊपर उठता हुआ दिखाई देता है। वास्तविकता यह है कि क्षितिज तो ऊपर नहीं आता है, लेकिन अधिक ऊँचाई पर आँख की दृष्टिमर्यादा के बढ़ जाने के कारण इस प्रकार का आभास होता है। पृथ्वी यदि उन्नतोदर हो तो पृथ्वी का नीचे का भाग एकदम नजदीक दिखना चाहिए और दूर का भाग दरार में हो, इतना दूर उसे दिखना चाहिए। ऐसा दिखाई नहीं देता है, इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गेंद जैसे गोल नहीं है।

(21)
एटलान्टिक महासागर की ऊँचाई सौ मील नहीं है.....

आज के वैज्ञानिक मानते हैं कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है। इसके अनुसार वे पृथ्वी की जो भी आकृति बनाते हैं, तब वे किन्हीं भी दो स्थलों को एक ही स्तर पर बताते हैं और उनके बीच के भाग को किसी पहाड़ी की तरह उभरा हुआ दर्शाते हैं। पृथ्वी यदि गेंद जैसी गोल है तो ऐसी ही स्थिति होनी चाहिए। यह अगर सच है तो एटलान्टिक महासागर भी सौ मील ऊँचाई की पहाड़ी जैसा होना चाहिए। वैज्ञानिक एक सिद्धान्त बताते हैं कि पानी सदैव ऊपर के स्तर से नीचे के स्तर पर जाने की कोशिश करता है। यदि यह सिद्धान्त सच है तो सौ मील ऊँची पहाड़ी पर का पानी दोनों ओर बह जाना चाहिए और समुद्र समतल हो जाना चाहिए। हकीकत में ऐसा ही होता है। समुद्र में पानी की पहाड़ी की गैर मौजूदगी सिद्ध करती है कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल नहीं है।

(22) स्टीमर का सबूत धोखाधड़ी है.....

विद्यालयों में विद्यार्थियों को पढ़ाया जाता है कि कोई स्टीमर जब किनारे के नजदीक आने लगता है, तब पहले उसका ऊपर का भाग दिखाई देता है और पृथ्वी के गोलाकार भाग में छिपे होने के कारण नीचे का भाग कुछ समय बाद दिखाई देता है। यदि कुछ मीटर की ऊँचाई वाले स्टीमर का भाग पृथ्वी के गोलाकार के पीछे छिप जाता हो, तो उसके आधार पर रेखागणित का उपयोग कर पृथ्वी के मोड को भी मापा जा सकता है। इसके लिए स्टीमर किनारे से कितना दूर है और स्टीमर की ऊँचाई कितनी है, उनके माप चाहिए। इसकी गणना करने पर पृथ्वी की गोलाई कुछ सौ किलोमीटर ही प्राप्त होती है। आज के वैज्ञानिक जो कहते हैं उसके अनुसार पृथ्वी की परिधि यदि ३६,००० किलोमीटर है तो उसकी गोलाई में तो आधा स्टीमर छिप जाना चाहिए और आधा बाहर रहना चाहिए। ऐसा नहीं होता है, इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोल नहीं है।

(23) पृथ्वी गोल क्यों दिखाई देती है ?.....

कई लोगों की दलील होती है कि, यदि पृथ्वी सपाट है तो हम यदि किसी एक ही स्थान पर खड़े रहें तो चारों ओर पूरी पृथ्वी को देख सकते हैं। इस दलील की उत्पत्ति अज्ञान में से हुई है। यदि हम किसी विशाल खुले मैदान में खड़े रहें और चारों ओर देखें तो हमारी नजर सब ओर केवल तीन-तीन मील तक ही पहुंचती है। जहाँ हमारी दृष्टि मर्यादा आ जाती है, वहाँ हमें क्षितिज ही दिखाई देता है। सब दिशाओं में हमारी दृष्टि मर्यादा समान होने के कारण दृष्टि मर्यादा की जो रेखा बनती है, उससे तीन मील त्रिज्या का एक वृत्त बन जाता है। हमारी नजर से तीन मील तक की जमीन हमें उठती हुई मालूम होती है और उसके पीछे की वस्तु हम नहीं देख पाते हैं। यदि इसी स्थान पर हम दूरबीन का प्रयोग करें, तो हम तीन मील से भी अधिक दूर तक देख पाते हैं। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोल नहीं बल्कि सपाट है।

(24) सुएझ नहर को सीधी रेखा में खोदा गया है.....

सुएझ नहर भूमध्य समुद्र को लाल समुद्र के साथ जोडती है और उसकी लम्बाई लगभग सौ मील है। इस नहर का निर्माण सन् १८५९ से १८६९ के दौरान हुआ था। जब सुएझ नहर की डिजाइन बन रही थी, तब उसके इंजीनियरों ने यह सवाल उठाया था कि सौ मील की लम्बाई में पृथ्वी की ऊँचाई के ६,६०० फुट बढ़ जाने से दो समुद्रों को जोड़ने के लिए यदि इतनी गहराई तक खोदना पड़ा तो प्रोजेक्ट का खर्च बहुत बढ़ जायगा। तब उन्हें नहर का निर्माण करने वाली फ्रेन्च कम्पनी द्वारा बताया गया कि उन्हें खुदाई करते समय पृथ्वी को गोल नहीं, बल्कि सपाट मान कर ही नक्शे तैयार करने हैं। इंजीनियरों ने पृथ्वी को सपाट मान कर नक्शे बनाए और उसके अनुसार खुदाई की तब दोनों समुद्रों का पानी एक हो गया। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी सपाट है।

(25) पृथ्वी घूमती नहीं है इसलिए गोल नहीं है.....

पृथ्वी गोल है और पृथ्वी घूमती है, ये दोनों सिद्धान्त एक दूसरे पर आधारित हैं। पृथ्वी को घूमता हुआ सिद्ध करने के लिए उसे गोल सिद्ध करना जरूरी है और उसे गोल सिद्ध करने के लिए उसे घूमता हुआ सिद्ध करना आवश्यक है। यदि हम यह सिद्ध कर दें कि पृथ्वी घूमती नहीं है, तो यह स्वयं ही सिद्ध हो जायेगा कि वह गोल भी नहीं है। आज के वैज्ञानिकों का कहना है कि पृथ्वी एक मिनट पर १,१०० मील की तेज गति से अपनी धुरी पर पश्चिम से पूर्व दिशा की ओर घूमती है। यदि पृथ्वी घूमती हो और हम पूर्व दिशा में गोली छोड़ें तो वह उस गोली से अधिक दूर जाना चाहिए, जो पश्चिम दिशा में छोड़ी जाती है, क्योंकि पृथ्वी भी पूर्व दिशा में जा रही है। लेकिन वास्तविकता यह है कि पूर्व व पश्चिम दोनों ही दिशाओं में छोड़ी गोलियाँ समान अन्तर तक जाती हैं। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी घूमती नहीं है और वह गोल भी नहीं है।

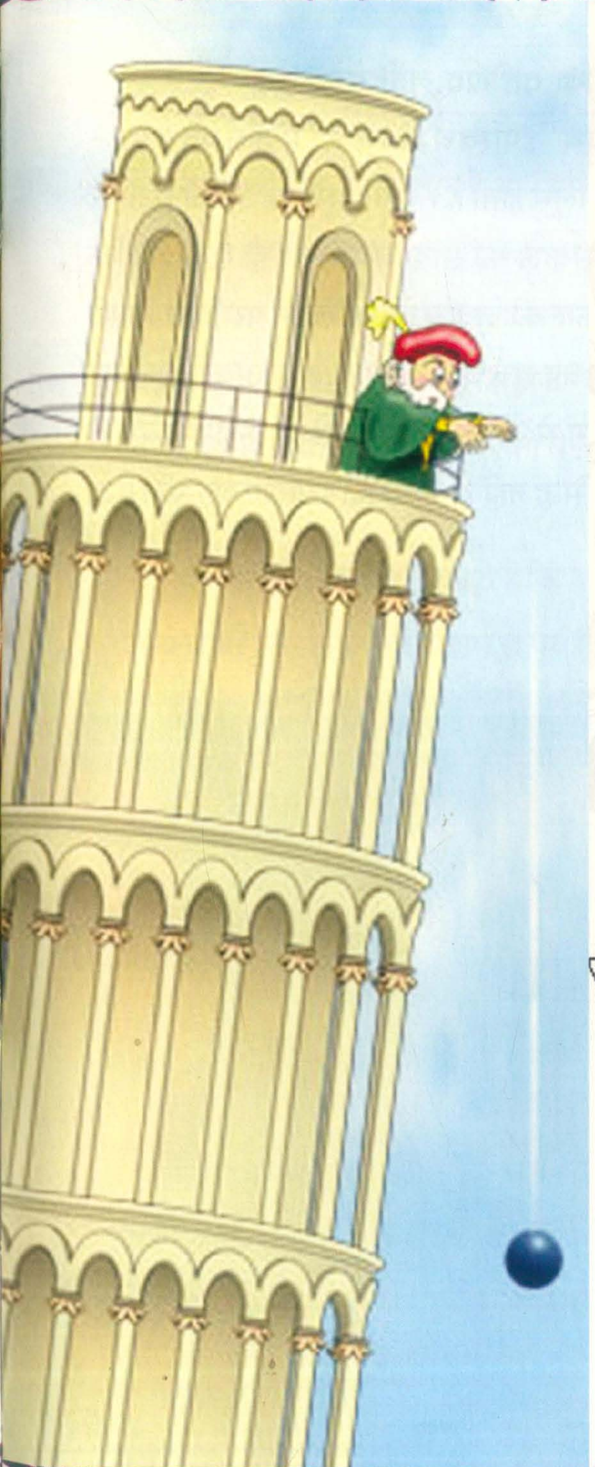

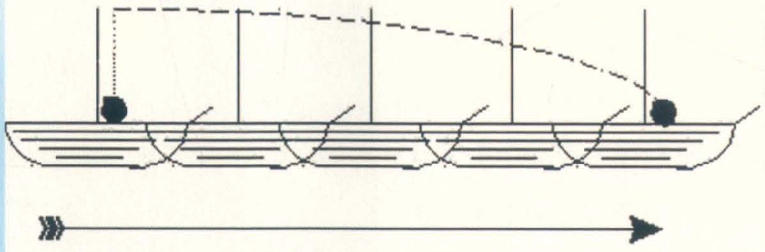

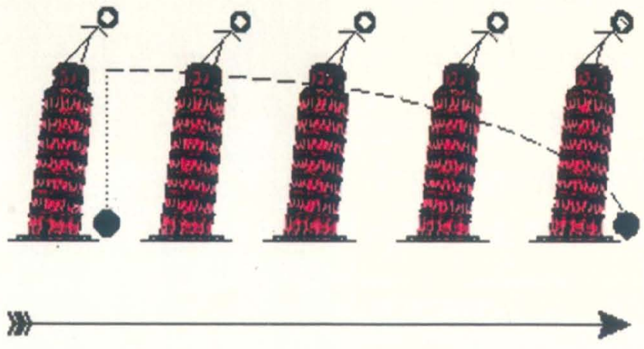

(26)

तोप का गोला मूल जगह पर लौट आता है.....

किसी ऊँचे टावर के शिखर पर से जब पत्थर नीचे फेंके जाते हैं, तो वे पत्थर टावर के आधार पर ही गिरते हैं। पृथ्वी स्थिर हो या घूमती हो, ऐसा ही होता है। पृथ्वी यदि घूमती हो तो टावर के साथ पत्थर भी उसी दिशा में घूमते हैं, इसलिए वे टावर के आधार पर ही गिरते हैं । पृथ्वी से समकोण पर लगाई गई तोप के गोले के बारे में ऐसा नहीं होता है। पृथ्वी यदि स्थिर हो तो तोप की नली में से छोड़ा गया गोला, कुछ सेकन्ड के पश्चात् वापिस वहीं आकर गिरता है । पृथ्वी यदि घूमती है तो आज के वैज्ञानिकों के अनुसार वह एक मिनट में १,१०० मील दूर चली जाती है। इसलिए जब तोप का गोला वापस आए, तब तक तोप अनेक मील दूर खिसक जाना चाहिए और गोला मीलों दूर गिरना चाहिए । ऐसा नहीं होता है । इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी घूमती नहीं है और इसलिए वह गोल भी नहीं है।

(27) पृथ्वी घूमती नहीं है, क्योंकि वह ग्रह नहीं है.....

इंग्लैंड के खगोलशास्त्री जार्ज बी. ऐरी अपने प्रसिद्ध ग्रंथ "इपस्विच लेक्चर्स" में तर्क देते हैं कि - "गुरु ग्रह बहुत बड़ा है और वह अपनी धुरी पर घूमता हुआ मालूम होता है।" यदि गुरु ग्रह अपनी धुरी पर घूम सकता है, तो फिर पृथ्वी क्यों नहीं घूम सकती है ? इस सवाल का सादा जवाब यह हो सकता है कि "पृथ्वी कोई ग्रह ही नहीं है।" वास्तविकता यह है कि इस प्रकार का जवाब देने के स्थान पर बिना किसी तर्क के मान लेते हैं कि पृथ्वी भी एक ग्रह है और इसलिए वह सूर्य के आसपास और अपनी धुरी पर घूमती है। पृथ्वी एक ग्रह है यह मत किसी भी वैज्ञानिक प्रयोग से, तर्क से, गणित से या प्रत्यक्ष सबूत से सिद्ध नहीं हो सकता है। सौरमंडल का पृथ्वी एक ग्रह है यह सिद्ध नहीं हो पाया है। इसलिए यह भी सिद्ध नहीं हो पाया है कि वह घूमती है या वह गोल है।

(28) समस्त ग्रह ध्रुव तारे के चारों ओर घूमते हैं.....

वैज्ञानिक हमें यह समझाने की कोशिश करते हैं कि बुध, शुक्र, मंगल, गुरु, शनि आदि ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमते हैं। लेकिन हमारे अवलोकन बताते हैं कि समस्त ग्रह नक्षत्र व तारे उत्तर दिशा में स्थित ध्रुव तारे को केन्द्र में रख कर ही घूमते हैं। खगोलशास्त्रीगण जब कहते हैं कि समस्त ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमते हैं तब उनके इस मंतव्य के लिए उनके पास कोई भी परोक्ष या प्रत्यक्ष सबूत नहीं होता है। यदि कोई अन्य ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमते नहीं हो तो यह मान लेने की कोई जरूरत नहीं है कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है। यदि अन्य ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमते हों तो भी यह मानने की कोई जरूरत नहीं है कि पृथ्वी सूर्य के आसपास घूमती है, क्योंकि पृथ्वी कोई ग्रह नहीं है। पृथ्वी यदि सूर्य के आसपास या अपनी धुरी पर नहीं घूमती है तो फिर पृथ्वी गोल नहीं हो सकती है।

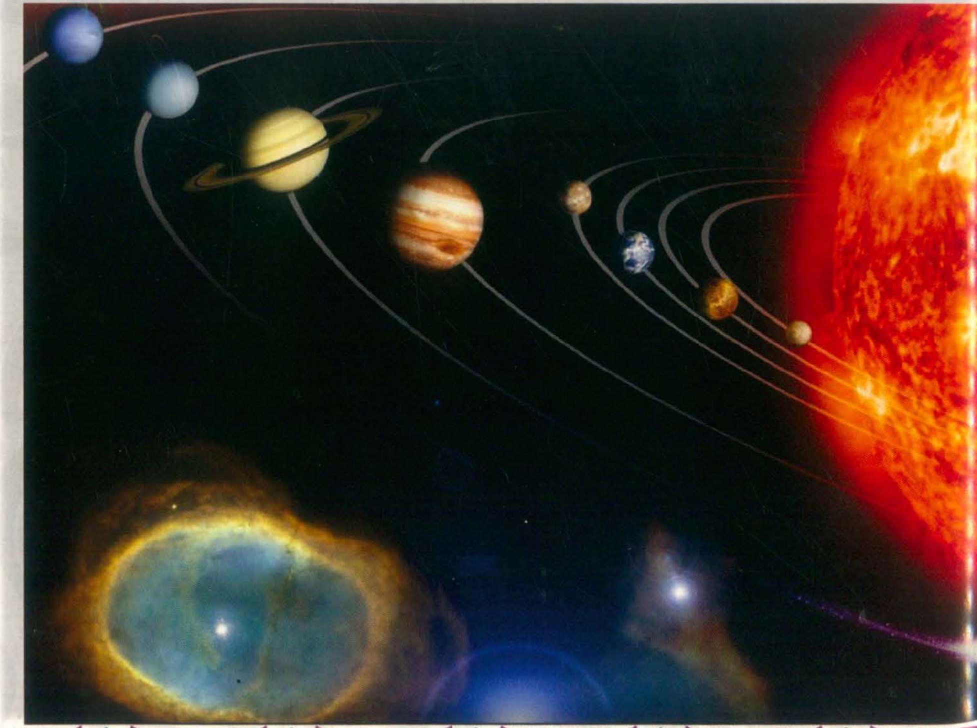

(29) क्षितिज रेखा में कोई घुमाव नहीं है.....

जब हम समुद्र किनारे जा कर दूर क्षितिज की ओर नजर करते हैं, तब हमें क्षितिज एक सीधी रेखा के स्वरूप में ही दिखाई देता है। आज के वैज्ञानिक यदि मानते हों, कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है तो क्षितिज एक सरल रेखा में न होकर कमान के आकार में होना चाहिए। उन्नीसवीं सदी के महान खगोलशास्त्री प्रोफेसर रिचर्ड प्रोक्टर ने पृथ्वी को गोल सिद्ध करने के लिए किनारे से दूर जा रहे एक जहाज का रेखाचित्र बनाया है। इस चित्र में ऐसा दर्शाया है मानो जहाज जल की पहाड़ी पर चढकर फिर नीचे उतर रहा हो। लेकिन उस चित्र में भी क्षितिज को तो एक सीधी रेखा के रूप में ही दर्शाया है। यदि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है तो क्षितिज रेखा फिर एक कमान की तरह होना चाहिए। क्षितिज रेखा यदि सीधी हो और पानी पहाड़ी जैसा हो तो पृथ्वी का आकार फिर बेलनाकार सिद्ध होता है। क्या फिर प्रोफेसर रिचर्ड प्रोक्टर जैसे खगोलशास्त्री पृथ्वी को बेलनाकार मानते हैं ?

(30) बादलों की गति सभी दिशाओं में होती है ?.....

हम सदैव अवलोकन करते हैं कि आकाश में बादल सभी दिशाओं में गति करते रहते हैं। कई बार कुछ बादल पूर्व से पश्चिम दिशा में जा रहे होते हैं, जबकि कुछ अन्य बादल उस समय ही पश्चिम से पूर्व दिशा में जा रहे होते हैं। अब यदि पृथ्वी गोल है और अंतरिक्ष में वह पश्चिम से पूर्व दिशा में एक सेकन्ड में १९ मील की रफ्तार से गति कर रही है तो पूर्व दिशा में जा रहे बादलों का वेग हमें अधिक लगना चाहिए और जो बादल स्थिर हों तो उन्हें पूर्व दिशा में जाते हुए दिखना चाहिए। प्रति सेकन्ड १९ मील की गति से पश्चिम दिशा में जा रहे बादल हमें स्थिर मालूम होना चाहिए। हकीकत में ऐसा नहीं होता है। स्पष्ट रूप से दिखाई देता है कि बादल स्वभाविक गति से सभी दिशाओं में जा रहे हैं। उन पर पृथ्वी की तथाकथित गति का कोई प्रभाव दिखाई नहीं देता है।

(31) ब्रिटिश संसद का प्रस्ताव.....

जब सुएझ नहर को बनाया जा रहा था, तब ब्रिटिश पार्लियामेन्ट में विवाद उत्पन्न हो गया था, कि इस नहर की खुदाई के जो नक्शे तैयार किए जाएँ, उनमें पृथ्वी की गणना गोल के हिसाब से हो या सपाट के हिसाब से ? पृथ्वी यदि गोल है तो सौ मील लम्बी नहर के मध्य भाग में जमीन में लगभग ६,६०० फुट अधिक गहरा खोदना पड़ेगा, क्योंकि सौ मील की लम्बाई में पृथ्वी की मोटाई ६,६०० फुट होना चाहिए । इसलिए योजना के खर्च में बहुत वृद्धि होने वाली थी । इसलिए ब्रिटेन की संसद में प्रस्ताव पारित किया गया कि भविष्य में किसी भी नहर को जब बनाना हो, तब पृथ्वी को सपाट मान कर ही नहर की ''डेटम लाईन'' तय की जाय, जिससे आवश्यकता से अधिक खुदाई का काम नहीं करना पड़े । यह प्रस्ताव आज भी ब्रिटेन की संसद में मौजूद है, जो सिद्ध करता है कि पृथ्वी सपाट है ।

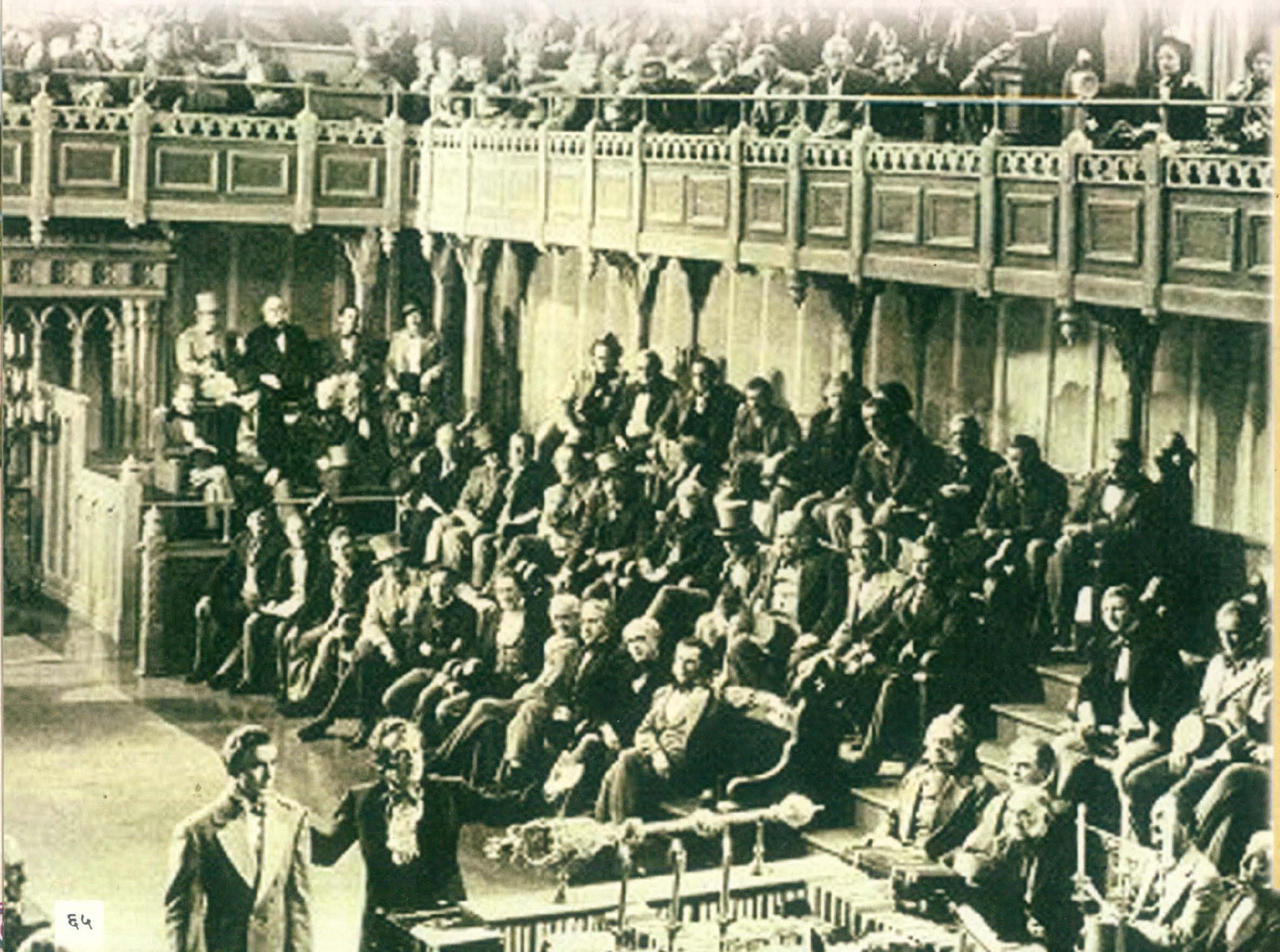

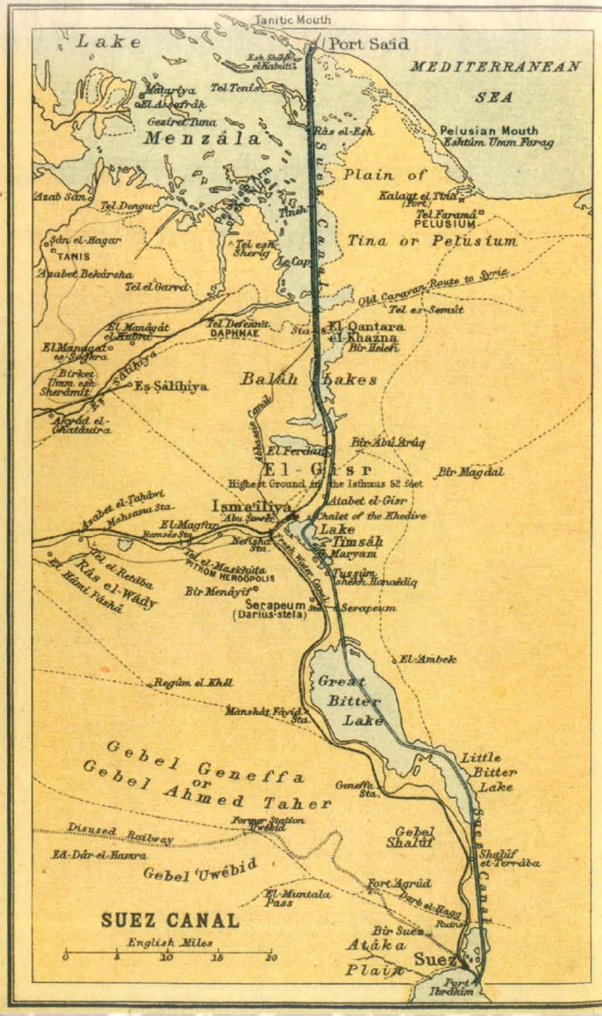

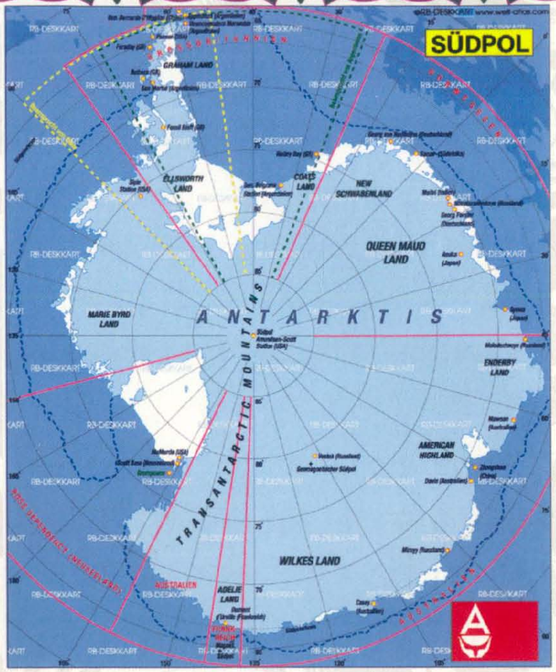

(32) दक्षिण प्रदेश में शीत अधिक होती है.....

भूमध्य रेखा की उत्तर दिशा में स्थिर दूर के प्रदेशों में जितनी बर्फ जमती है, उसकी अपेक्षा बहुत अधिक बर्फ दक्षिण दिशा में उतनी ही दूरी पर जमती है। उदाहरणार्थ केरगुवेलेन नामक स्थल दक्षिण दिशा में ५० अक्षांश पर स्थित है। यहाँ जितनी बर्फ जमती है उसकी अपेक्षा बहुत कम बर्फ ७५ डिग्री उत्तर अक्षांश पर स्थित आईसलैंड पर देखने को मिलती है। केरगुवेलेन में मात्र १८ प्रकार की वनस्पतियाँ ही होती हैं। जबकि आइसलैंड में ग्रीष्म ऋतु में सूर्य की गर्मी अधिक होने से वहाँ ८७० प्रकार की वनस्पतियाँ होती हैं। इससे स्पष्ट होता है कि उत्तर ध्रुव के नजदीक सूर्य से जितनी ऊर्जा मिलती है, उससे बहुत कम ऊर्जा दक्षिण प्रदेश को प्राप्त होती है। यदि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है, तो उत्तर व दक्षिण दिशा में सूर्य की गर्मी एक समान होनी चाहिए। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोल नहीं है।

(33) दक्षिण में सूर्य की गति अधिक होती है.....

सूर्य प्रतिवर्ष भूमध्य रेखा की उत्तर दिशा में जितने वक्त के लिए रहता है, उतनी ही अवधि के लिए वह दक्षिण दिशा में भी रहता है। उत्तर दिशा में सूर्य को कम दूरी तय करनी होती है, इसलिए उसका वेग कम होता है। इसलिए किसी एक स्थल पर सूर्य की ऊर्जा अधिक मिलती है। भूमध्य रेखा के दक्षिण भाग का प्रदेश गले की तरह नीचे से संकुचित नहीं है, लेकिन वृत्त की तरह बाहर की ओर फैला हुआ है। इस भाग में प्रदक्षिणा कर रहे सूर्य को २४ घंटे में बड़े वृत्त में घूमने के कारण उसके वेग में वृद्धि हो जाती है और दक्षिण के प्रदेश में सूर्य की ऊर्जा कम मिलती है। इसलिए दक्षिण प्रदेश में अधिक बर्फ और कम वनस्पति देखने को मिलती है। यदि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है तो उत्तर व दक्षिण दोनों ही दिशाओं में सूर्य की ऊर्जा एक समान मिलनी चाहिए। ऐसा नहीं होता हैं, क्योंकि पृथ्वी सपाट है।

(34) बलून अपने मूल स्थान पर लौटकर आ जाता है.....

पुराने जमाने में अंतरिक्षयात्री बलून में बैठकर आकाश में कई मील ऊपर जाते थे, घंटों आकाश में रहते थे और फिर नीचे मूल स्थान पर लौटकर आ जाते थे। यदि पृथ्वी एक मिनट में १,१०० मील की गति से घूम रही हो, तो आकाश में उड़नेवाले कभी भी अपनी मूल जगह पर लौटकर आ ही नहीं सकते। आज के वैज्ञानिकों की दलील रहती है कि पृथ्वी के साथ उसका वातावरण भी प्रति मिनट १,१०० मील की गति पर रहता है और बलून भी वातावरण में होता है, इसलिए वह पृथ्वी के साथ घिसटता है। लेकिन हकीकत तो यह है कि बलून में बैठनेवाले ऐसी किसी भी गति का अनुभव कभी भी नहीं करते हैं। आकाश कोई केबिन नहीं है कि उसमें रहने वाली वस्तुएँ केबिन के साथ गति करें। आकाश में उड़नेवाले यात्रियों को पृथ्वी स्थिर दिखाई देती है, जिसका वास्तविक कारण यही है कि पृथ्वी स्थिर है।

(35) चन्द्रमा स्वयं प्रकाशित है.....

आज के वैज्ञानिकों की मान्यता है कि चन्द्रमा का प्रकाश सूर्य के प्रकाश का प्रतिबिम्ब है। यह सच नहीं है, क्योंकि सूर्य का प्रकाश गर्म है जबकि चन्द्रमा का प्रकाश शीतल है। साथ ही सूर्य के प्रकाश में जिस प्रकार की संश्लेषण की क्रिया होती है, उस प्रकार की कोई क्रिया चन्द्रमा के प्रकाश में नहीं देखी जाती है। इससे सिद्ध होता है कि सूर्य व चन्द्र दोनों ही स्वयं प्रकाशित हैं। अब जबकि चन्द्रमा स्वयंप्रकाशित है, तब चन्द्रग्रहण के समय पृथ्वी की परछाई चन्द्रमा पर पड़े, उसका प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता है। परछाई कभी भी स्वयंप्रकाशित पदार्थों पर नहीं पड़ती है, बल्कि परप्रकाशित पदार्थों पर ही पड़ती है। चन्द्रग्रहण के समय चन्द्रमा पर पृथ्वी की परछाई नहीं पड़ती है बल्कि राहू-केतु नामक काले ग्रह चन्द्रमा के बीच आकर उसे ढक देते हैं। यह गोलाकार परछाई पृथ्वी की नहीं होती है और इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोल नहीं है।

(36) सूर्य व चन्द्रमा एक साथ दिखाई देते है.....

कई बार आकाश में हमें सूर्य व चन्द्रमा एक साथ दिखाई देते है। विशेष कर शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी की संध्या को सूर्य पश्चिम दिशा में अस्त हो रहा होता है, तब पूर्णिमा के चन्द्रमा से थोड़ा ही छोटा चन्द्र आकाश के पूर्वी भाग में ऊपर आ रहा होता है। ऐसे समय सूर्य व चन्द्र आमने-सामने होते हैं, लेकिन तब भी सूर्य का प्रकाश, चन्द्रमा के प्रकाश की तुलना में अधिक तेज होता है। चन्द्रमा यदि सूर्य के प्रकाश को परावर्तित करता हो तो, आमने-सामने की स्थिति में चन्द्रमा का तेज सामान्य की अपेक्षा अधिक होना चाहिए। इसी प्रकार प्रथमा (एकम) के दिन सूर्य उदित होता है तब चन्द्र अस्त होता है और तब वे दोनों आमने-सामने होते हैं। दिन के समय यह स्पष्ट रहता है कि चन्द्रमा का प्रकाश स्वयं का प्रकाश है, और वह सूर्य से लिया हुआ उधार का प्रकाश नहीं है। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी सपाट है।

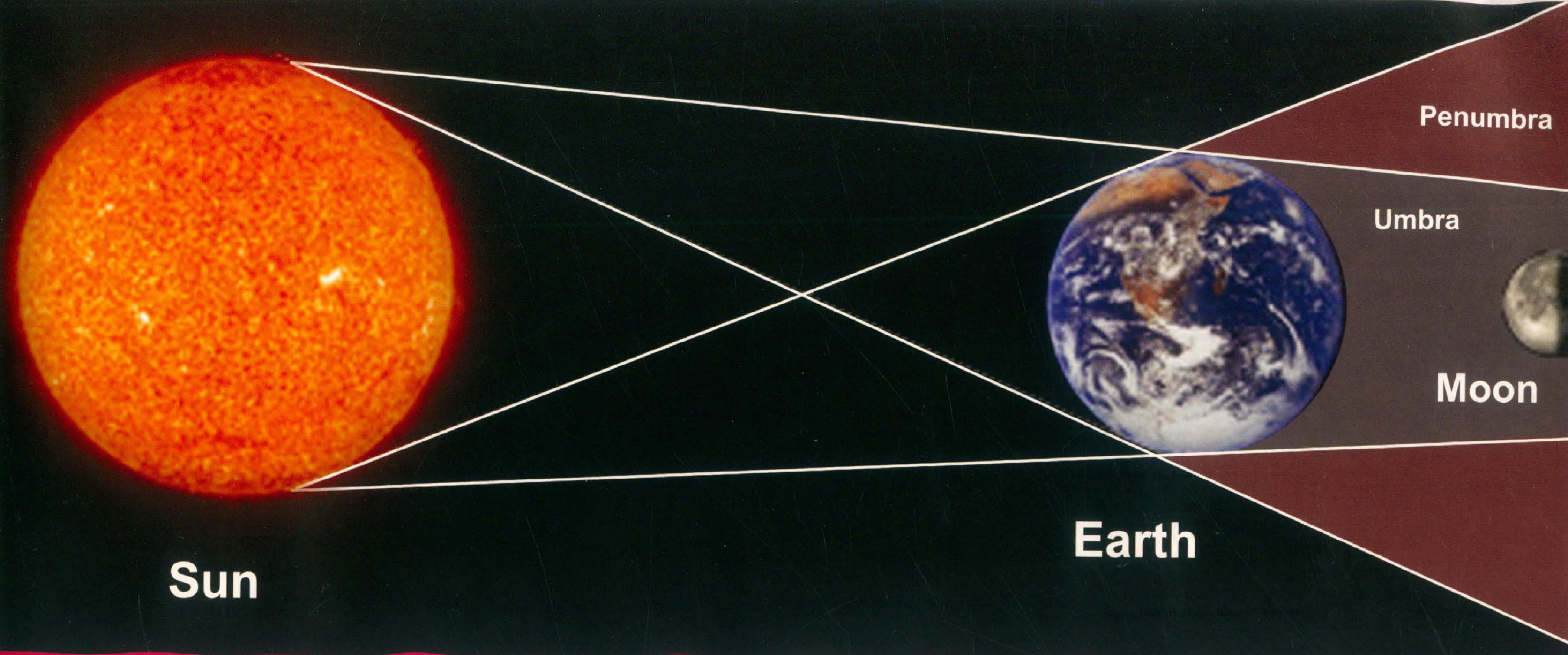

(37) चन्द्रग्रहण से सिद्ध नहीं होता है कि पृथ्वी गोल है.....

न्यूटन के सिद्धान्त के अनुसार जब सूर्य व चन्द्रमा के बीच पृथ्वी आ जाती है, तब चन्द्रग्रहण हो जाता है। यूरोप के कई देशों में ऐसे अनेक चन्द्रग्रहण के आंकडे दर्ज हैं, जब सूर्य व चन्द्रमा आकाश में एक दूसरे के सामने होते हैं और चन्द्रग्रहण भी होता है। जब आकाश में सूर्य व चन्द्रमा का सह अस्तित्व होता है, तब पृथ्वी के बीच में आने और चन्द्रग्रहण होने का प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता है। इसलिए यह स्पष्ट हो जाता है कि अन्य कोई प्रकाशहीन ग्रह चन्द्रमा के बीच में आ जाता है, जो चन्द्रग्रहण के लिए जवाबदार होता है। यह ग्रह गोलाकार या अर्धगोलाकार हो सकता है। इस ग्रह के अर्धपारदर्शक होने के कारण कई बार धुंधला चन्द्र देखने को मिलता है। परछाई कभी भी अर्धपारदर्शक नहीं हो सकती है। इससे साबित होता है कि ग्रहण के समय जो गोलाकार परछाई मिलती है, वह पृथ्वी की परछाई नहीं है, इसलिए पृथ्वी गोल नहीं है।

(38) खगोलशास्त्री एकमत नहीं है.....

आज के वैज्ञानिक मानते हैं कि चन्द्रमा अपनी धुरी पर घूम रहा है और साथ ही पृथ्वी के आसपास भी घूम रहा है। साथ ही वे यह भी मानते हैं कि पृथ्वी भी अपनी धुरी पर घूम रही है और सूर्य के आसपास भी एक दिन में ४० लाख मील की तेज गति से घूम रही है। इस प्रकार समस्त ग्रह, उपग्रह, कृत्रिम उपग्रह आदि भी तीव्र गति से सूर्य के चारों ओर प्रदक्षिणा कर रहे हैं। पूरा सौरमण्डल ही हरकुलिस नामक नक्षत्र की ओर तेज गति से बढ़ रहा है। आज के वैज्ञानिक यह भी बता रहे हैं कि हमारा समस्त विश्व ही आकाश में सतत फैल रहा है और अपने केन्द्रबिन्दु से बहुत वेग से (तेजी से) दूर जा रहा है। ये सब बातें तर्कयुक्त नहीं है और इनके कोई प्रमाण भी नहीं है। इस मुद्दे पर समस्त खगोलशास्त्री एकमत नहीं है इसलिए यह सिद्धान्त भी गलत सिद्ध हुआ है।

(39) सूर्य का स्थान परिवर्तित हो रहा है.....

प्रसिद्ध खगोलशास्त्री प्रोफेसर रिचर्ड प्रोक्टर हमें बताते हैं कि - ''सूर्य हमसे करोड़ों मील दूर है, इसलिए हम पृथ्वी के एक छोर से दूसरे छोर तक जाते हैं, तब भी हमें सूर्य एक ही दिशा में दिखाई देता है। यह फर्क इतना सूक्ष्म है कि हम इसे माप नहीं सकते हैं'' - यह मंतव्य सच नहीं है। हम भूमध्य रेखा के दक्षिण में ४५ अंश यदि ऊपर जाएँ तो हमें मध्याह्न का सूर्य आकाश में उत्तर दिशा में दिखाई देता है और उत्तर में ४५ अंश ऊपर सूर्य आकाश में दक्षिण दिशा में दिखाई देता है। उत्तर अक्षांश में हमारी परछाई उत्तर दिशा में दिखाई देती है और दक्षिण अक्षांश में दक्षिण दिशा में पड़ती है। सूर्य यदि वास्तव में हम से करोडों मील दूर है तो पूरी पृथ्वी से सूर्य एक ही दिशा में दिखना चाहिए। सूर्य हमसे बहुत नजदीक है और पृथ्वी सपाट है, इसलिए ऐसा नहीं होता है।

(40) सूर्य और पृथ्वी के बीच की दूरी.....

सूर्य और पृथ्वी के बीच की दूरी का मुद्दा, खगोलशास्त्रीयों के बीच सदैव विवादास्पद रहा है। यदि सूर्य व पृथ्वी के बीच की अनुमानित दूरी में फर्क आ जाय, तो सब कुछ बदल जाता है। आधुनिक वैज्ञानिक सूर्य व पृथ्वी के बीच ३० लाख मील से १०.४० करोड़ मील तक की दूरी के आंकड़े प्रस्तुत करते रहते हैं। इस समय माना जाता है कि सूर्य व पृथ्वी के बीच ९.१० करोड़ मील की दूरी है। कुछ वर्षों पूर्व हाइन्ड नामक वैज्ञानिक ने सूर्य व पृथ्वी के बीच की दूरी ९,५३,७०,००० मील बताई थी। सूर्य व पृथ्वी के बीच की दूरी मापने के लिए ''पृथ्वी गोल है और वह सूर्य के चारों ओर घूम रही है'' - इस मान्यता को ही आधार बनाया जाता है। वास्तविकता तो यह है कि सूर्य व पृथ्वी के बीच की दूरी कुछ हजार मील से अधिक नहीं है और इसके समर्थन में अनेक प्रमाण हैं। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोल नहीं है और वह घूमती भी नहीं है।

(41) सूर्य से दूरी को मापदण्ड के रूप में लेने की भूल.....

आज के वैज्ञानिकों ने सूर्य व पृथ्वी के बीच की दूरी के लिए जो प्रणाली निर्धारित की है, वह प्रणाली ही तर्कहीन व अवैज्ञानिक है। इसलिए वैज्ञानिकों को सूर्य से दूरी की गलत गणना मिली है। अब वैज्ञानिक पृथ्वी व सूर्य के बीच की दूरी का उपयोग एक फुटपट्टी की तरह कर रहे हैं और इसके द्वारा वे अन्य तारों के साथ ही नक्षत्रों व अन्य अंतरिक्षीय वस्तुओं का माप मालूम कर रहे हैं। इस दूरी के आधार पर वे इस प्रकार के उदाहरण दे रहे हैं कि फलाना तारा हमसे इतने प्रकाशवर्ष दूर है। सूर्य की दूरी मालूम करने के लिए जो आधार अपनाया गया है वह ही गलत है। इस गलत आधार का उपयोग कर अन्य अंतरिक्षीय पदार्थों की जो दूरी मालूम की गई है, वह भी गलत है। अंतरिक्षीय वस्तुओं की यदि सही दूरी मालूम करना हो तो यह मान्यता कि पृथ्वी गोल है और वह सूर्य के चारों ओर चक्कर लगा रही है को ही जडमूल से संशोधित करना होगा।

(42) ग्रहण की आगाहियाँ.....

आज के वैज्ञानिकों का कहना है कि वे पृथ्वी को गोल और घूमती हुई मान कर वर्षों बाद होने वाले सूर्य व चन्द्रग्रहणों की सचोट पूर्व सूचनाएँ दे सकते हैं। जबकि हकीकत यह है कि ग्रहण की सचोट आगाहियाँ, नियमित अवलोकनों और गणित के आधार पर भी की जा सकती हैं। ईसा पूर्व हुए खगोलविद् टोलेमी ने तो उस समय भी पृथ्वी के सपाट होने के आधार पर आगामी ६०० वर्षों में होने वाले ग्रहणों के बारे में सचोट आगाहियाँ की थी। इसके लिए पृथ्वी गोल है और वह सूर्य के चारों ओर घूमती है, इस प्रकार की विचित्र कल्पनाओं को करने की जरूरत ही नहीं हुई थी। लेकिन वास्तविकता तो यह है कि सूर्य व चन्द्रमा के ग्रहणों के बारे में पुराने समय में यूरोप और भारत के खगोलशास्त्रियों ने जो विवरण एकत्रित किए थे, उन्हीं के आधार पर ही आज के वैज्ञानिक ग्रहणों के बारे में सचोट आगाहियाँ कर रहे हैं। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी सपाट है।

चीन की लम्बी नहर.....

(43) चीन की सात सौ मील लम्बी नहर.....

सदियों पूर्व चीन में एक नहर खोदी गई, जिसकी लम्बाई ७०० मील है। पृथ्वी को गेंद जैसी गोल मान कर यदि उसे खोदा गया होता तो उसके लिए हजारों फुट गहरी खुदाई करनी पड़ती। ऐसा न करते हुए पृथ्वी को सपाट मान कर ही खुदाई की गई। पृथ्वी यदि वास्तव में गोल हैं, तो सात सौ मील लम्बी नहर में एक छोर से दूसरे छोर तक पानी पहुंच ही नहीं सकता, क्योंकि उसके लिए पानी को हजारों फीट ऊँची पहाड़ी पर चढ़ कर दूसरे छोर पर उतरना पड़ता। इस नहर के निर्माण कार्य में चीन के पुराने समय के इंजीनियर पृथ्वी को सपाट मान कर ही काम करते थे और उन्हें इसके लिए किसी समस्या का सामना नहीं करना पड़ा। गुजरात में नर्मदा नहर भी लगभग ५०० किलोमीटर लम्बी है। इसका निर्माण भी पृथ्वी को सपाट मान कर ही किया गया है। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोल नहीं है।

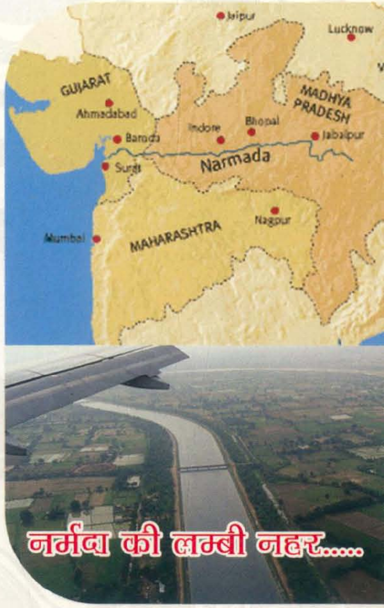

नर्मदा की लम्बी नहर.....

(44) वैज्ञानिकों की काल्पनिक बातें.....

खगोलशास्त्री जे. एम लाकिर का कहना है कि - ''सूर्य पूर्व में उदित होता हुआ और पश्चिम में अस्त होता हुआ दिखाई देता है और उसके आधार पर ही हम कहते हैं कि पृथ्वी पश्चिम दिशा से पूर्व दिशा की ओर घूमती है।'' यह बात तो ऐसी है जैसे कि - ''एक आदमी हमें सामने से आता हुआ दिखाई देता है और उसके आधार पर हम कह देते हैं कि रास्ता उस आदमी की ओर आ रहा है।'' इसके आगे लाकिर बताते हैं कि - ''हमें सूर्य, चन्द्रमा, तारे आदि अस्त होते हुए और उदित होते हुए दिखाई देते हैं, उसका कारण पृथ्वी का स्थिर होना और सूर्य-चन्द्र-तारों का घूमना हो सकता है या फिर सूर्य-चन्द्रमा-तारे स्थिर हैं और पृथ्वी घूमती है।'' यह भी कोई वैज्ञानिक अभिप्राय नहीं है बल्कि अटकल ही है। ऐसी अटकलों के आधार पर यह सिद्ध नहीं किया जा सकता है कि पृथ्वी गोल है और वह घूमती है। इससे साबित होता है कि पृथ्वी स्थिर है व सपाट है।

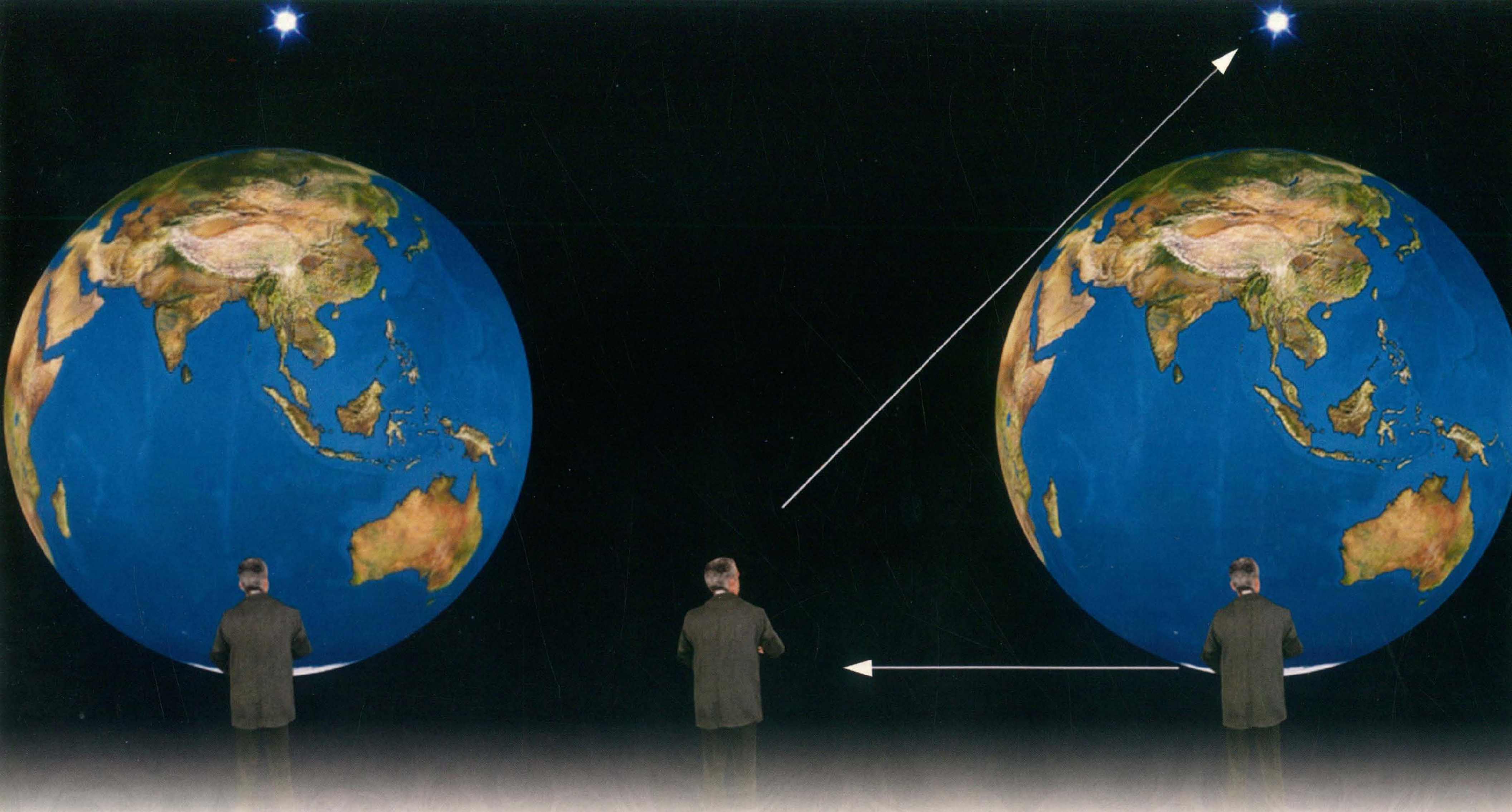

(45) दक्षिण में भी ध्रुव का तारा दिखाई देता है.....

आज के वैज्ञानिक पृथ्वी को गेंद जैसी गोल मानते हैं। यह मान्यता यदि सच है तो भूमध्य रेखा के दक्षिण में ध्रुव का तारा बिलकुल ही दिखाई नहीं देना चाहिए और उत्तर ध्रुव के नजदीक तो वह सिर पर ही दिखना चाहिए। व्यवहारिक अनुभवों से मालूम होता है कि भूमध्य रेखा के दक्षिण में २० डिग्री अक्षांश तक ही जो जहाज जाते हैं, उन्हें भी रात्रि के स्वच्छ आकाश में ध्रुव का तारा दिखाई देता है। इससे सिद्ध होता है कि आज के वैज्ञानिकों की यह मान्यता गलत है कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है। हम जैसे-जैसे उत्तर ध्रुव की दिशा में आगे बढते रहते हैं, वैसे-वैसे ध्रुव का तारा क्षितिज पर ऊँचा और अधिक ऊँचा दिखाई देने लगता है, उसका कारण पृथ्वी का गोलाकार होना नहीं होता है, बल्कि दृष्टिसापेक्षता के नियम के कारण होता है, जिसके अनुसार नजदीक की वस्तु अधिक ऊँची दिखती है। इससे यह सिद्ध नहीं होता है कि पृथ्वी गोल है।

(46) लोलक की गति विपरीत है.....

कई वैज्ञानिक दीवार घड़ी के लोलक के प्रयोग द्वारा यह साबित करने का प्रयास करते हैं कि पृथ्वी गतिमान है। लेकिन उन प्रयोगों में उन्हें पूर्णतः निष्फलता ही मिली है। इन वैज्ञानिकों ने एक ऊँचे टावर के अन्दर के भाग में, बीच में एक लम्बी डोरी को बांध कर उसके साथ लोलक लटकाया था। इस लोलक के नीचे एक मेज को रखा था। वैज्ञानिकों की ऐसी धारणा थी कि यदि पृथ्वी पश्चिम से पूर्व दिशा में घूमती हो तो लोलक के स्पंदन पूर्व से पश्चिम दिशा में होने चाहिए। लेकिन हकीकत यह थी कि जब निरीक्षण किया गया तो लोलक उसकी विरुद्ध दिशा में अधिक तेज गति से स्पन्दित हो रहा था। इस प्रकार लोलक के प्रयोग के द्वारा खगोलशास्त्री यह साबित करने में निष्फल रहे थे कि पृथ्वी घूमती है। ऐसे अनेक प्रयोगों की निष्फलता से सिद्ध होता है कि पृथ्वी स्थिर व सपाट है।

(47) आंकड़ों की मायाजाल.....

ब्रिटेन के प्रसिद्ध खगोलशास्त्री रिचर्ड प्रोक्टर का कहना है - ''करीब दस लाख पृथ्वियाँ एकत्रित हों, तब एक सूर्य बनता है और जब ५३,००० सूर्य एकत्रित हों तब ''वेगा'' नामक तारा बनता है। लेकिन ''वेगा'' तो एक बहुत छोटा तारा है। ऐसे करोडों तारे आकाश में हैं। कई तारे तो इतने दूर हैं कि वहाँ से प्रकाश को हम तक पहुंचने में तीन करोड वर्ष लगते हैं। पृथ्वी का वजन ६,००,००,००,००,००,००,००,००,००,०६० मेट्रीक टन है। इस सब आंकडों के मायाजाल के द्वारा वैज्ञानिक सामान्य व्यक्ति को भ्रमित कर उससे अपनी काल्पनिक मान्यताओं को स्वीकार कराना चाहते हैं। वास्तविकता तो यह है कि ये समस्त गणनाएँ जिस आधार पर की गई, वह आधार ही गलत है। इस आकलन में तर्क व वैज्ञानिक अभिगम का अभाव है। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोल नहीं है।

(48) पृथ्वी सपाट है तो गिरती क्यों नहीं.....

आज के वैज्ञानिकों के समक्ष जब जब यह हकीकत प्रस्तुत की जाती है कि ''पृथ्वी सपाट है'' तब वे यह प्रश्न अचूक पूछते हैं कि तब हम पृथ्वी की किनार से आकाश में कहीं गिर न जाएँ ? इस प्रश्न का संतोषप्रद जवाब न मिलने पर वे स्वीकार कर लेते हैं कि पृथ्वी गोल है। पृथ्वी के सपाट मान लेने से कोई आपत्ति उत्पन्न होती हो, तो उसका हल ढूंढना चाहिए। लेकिन मात्र इसके लिए बिना किसी तर्क या प्रमाण के इसके विपरीत बात को सच कैसे माना जा सकता है ? लेकिन हकीकत यह है कि पृथ्वी बहुत ही विराट है और हम दक्षिण में बर्फ के महासागर से या उत्तर में ध्रुवप्रदेश से आगे बढ़ ही नहीं सके। इस पृथ्वी को जितना हम मानते हैं उससे लाखों गुनी विशाल है व दुर्गम है। इसलिए पृथ्वी के छोर पर पहुंच कर वहाँ से आकाश में गिर जाने का प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता है।

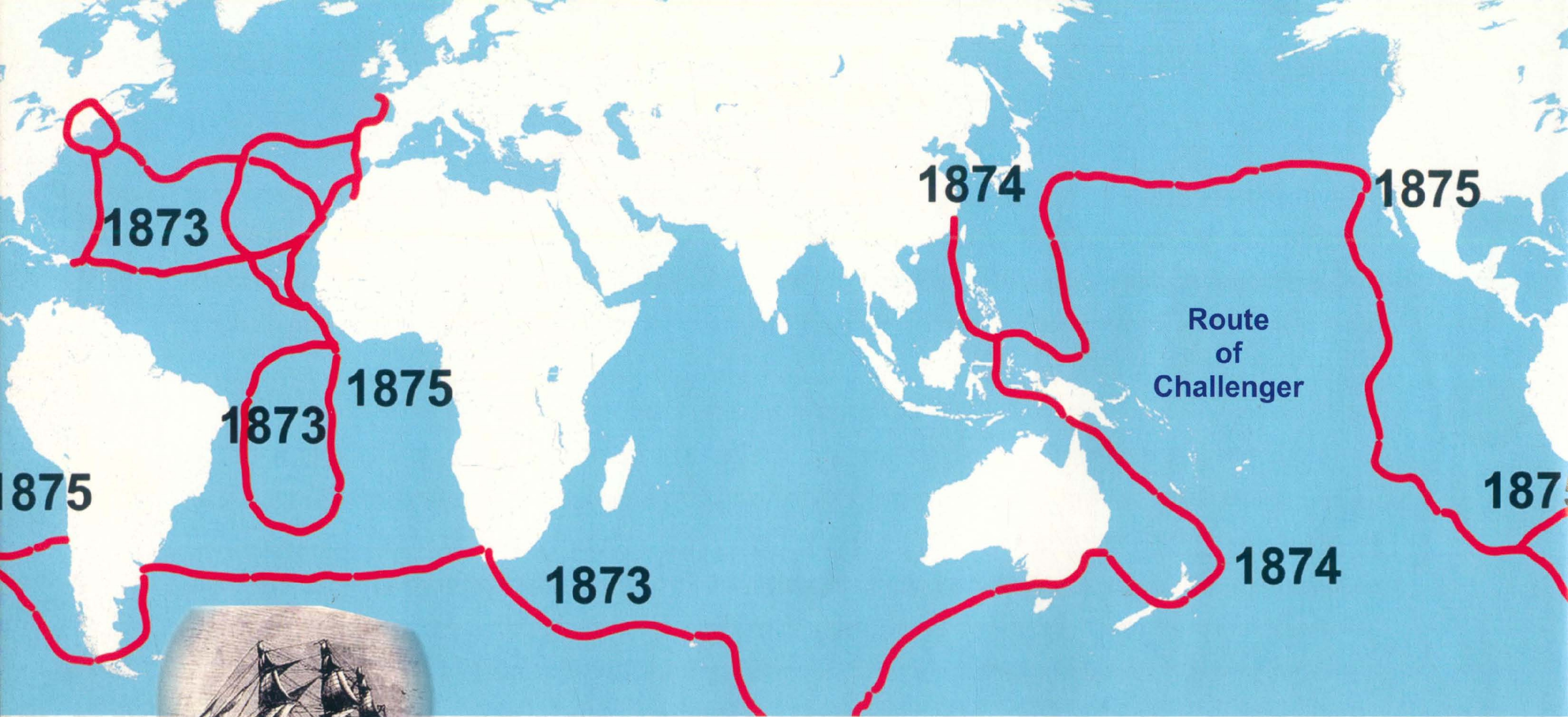

Challenger Expeditino (1872-1875) H.M.S. Challenger Sampled the ocean across the Globle heralding the beginning of oceanography as a science discipline.

(49) दक्षिण महासागर में प्रवास.....

उन्नीसवीं सदी में चैलेन्जर नामक ब्रिटिश स्टीमर दक्षिण महासागर में ६९,००० मील घूमा और तीन वर्षों के बाद वह अपनी मूल जगह पर लौट आया। वैज्ञानिक पृथ्वी को गेंद जैसी गोल मानते हैं और उनका यह सिद्धान्त यदि सच है तो दक्षिण गोलार्ध में पृथ्वी की परिधि दस से बारह हजार मील होना चाहिए। इसलिए कोई भी स्टीमर कुतुबनुमा के अनुसार यदि एक ही दिशा में सफर करे, तो दस से बारह हजार मील के पश्चात्, उसे पुनः मूल स्थान पर आ जाना चाहिए। चैलेन्जर नामक स्टीमर ने ६९,००० मील का प्रवास किया। इतनी दूरी में तो उसे छः बार तथाकथित पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर वापस आ जाना चाहिए था। जबकि वास्तविकता यह है कि दक्षिण दिशा में पृथ्वी का घेरा बढ़ता जाता है और इसलिए स्टीमर को अधिक दूरी तय करनी होती है। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोल नहीं है।

(50) पृथ्वी स्थिर ही दिखाई देती है.....

आज के वैज्ञानिक कहते हैं कि पृथ्वी जून माह में अंतरिक्ष में जिस स्थल पर होती हैं वहाँ से जब वह दिसम्बर माह में आती है, तब तक वह करीब १९ करोड़ मील दूर आ जाती है। यदि यह बात सच हो, तो पृथ्वी से हम जो ध्रुव का तारा देखते हैं, उसका स्थान भी इन छः महीनों में बदला हुआ दिखना चाहिए। लेकिन हकीकत यह है कि इस छः माह की अवधि में ध्रुव के तारे के स्थान में एक अंश का फर्क भी हमें दिखाई नहीं देता हैं। यदि हम १९ करोड़ मील दूर खिसक जाते हों और फिर भी ध्रुव के तारे का स्थान न बदलता हो, तो फिर यह सब भ्रम ही होना चाहिए। या तो फिर ध्रुव का तारा भी सूर्य की प्रदक्षिणा करता होगा या फिर पृथ्वी स्थिर है। ध्रुव का तारा भी घूमता होगा, इसकी कोई संभावना नहीं है, इसलिए पृथ्वी को स्थिर ही मानना चाहिए।

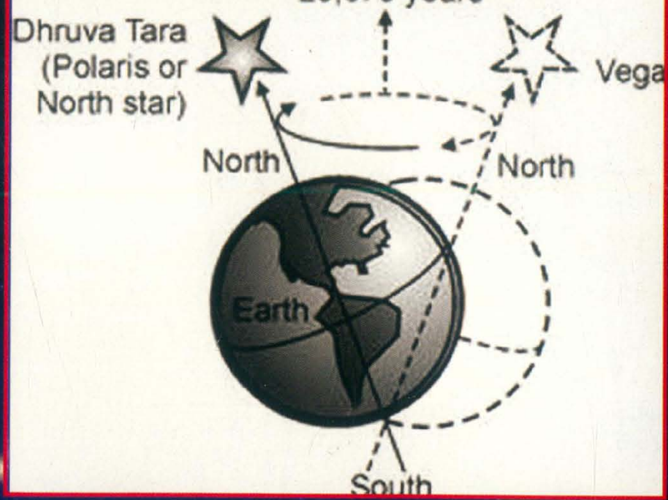

(51) चन्द्रमा के उदय व अस्त होने की दिशाएँ.....

आज के वैज्ञानिक कहते हैं कि चन्द्रमा पश्चिम से पूर्व की दिशा में पृथ्वी की प्रदक्षिणा करता है। हमारा अवलोकन बताता है कि चन्द्रमा पूर्व दिशा में उदित होता है और पश्चिम में अस्त होता है। एक ही चन्द्रमा दो परस्पर विरुद्ध दिशाओं में गति नहीं कर सकता है। सूर्य पूर्व दिशा में उदित होता है और पश्चिम में अस्त होता है, इसलिए आज के वैज्ञानिकों का कहना है कि पृथ्वी पश्चिम से पूर्व दिशा में घूमती है। यदि पृथ्वी को पश्चिम से पूर्व की ओर फिरते हुए दिखाना हो तो चन्द्रमा को भी पश्चिम से पूर्व की ओर गति करते हुए बताना पडेगा न ? आज का विज्ञान बताता है कि चन्द्रमा पृथ्वी के चारों ओर घूमता है। इस मान्यता के कारण ही चन्द्रमा की गति के बारे मे इतनी उलझने उत्पन्न हो गई हैं। ये उलझनें ही सिद्ध करती हैं कि वैज्ञानिकों की यह मान्यता कि पृथ्वी घूमती है, पूरी तरह भूल युक्त है।

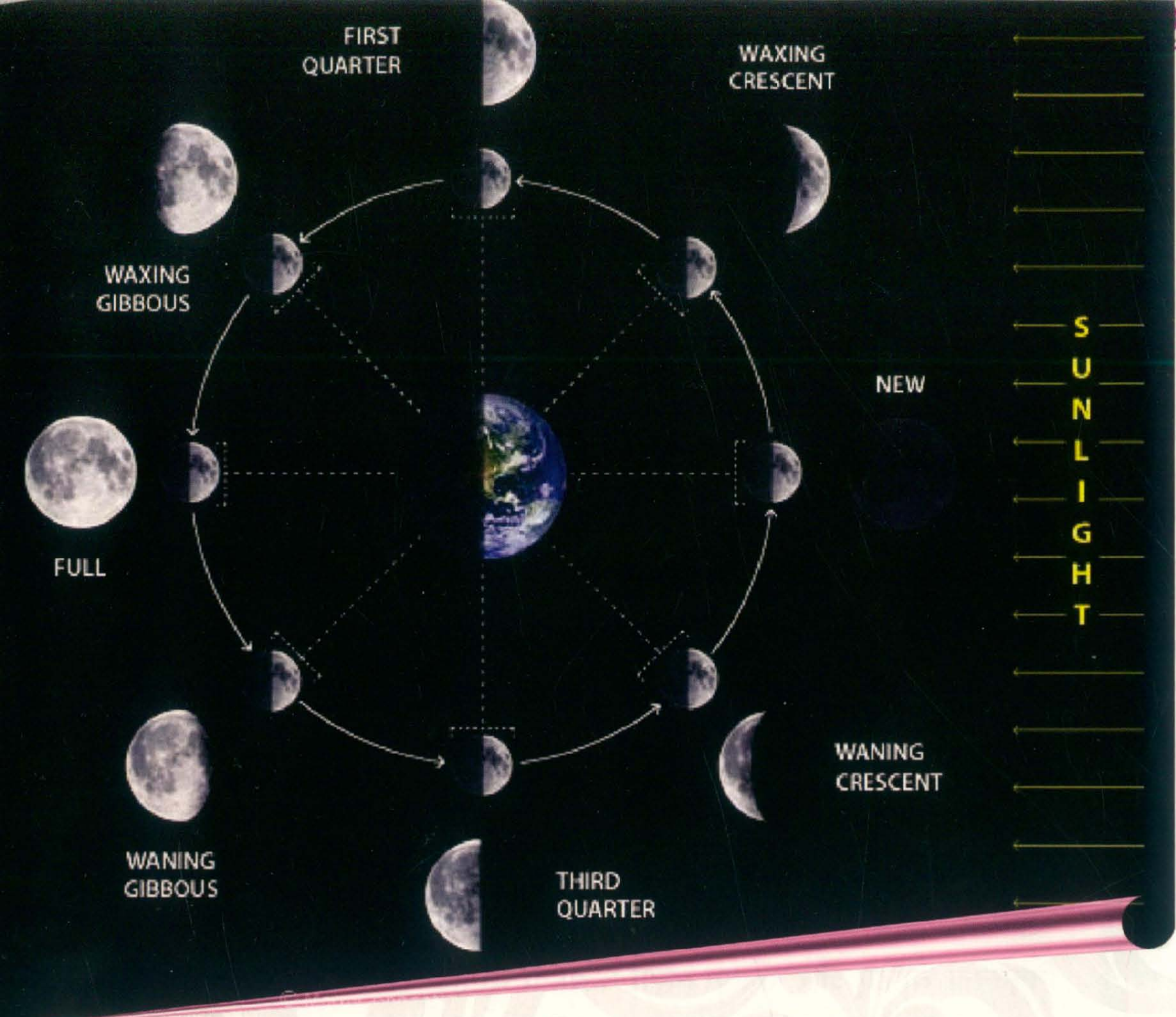

(52) चन्द्रमा की प्रदक्षिणा के बारे में उलझन.....

आज के वैज्ञानिक हमें यह समझाने की कोशिश करते हैं कि पृथ्वी के चारों ओर चन्द्रमा को एक प्रदक्षिणा पूरी करने में २८ दिन लगते हैं और स्वयं की धुरी पर एक चक्कर लगाने में भी २८ दिन का समय लगता है। हमारे निरीक्षणों से यह मालूम होता है कि लगभग २५ घंटों में पृथ्वी की वर्तुलाकार परिक्रमा चन्द्रमा पूरी कर वह अपने मूल स्थान पर आ जाता है। हमें जो दिखाई दे रहा है उसे सच समझें या जो वैज्ञानिक बता रहे हैं उसे सच समझें ? हमारा निरीक्षण हमें बताता है कि तीस दिनों में पृथ्वी की सूर्य जितनी प्रदक्षिणा करता है, उससे चन्द्रमा एक प्रदक्षिणा कम करता है अर्थात् चन्द्रमा प्रतिदिन १२ अंश पीछे जाता है। चन्द्रमा १२ अंश पीछे रहता है, उसका निरूपण वैज्ञानिक इस प्रकार देते है कि वह विपरीत दिशा में प्रतिदिन १२ अंश आगे आता है। यह मान्यता न तो तर्कयुक्त और न ही वैज्ञानिक अभिगम की है।

(53) देशांश वर्तुलाकार नहीं है.....

पृथ्वी की जिस प्रकार पूर्व-पश्चिम प्रदक्षिणा की जा सकती है, उस प्रकार से उत्तर-दक्षिण प्रदक्षिणा नहीं की जा सकती है और न ही आज तक किसी ने की है। किसी गोले को तब ही सत्य माना जा सकता है, जब उसकी पूर्व-पश्चिम व उत्तर-दक्षिण सहित किसी भी दिशा में प्रदक्षिणा की जा सके। हमें यह भी बताया जाता है कि उत्तर ध्रुव और दक्षिण ध्रुव को जोडने वाली रेखाएँ वर्तुलाकार हैं और उन्हें देशांश कहा जाता है। वास्तव में ये रेखाएँ वर्तुलाकार नहीं हैं, क्योंकि उनमें एक बिंदु से एक दिशा की ओर प्रवास कर पुनः उस बिंदु पर लौट कर नहीं आ सकते हैं। वैज्ञानिक देशांश को ३६० अंशों में विभाजित कर देते हैं जो एक बडी भूल है। वर्तुल ३६० अंशों का होता है, लेकिन देशांश वर्तुलाकार नहीं है, इसलिए उसके कोई अंश नहीं हो सकते हैं। देशांश पर वर्तुलाकार में प्रदक्षिणा नहीं हो सकती है और इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोल नहीं है।

(54) ध्रुव तारा नीचे खिसकता जाता है.....

यदि हम किसी सपाट मैदान पर, किसी ऊँची वस्तु से दूर जाते हैं, तब जैसे-जैसे हम दूर जाते हैं, वैसे-वैसे उस वस्तु की ऊँचाई के कम होते जाने का आभास हमें होता है। यह बात यदि छोटे स्तर पर लागू होती है, तो बड़े स्तर पर भी यह लागू होगी। वस्तु चाहे जितनी ऊँची हो और हम उससे कितने भी दूर जाएँ, तब भी नियम तो वही रहेगा। इसी नियम के अनुसार ही जब हम ध्रुव तारे से दूर जाते हैं, तब वह आकाश में अधिक से अधिक नीचा दिखाई देने लगता है। आज के वैज्ञानिक कहते हैं कि चूंकि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है, इसलिए ऐसा होता है। जिस प्रक्रिया को दृष्टिसापेक्षता के सरल सिद्धान्त के द्वारा समझाया जा सकता है, उसके लिए जरूरी नहीं है कि पृथ्वी को गोल मान लिया जाय। इस प्रक्रिया के द्वारा पृथ्वी को गोल सिद्ध करना ही एक प्रकार की अप्रमाणिकता है।

(55) समुद्र का पानी बाहर नहीं फिंकता है.....

पृथ्वी यदि अपनी धुरी पर १९ मील प्रति सेकन्ड की गति से गोल-गोल घूमती है, तो पृथ्वी की सतह पर समुद्र का पानी किसी भी स्थिति में स्थिर नहीं रह सकता है। बर्फ के गोले के बीच सलाई डाल कर जब उसे गोल-गोल घुमाया जाता है, तब भी बर्फ पिघलने लगता है और चारों ओर पानी के छींटे उडते हैं, जबकि पानी का तो गोला बन ही नहीं सकता है। यदि ऐसा मानें कि इस प्रकार का गोला बना कर उसे चक्कर के साथ घुमाया जाय, तब क्या चारों ओर पानी बिना उडे रह सकेगा ? पृथ्वी पर के महासागरो का पानी यदि गोले जैसा हो और पृथ्वी १९ मील प्रति सेकन्ड की गति से गोल-गोल घूम रही हो, तो क्या महासागरों का पानी आकाश में सैकड़ों मील तक बिना उछले रहेगा ? ऐसा नहीं होता है, जिससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी घूमती नहीं है और वह गोल भी नहीं है।

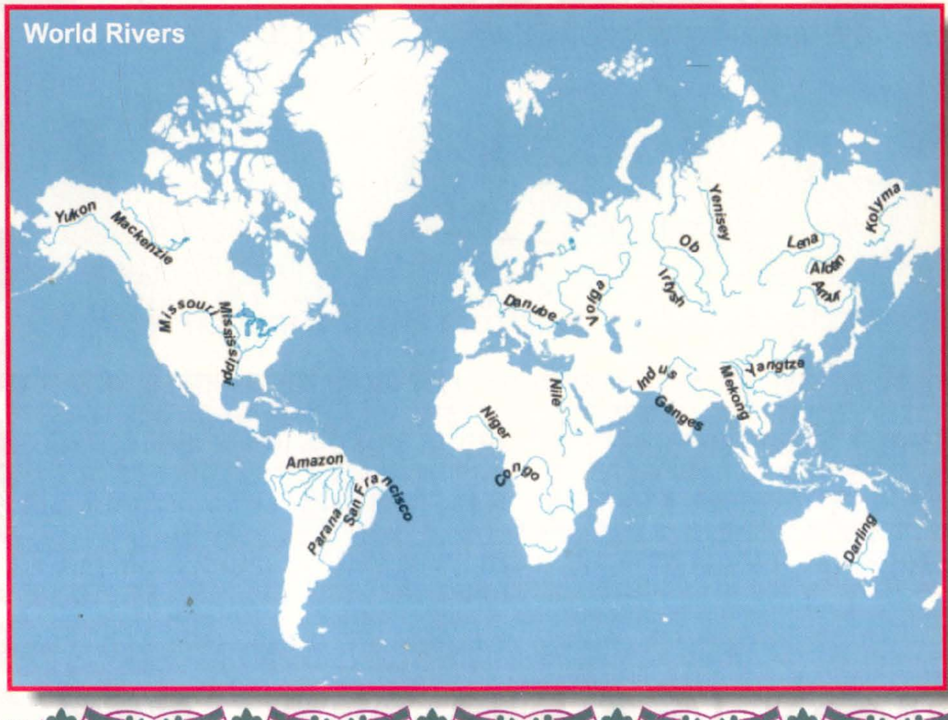

(56) नदियाँ सब दिशाओं में बहती हैं.....

इस पृथ्वी पर ऐसी नदियाँ हैं जो पूर्व, पश्चिम, उत्तर व दक्षिण सभी दिशाओं में बहती हैं। अब यदि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है तो सब नदियों को उत्तर दिशा से निकलना चाहिए और दक्षिण दिशा में बहना चाहिए। जबकि वास्तविकता यह है कि कई नदियाँ ऐसी हैं जो दक्षिण दिशा से निकलती हैं और उत्तर दिशा में बहती हैं। ये नदियाँ पृथ्वी के गोले के नीचे के भाग में से निकलती हैं और ऊपर जाती हुई दिखती हैं। इन नदियों की लम्बाई में पृथ्वी की मोटाई भी सम्मिलित हो जानी चाहिए। इससे यह अर्थ निकला कि नदियाँ पहाड़ी की एक ओर से ऊपर चढ़ती हैं ओर दुसरी ओर से नीचे उतर जाती हैं। जबकि हकीकत यह है कि पानी सदैव नीचे की ओर गति करता है। बिना किसी बाहरी बल के वह ऊपर चढ़ नहीं सकता है। पृथ्वी यदि गेंद जैसी गोल हो तो नदियों को पहाड़ी पर चढ़ना पडे। यह संभव नहीं है, इसलिए यह साबित होता है कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल नहीं है।

(57) पानी की सतह उन्नतोदर नहीं हो सकती है.....

पृथ्वी को यदि गेंद जैसी गोल मानें तो पृथ्वी पर के महासागरों की सतह को भी गोल मानना पड़ेगा। पानी के किन्हीं भी दो संग्रह को यदि जोडा जाय तो उनका स्तर एक हो जाता है। यह तथ्य अनेक प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया जा सकता है। जब एक खगोलविद से सवाल किया गया कि - ''क्या यह सच है कि पानी अपनी सतह स्वयं ढूंढ लेता है ?'' तब उन्होंने उत्तर में कहा कि - ''यह मुद्दा व्यवहार में सत्य है, लेकिन सिद्धान्त में नहीं।'' पृथ्वी को गेंद जैसी गोल सिद्ध करने के लिए वैज्ञानिक पूर्व में स्थापित सिद्धान्तों को मानने से भी इन्कार कर देते हैं। यदि यह सिद्धान्त सत्य है कि पानी एक ही सतह पर रहता है, तब यह मान्यता कि पृथ्वी गोल है, गलत सिद्ध हो जाती है।

(58) अंतरिक्षीय पदार्थ ही गोल है.....

यूरोप के स्कोडलर नामक खगोलशास्त्री अपनी पुस्तक ''बुक ऑफ नेचर'' में तर्क देते है - ''हम देखते है कि आकाश स्थित सूर्य, चन्द्र, ग्रह, तारे आदि पदार्थ गेंद जैसे गोल हैं। इसलिए हम निस्संदेह कह सकते हैं कि पृथ्वी भी गेंद जैसी गोल है।'' आज के खगोलशास्त्री इस प्रकार के अवैज्ञानिक निवेदनों के द्वारा पृथ्वी को गेंद जैसी गोल सिद्ध करने की भरपूर कोशिश करते हैं। यदि वे यह बताना चाहते हैं कि पृथ्वी भी अन्य अंतरिक्षीय पिंडों जैसी ही है तो सर्वप्रथम उन्हें उनकी साम्यता के प्रमाण उपलब्ध कराना चाहिए। ऐसे किसी भी स्वतंत्र सबूत के अभाव में पृथ्वी को अन्य किसी अंतरिक्षीय पिंड जैसा गोल नहीं माना जा सकता है। अंतरिक्षीय वस्तुएँ गेंद जैसी गोल होती हैं, मात्र इस मुद्दे के आधार पर यह सिद्ध नहीं होता है कि पृथ्वी भी गेंद जैसी गोल है। ऐसे स्वतंत्र सबूत के अभाव में यह सिद्धान्त कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है, गलत सिद्ध हो जाता है।

(59) आकृतियों से भ्रम उत्पन्न हो सकता है.....

आज के वैज्ञानिक पृथ्वी को गेंद जैसी गोल सिद्ध करने के लिए कई प्रकार की आकृतियाँ बनाते हैं, लेकिन अनुपात आदि पर ठीक से ध्यान न दिए जाने के कारण उन आकृतियों से धोखा होने की स्थिति निर्मित हो जाती है। ''कार्नेल्स जॉग्रफी'' नामक पुस्तक में यह सिद्ध करने के लिए एक चित्र उसमें दिया गया है। इस चित्र में एक जहाज को एक वक्र रेखा पर चार विभिन्न स्थलों पर दर्शाया गया है। यहाँ जो मोड है, वह ७२ अंश का है। पृथ्वी की परिधि यदि २५,००० मील की है तो ७२ अंश ५००० मील के तुल्य होंगे। इसके समक्ष जहाज की जो लम्बाई दर्शाई गई है, उस प्रकार के दस जहाज ही उस वक्र रेखा पर आ सकेंगे। उस गणना के अनुसार एक जहाज की लम्बाई ५०० मील होना चाहिए। आकृती में जो दर्शक बताया गया है उसकी ऊँचाई चित्र में दिए स्केल के अनुसार २०० मील होना चाहिए। पृथ्वी को गोल सिद्ध करने के लिए इस प्रकार की भ्रमित करने वाली आकृतियाँ तैयार की जाती है।

(60) तारों की तुलना में पृथ्वी घूमती नहीं है.....

ब्रिटेन के खगोलशास्त्री श्रीयुत हाईन्ड का कहना है कि - ''पत्थर पर सेट किए गए दूरबीन से जब खगोलविद् तारों को देखते हैं, तब पृथ्वी की गति के कारण तारे भी एक-दो बाल के अन्तर पर खिसकते हुए दूरबीन के माध्यम से मालूम पड़ते हैं।'' यहाँ श्री हाईन्ड कहना चाहते हैं कि तारे स्थिर हैं, लेकिन पृथ्वी चूंकि सूर्य के चारों ओर ६० करोड़ मील के पथ पर प्रदक्षिणा करती है, इसलिए लाखों मील में जो तारे हैं, वे भी कुछ खिसकते हुए दिखाई देते हैं। यदि तारे करोड़ों मील दूर हैं तो पृथ्वी की गति उनकी तुलना में अत्यन्त सूक्ष्म है और इस गति के कारण तारे खिसकते हुए दिखाई नहीं देंगे। तारे यदि खिसकते हुए दिखाई देते हो तो उसका एक मात्र कारण यही हो सकता है कि तारे आकाश में वास्तव में खिसकते हैं। तारों के खिसकने से यह सिद्ध नहीं होता है कि पृथ्वी घूमती है।

(61) चीन की लम्बी दीवार.....

आज से लगभग २,५०० वर्ष पूर्व चीन की लम्बी दीवार निर्मित हुई थी। उपग्रहों द्वारा ली गई तस्वीरों में भी इस दीवार को स्पष्ट देखा जा सकता है। यह दीवार लगभग २,००० किलोमीटर लम्बी, २३ फुट चौड़ी और ५० फुट ऊँची है। पृथ्वी यदि गेंद जैसी गोल हो तो इस दीवार को चाप की तरह निर्मित करना पड़े और पत्थरों को उसी प्रकार से जमाना पड़े जिस प्रकार से चाप के आकार में जमाना हो। इस दीवार को बनाने वाले इंजीनियर तो पृथ्वी को सपाट ही मानते थे, इसलिए इसकी डिजाइन उन्होंने सीधी दीवार की तरह ही बनाई थी। यदि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है, तो इस दीवार में कई जगहों पर ऊपर के भाग में तिराड उत्पन्न हो जाना चाहिए। ऐसी तिराड नहीं बनी और इससे ही सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोल नहीं बल्कि समतल है। पृथ्वी के सपाट होने का सबसे बड़ा प्रमाण चीन की दीवार ही है।

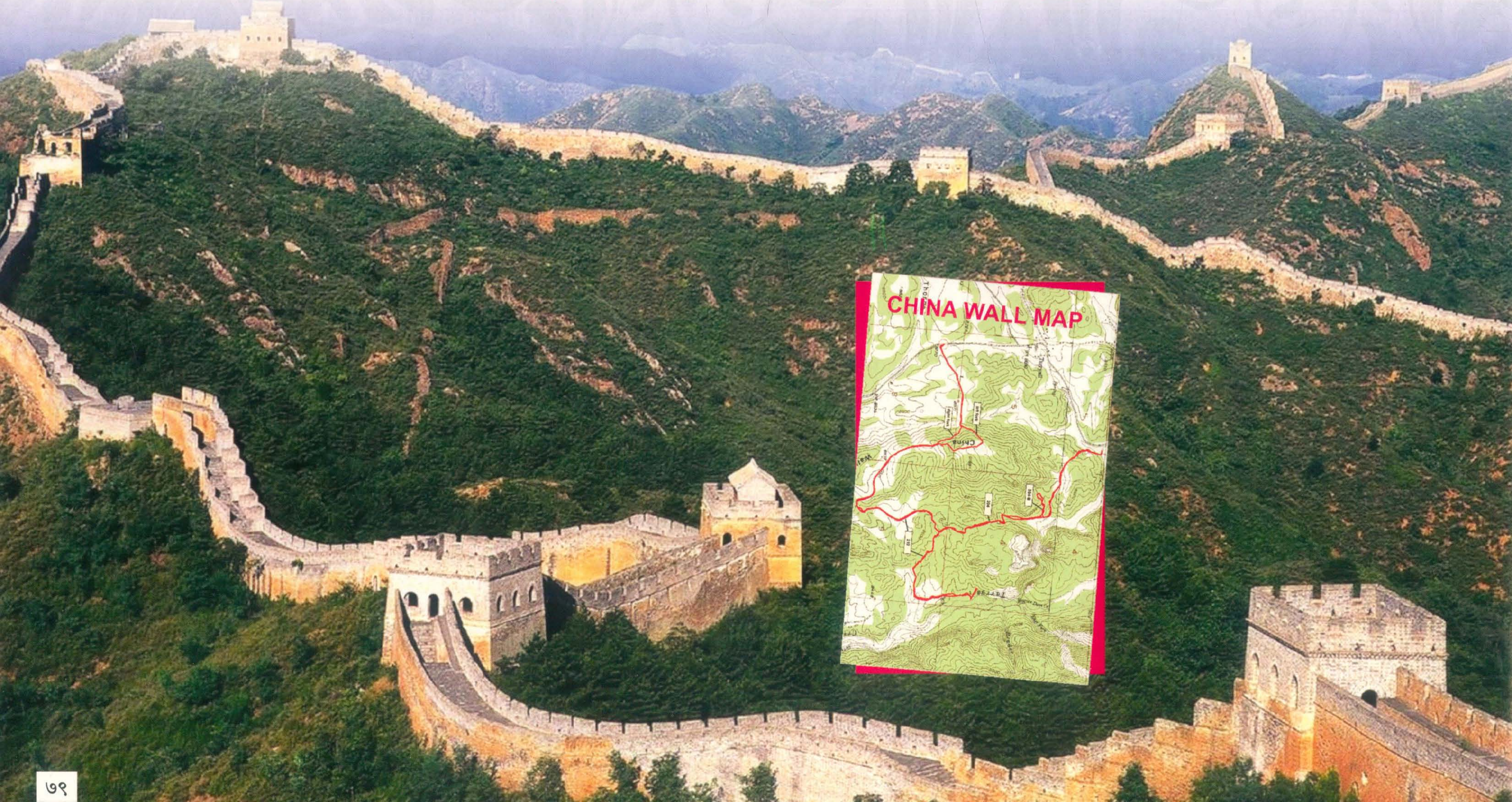

(62) अंटार्कटिका खंड में प्रवास.....

जिस प्रकार चैलेन्जर नामक ब्रिटिश स्टीमर ने दक्षिण महासागर में ६९,००० मील का प्रवास किया था, उसी तरह सन् १९३८ में जे.रॉस और डि. प्रेजर नामक दो साहसियों ने स्लेज गाडी में बैठकर दक्षिण में स्थित बर्फाच्छादित अंटार्कटिका खंड की यात्रा की थी। चार वर्षों तक एक ही दिशा में उन्होंने लगभग चालीस हजार मील का प्रवास किया था, फिर भी वे अपने पूर्व स्थल पर लौट कर वापिस नहीं आ पाए। प्रवर्तमान विज्ञान के अनुसार तो उन्होंने पृथ्वी के दक्षिण गोलार्ध की चार बार प्रदक्षिणा कर लेनी चाहिए थी। अन्त में परेशान होकर उन्होंने ४०,००० मील विपरीत दिशा में प्रवास किया, तब कहीं वे मूल स्थल पर लौट कर आ सके। अंटार्कटिका खंड में आज तक अन्य किसी साहसी ने इतना लम्बा प्रवास नहीं किया था। कोई भी यदि इस प्रकार प्रवास करे, तो आसानी से सिद्ध हो जाता है कि पृथ्वी गोल नहीं है।

(63) कृत्रिम उपग्रह की तस्वीरें थाली की तरह गोल होती हैं.....

पृथ्वी के गेंद जैसे गोल होने के प्रमाण के रूप में आजकल अंतरिक्ष में भेजे गए कृत्रिम उपग्रहों के कैमरों से प्राप्त तस्वीरों को हमें बताया जाता है। इसमें पहली बात तो यह है कि पृथ्वी को गेंद जैसी गोल दिखाने के लिए त्रिआयामी कैमरे (थ्री डी कैमरे) की जरूरत रहती है। इस प्रकार के कैमरे किसी कृत्रिम उपग्रह पर दिखाई नहीं देते हैं। कृत्रिम उपग्रह पर से ली गई तस्वीर में यह स्वभाविक है कि उसमें पृथ्वी थाली जैसी गोल दिखाई दे। सूर्य का जो प्रकाश क्षेत्र होता है, वह थाली जैसा गोल होता है। सूर्य का प्रकाश पृथ्वी के जिस भाग पर फैलता है, वहाँ रोशनी हो जाती है और शेष भाग में अंधेरा होता है, इसलिए वह आकाश जैसा दिखाई देता है। इसलिए कृत्रिम उपग्रह द्वारा जो तस्वीर ली जाती है, उसमें पृथ्वी थाली जैसी गोल दिखाई देती है। इसलिए इससे पृथ्वी गेंद जैसी गोल सिद्ध नहीं होती है।

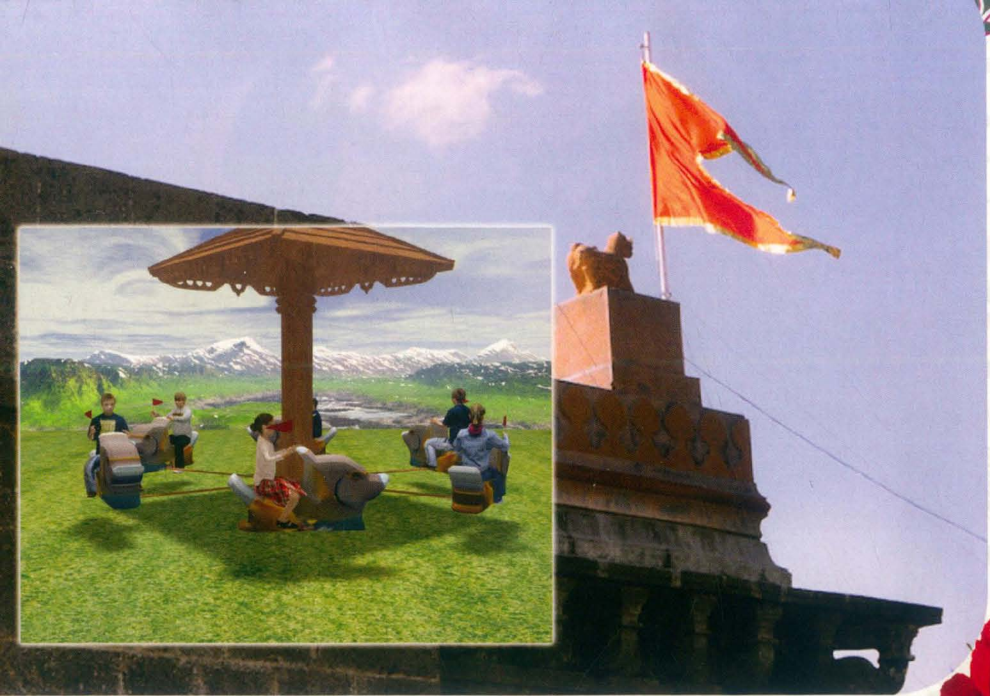

(64) वायु समस्त दिशाओं में बहती है.....

आज के वैज्ञानिकों का कहना है कि पृथ्वी पश्चिम से पूर्व दिशा में प्रति सेकन्ड १९ मील की गति से घूमती है। यदि यह कथन सत्य है तो हमें पश्चिम से पूर्व दिशा में प्रति सेकन्ड १९ मील की गति से चलने वाली तीव्र आंधी का अनुभव होना चाहिए। साथ ही वायु की गति भी मात्र पूर्व से पश्चिम दिशा में ही होनी चाहिए। ऐसा नहीं होता है। पृथ्वी पर वायु विविध समय पर विविध स्थलों पर विभिन्न दिशाओं में बहती हुई अनुभव की जाती है। साथ ही उसका वेग भी एक समान नहीं होता है। वायु कभी मंद और कभी तेज गति में होती है। यह कभी पश्चिम की ओर से बहती है और कभी पूर्व की ओर से। वायु की अधिकतम गति १२० मील प्रति घंटा होती है। यह गति पृथ्वी की नहीं, बल्कि वायु की होती है। यदि पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती हो ध्वज पूर्व से पश्चिम दिशा में ही घूमना चाहिए। ऐसा नहीं होता है, इसलिए इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी घूमती नहीं है।

(65) पृथ्वी के साथ वातावरण नहीं घूमता है....

पृथ्वी पर वायु सभी दिशाओं में बहती है और इसके लिए यह स्पष्टीकरण दिया जाता है कि चूंकि पृथ्वी के घूमने के साथ उसका वातावरण भी घूमता है, इसलिए हमें उसके बहाव का अनुभव नहीं होता है। इसके लिए ट्रेन के डिब्बे में उड रही मक्खी का उदाहरण दिया जाता है। एक ट्रेन सौ मील प्रति घंटे की गति से दौड़ सकती है, लेकिन मक्खी इतनी तेज गति से नहीं उड़ सकती है। लेकिन फिर भी वह डिब्बे की दीवार से टकराती नहीं है, क्योंकि मक्खी हवा में उड़ती है और डिब्बे की हवा ट्रेन के साथ उसकी गति में रहती है। ऐसा होने का कारण यह है कि डिब्बा चारों ओर से बंद है, इसलिए अन्दर की हवा अन्दर ही रहती है। यही मक्खी यदि डिब्बे के बाहर निकल जाय तो वह ट्रेन से भी पीछे रह जायगी, क्योंकि बाहर की हवा डिब्बे के साथ यात्रा नहीं करती है। पृथ्वी बंद डिब्बे जैसी नहीं, बल्कि खुले डिब्बे जैसी है। इसलिए यदि पृथ्वी घूमती भी हो, तब भी वातावरण उसके साथ नहीं घूम सकता है।

(66) पृथ्वी की गति की गणना नहीं की जाती है.....

समुद्र के अन्दर की सबमरीन टोरपिड़ो द्वारा जब स्टीमर को डुबाना होता है तो टोरपिड़ो को सीधे बोट की दिशा में नहीं छोड़ा जाता है। टोरपिड़ो की गति और बोट की गति की गणना कर टोरपिड़ों सतह पर पहुंचता है, क्योंकि बोट कहाँ होगा, उसके अनुसार ही टोरपिड़ो छोड़ा जाता है। इसी प्रकार स्वयंवर में मत्स्यवेध किया जाता है। पृथ्वी पर से तोप का गोला छोड़कर किसी विमान को यदि उड़ा देना हो, तो गोला छोड़ने के पहले विमान की गति और पृथ्वी की गति को भी गणना में लेना चाहिए। कोई भी तोपचालक विमान की गति के साथ पृथ्वी की अर्थात् तोप की गति को गणना में नहीं लेता है, फिर भी तोप के गोले से वह विमान को नष्ट कर देता है। पृथ्वी और तोप को स्थिर मान कर ही गोला छोड़ा जाता है, जिससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी स्थिर है।

(67) सूर्य की गति एक समान रहती है.....

हम जब गोल घूमने वाली चकरी में बैठते है, तब हमें बाहर की वस्तुएँ घूमती हुई दिखाई देती है। बाहर की वस्तुएँ जब दूर होती है, तब वे धीरे-धीरे नजदीक आती हुई दिखती हैं। वे वस्तुएँ जब नजदीक आती हैं, तब तेजी से गुजरती हुई दिखती हैं। चकरी की गति समान होने पर भी ऐसा होता है। यदि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है, तो हमें सुबह और सायंकाल सूर्य की गति कम दिखनी चाहिए और दुपहर में सूर्य की गति अधिक दिखनी चाहिए। हकीकत में ऐसा नहीं होता है, क्योंकि पृथ्वी के केन्द्र की सूर्य प्रदक्षिणा करता है।

(68) गुलैल और डोरी का उदाहरण उचित नहीं है.....

सूर्य के चारों ओर ग्रहों के परिभ्रमण को समझाने के लिए गोफन का उदाहरण दिया जाता है। गोफन में पत्थर रख कर एक व्यक्ति डोरी के द्वारा उसे गोल-गोल घुमाता है, तब उस पर किन-किन बलों का प्रभाव होता है ? गोफन चलानेवाले का शरीरबल पत्थर को दूर धकेलने की कोशिश करता है और डोरी का बल पत्थर को जकड़े रखने की कोशिश करता है। इन दोनों बलों के समायोजन पर पत्थर गोल-गोल घूमता है। वैज्ञानिकों द्वारा दिए गए उदाहरण के अनुसार सूर्य को केन्द्र में रख कर गोफन के पत्थर की तरह ग्रह गोल-गोल घूमते हैं। गोफन चलानेवाले के शरीरबल के स्थान पर अपनी धुरी पर घूमते हुए ग्रहों का केन्द्रत्यागी बल काम करता है, जो ग्रहों को सूर्य से दूर ले जाने की कोशिश करता है। यहाँ डोरी के बल के स्थान पर सूर्य के गुरुत्वाकर्षण बल की कल्पना की गई है। इस उदाहरण में यदि डोरी टूट जाय, तो पत्थर गोल-गोल घूमने के स्थान पर दूर फिंक जाता है। पृथ्वी व सूर्य के बीच क्या कोई ऐसी डोरी है, जो पृथ्वी को सूर्य से बांध कर रखती है ? गुरुत्वाकर्षण बल की तुलना डोरी के साथ नहीं की जा सकती है। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी घूमती नहीं है।

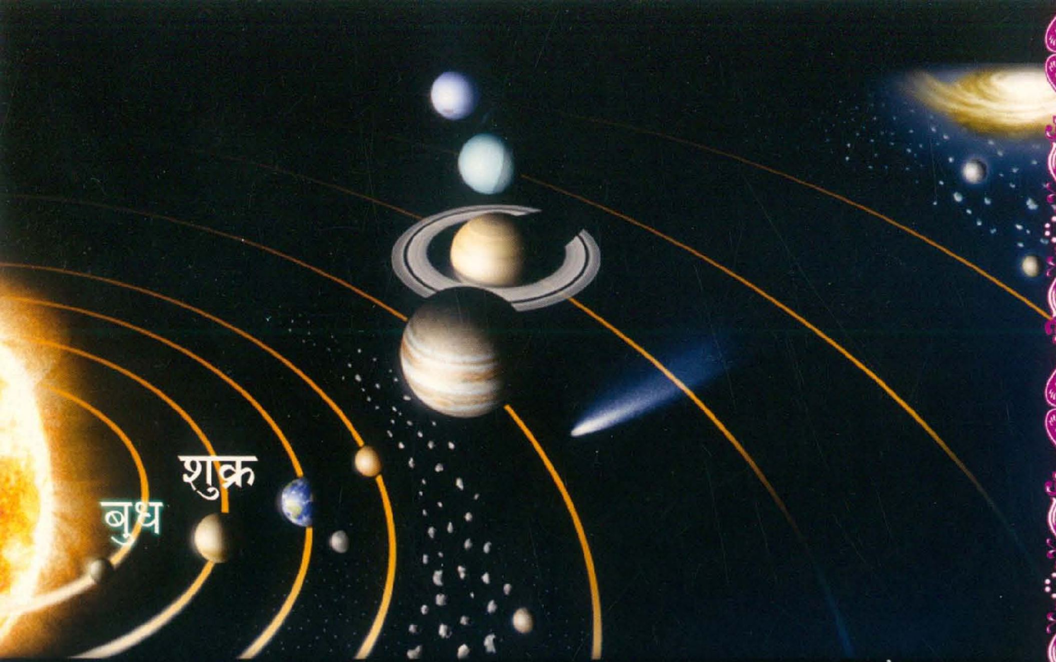

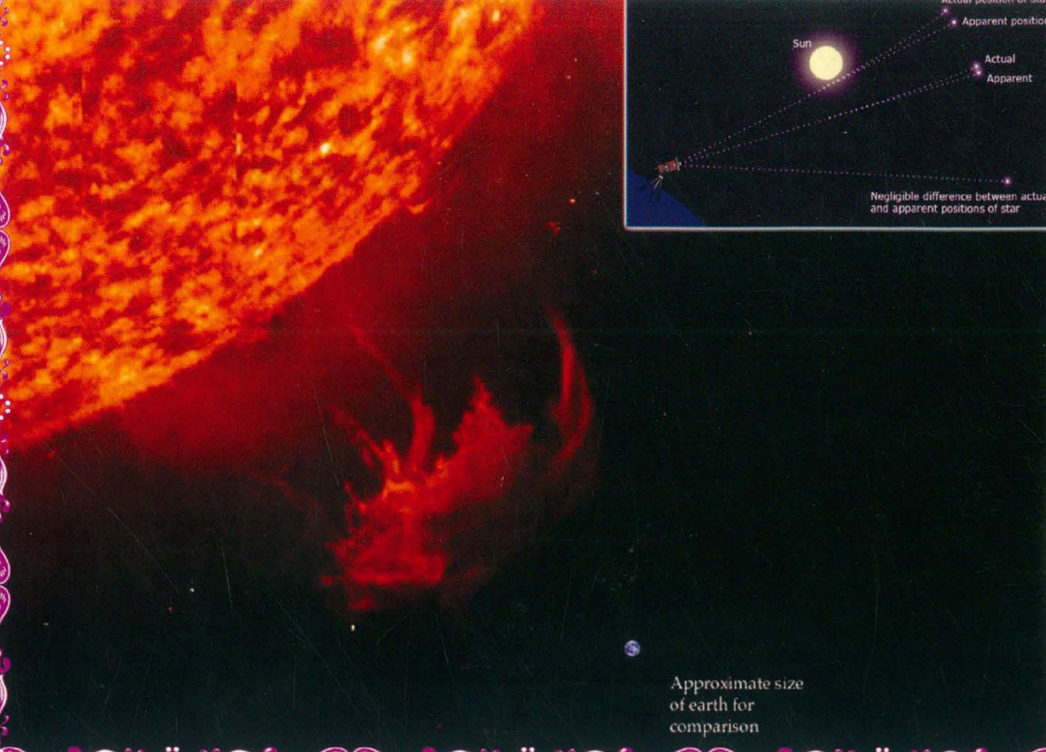

(69) फिर तो बुध-शुक्र दिखेंगे ही नहीं.....

हमें बताया जाता है कि बुध और शुक्र ग्रह उस प्रदक्षिणापथ पर से सूर्य की प्रदक्षिणा करते हैं, जिस पर से सूर्य के चारों ओर पृथ्वी प्रदक्षिणा करती है। यदि ऐसा सच हो, तो हम कभी भी आकाश में बुध और शुक्र को देख ही नहीं सकते। ये ग्रह पृथ्वी और सूर्य के बीच है तब हम उन्हें देख सकते हैं, लेकिन सूर्य के तेज के कारण वे दिखाई नहीं देते हैं। ये ग्रह जब सूर्य के पीछे हों, तब भी सूर्य के तेज के कारण और सूर्य के पीछे ढंक जाने के कारण उन्हें नहीं देखा जा सकता है। पृथ्वी के जिस भाग में रात्रि है, वह भाग सूर्य की विपरीत दिशा में होता है तो उस दिशा में बुध व शुक्र दिखाई नहीं देंगे - क्योंकि उनका प्रदक्षिणापथ पृथ्वी के प्रदक्षिणापथ के बाहर नहीं बल्कि अंदर के भाग में है। यद्यपि रात्रि में हम बुध व शुक्र को देख पाते हैं, जिससे सिद्ध होता है कि सूर्य के चारों ओर पृथ्वी प्रदक्षिणा नहीं करती है।

(70) फिर तो पृथ्वी पर हमेशा ही दिन.....

आज के वैज्ञानिकों का मंतव्य है कि सूर्य पृथ्वी से बारह लाख गुना बड़ा है और सवा नौ करोड़ मील दूर है। इस आकार के अनुसार, यदि सूर्य एक दो फुट के व्यास वाला आग का गोला हो, तो पृथ्वी उससे ४३० फुट दूर एक राई का दाना होगी। सूर्य का कद यदि इतना विराट हो तो उसका प्रकाश एक साथ समग्र पृथ्वी पर पड़ना चाहिए, क्योंकि प्रकाश की किरणों का गुणधर्म होता है, पदार्थ के बाजू से मुड़ जाना। इसे अंग्रेजी में ''डिफलेक्शन ऑफ लाइट'' कहा जाता है। यदि हम राई के दाने को शक्तिशाली टार्च की रोशनी में रखें, तो आधा नहीं बल्कि राई का पूरा दाना ही प्रकाशित हो जाएगा। सूर्य यदि पृथ्वी की तुलना में बारह लाख गुना बड़ा हो तो पृथ्वी पर २४ घंटे उजाला रहना चाहिए। पृथ्वी पर दिन-रात होते हैं, जिससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोल नहीं है और पृथ्वी से सूर्य छोटा है।

(71) सायंकाल सूर्य लाल दिखाई देता है.....

सूर्य जब अस्त होता है तब उसमें से लाल रंग की किरणें बाहर निकलती हैं। इसलिए सूर्य लाल दिखाई देता है। वैज्ञानिक बताते हैं कि सायंकाल सात रंगों में से लाल रंग का अपर्वतन अधिक होता है, इसलिए मात्र लाल रंग की किरणें ही हमारी आँखों तक पहुंच पाती हैं, इसलिए सायंकाल सूर्य लाल दिखाई देता है। यदि ऐसा सच है तो सूर्योदय के समय भी सूर्य लाल ही दिखना चाहिए। अपवर्तन का जो नियम सायंकाल काम करता है, वही नियम उदयकाल के समय भी लागू रहना चाहिए। हकीकत यह है कि जब सूर्य उदित होता है, तब वह लाल दिखाई नहीं देता है। इस विचित्रता को समझाने के लिए कई वैज्ञानिक पृथ्वी को भी धूमकेतु जैसी पूंछ होने की बात करने लगे हैं। वास्तविकता यह है कि सूर्य को पृथ्वी से बड़ा माना जाता है इसलिए यह उलझन उत्पन्न हुई है। पृथ्वी से सूर्य बड़ा नहीं है और इससे ही सिद्ध होता है कि सूर्य के चारों ओर पृथ्वी घूमती नहीं है।

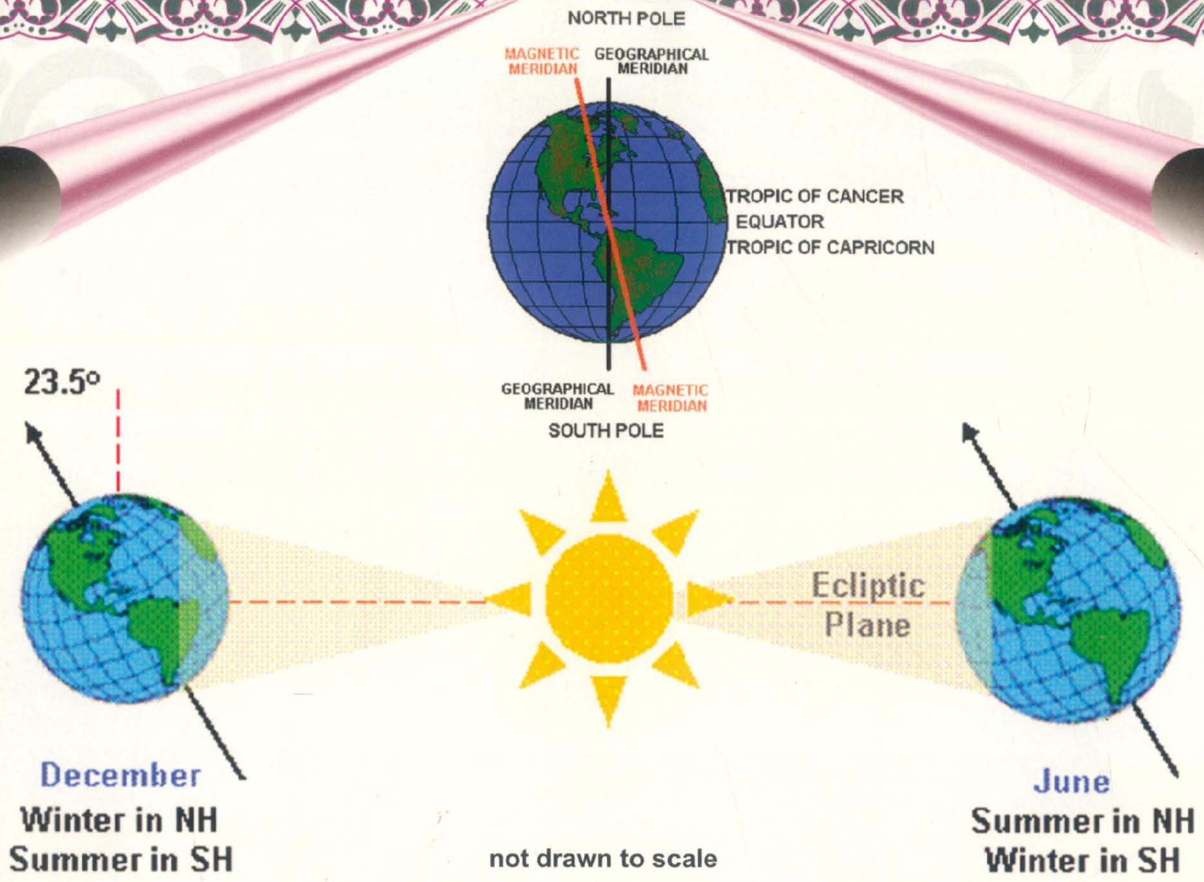

(72) उत्तर व दक्षिण ध्रुव में कोई समानता नहीं....

वैज्ञानिकों का कहना है कि ग्रीष्म में पृथ्वी का उत्तर-ध्रुव सूर्य की ओर झुका रहता है, इसलिए उत्तर ध्रुव पर छः माह का दिन होता है। वैज्ञानिक कहते हैं कि उत्तर ध्रुव में जब शीत होती है तब दक्षिण ध्रुव पर ग्रीष्म होती है। यद्यपि उत्तर ध्रुव पर छः माह का जब दिन होता है, तब दक्षिण प्रदेश में कहीं भी छः माह की रात्रि नहीं होती है। साथ ही जब उत्तर ध्रुव में छः माह की रात्रि होती है, तब दक्षिण प्रदेश में कही भी छः माह का दिन दिखाई नहीं देता है पृथ्वी को गेंद जैसी गोल बताया जाता है, लेकिन उत्तर व दक्षिण ध्रुव में एक जैसी परिस्थिति नहीं पाई जाती है। दक्षिण के प्रदेश में कही भी छः माह का दिन या छः माह की रात नहीं देखी गई। इससे सिद्ध होता है कि दक्षिण ध्रुव का कहीं भी अस्तित्व नहीं है। यदि दक्षिण ध्रुव न हो तो पृथ्वी के गोल होने की और उसके घूमते रहने की बातें गलत सिद्ध हो जाती हैं।

(73) पृथ्वी का व्यास कितना ?.....

जो वैज्ञानिक पृथ्वी को गेंद जैसी गोल मानते हैं, उनके बीच पृथ्वी के व्यास के बारे में मतभेद है। ब्रिटेन के खगोलविद् श्रीयुत हाईन्ड ऐसे दो गणितज्ञों के बारे में बताते हैं, जिनके पृथ्वी के व्यास के बारे में ५५ गज का फर्क है। जबकि जार्ज हर्षल नामक खगोलविद् अपनी पुस्तक में पृथ्वी का व्यास उससे ४८० मील कम बताते हैं। जिन वैज्ञानिकों के पृथ्वी के व्यास के बारे में अलग-अलग आंकड़े हों, उनके अभिप्रायों पर किस प्रकार विश्वास रखा जा सकता है?

(74) वैज्ञानिकों की विचित्र भाषा.....

ब्रिटेन के प्रसिद्ध खगोलविद् रिचर्ड प्रोक्टर एक पुस्तक में लिखते हैं कि – ''यह मानने में कोई आपत्ति नहीं है कि सूर्य के चारों ओर पृथ्वी घूमती है।'' इस वाक्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि पृथ्वी का सूर्य के चारों ओर घूमना, एक मानी हुई बात है और यह प्रमाणित तथ्य नहीं है।

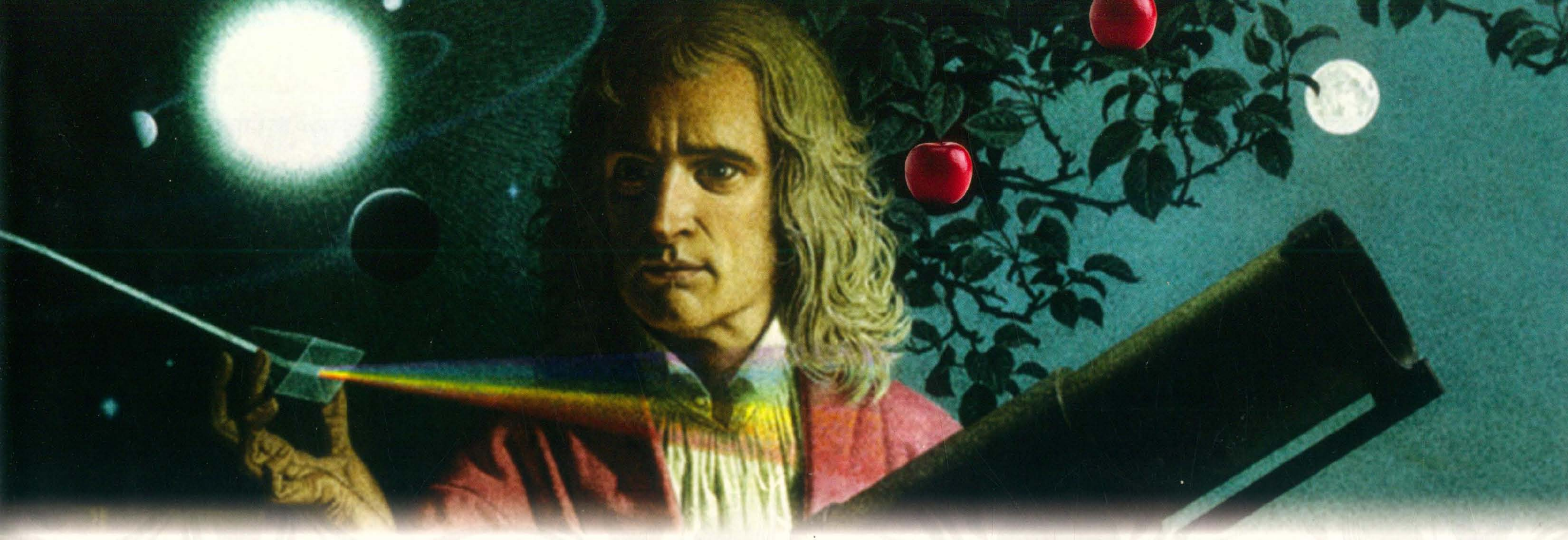

(75) गुरुत्वाकर्षण काल्पनिक विचार है.....

वृक्ष से सेबफल को जब नीचे गिरते हुए देखा, तब सर आइजक न्यूटन को लगा कि पृथ्वी में सब वस्तुओं को अपनी ओर आकर्षित करने की शक्ति है और उस शक्ति को उन्होंने गुरुत्वाकर्षण नाम दिया। जबकि यह हकीकत है कि वह वैज्ञानिकों की एक ऐतिहासिक भूल थी। पृथ्वी यदि सब वस्तुओं को अपनी ओर आकर्षित करती है तो धुंआ नीचे आने के स्थान पर ऊपर की ओर क्यों जाता है ? जमीन पर रखी हुई लोहे की कील क्यों चुम्बक के पास खिंच जाती है ? इन सवालों के जवाब उपलब्ध नहीं है। जबकि वास्तविकता यह है कि अपनी लघु या गुरु प्रकृति के कारण वस्तुएँ नीचे या ऊपर की ओर गति करती हैं। इसमें गुरुत्वाकर्षण की कोई भूमिका नहीं है। न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के नियम के आधार पर ही पृथ्वी को गोल और घूमता हुआ बताया जा सकता है। यह नियम ही जब गलत सिद्ध हो जाता है तब पृथ्वी सपाट और स्थिर सिद्ध हो जाती है।

(76) स्पेस वाक क्या है ?.....

आज के वैज्ञानिकों का कहना है कि, चूंकि बाह्य - अंतरिक्ष में पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण का असर बिल्कुल भी नहीं होता है, इसलिए अंतरिक्ष में आराम से चला जा सकता है। यह कथन भूलों से युक्त है। जैन शास्त्र बताते हैं कि आकाश में पहले तनवायु (पतली वायु) फिर घनवायु (मोटी वायु) और उसके बाद घनोदधि (घन पानी) है, जो एक प्रकार का बर्फ ही है और उस पर बगैर किसी आधार के खड़ा रहा जा सकता है। इस घनोदधि पर ही अंतरिक्षयात्री स्पेस वाक करते हैं। इसके लिए गुरुत्वाकर्षण की उपस्थिति या अनुपस्थिति की कल्पना करने की आवश्यकता नहीं है।

(77) अंतरिक्ष में बहुत शीत है.....

जैन शास्त्रों के अनुसार बाह्य-अंतरिक्ष में घनवायु और घनोदधि है और उसके कई प्रकार के प्रमाण आज के वैज्ञानिक भी देते हैं। सन् १८०४ में गेलुसाक और बीओट नामक फ्रेन्च वैज्ञानिक बलून में बैठकर लगभग चार मील आकाश में ऊँचे गए थे। उन्होंने लिखा है कि वहाँ की हवा में इतनी अधिक शीत थी कि सीसे की स्याही भी उसमें सूख गई थी। अपने साथ जो वे पक्षी ले गए थे, उसे वहाँ उन्होंने हवा में उड़ाने की कोशिश की, लेकिन वह नहीं उड़ सके। कुछ दूरी के पश्चात् वह एक पत्थर की तरह नीचे गिर गये और फिर पंख फड़फड़ाने लगे, लेकिन वह उड़ नहीं सके। वहाँ हवा इतनी अधिक घनी होती है कि उसे फेफड़ों में भी संग्रहित नहीं किया जा सकता है। इससे जैन शास्त्रों में कही गई बात कि बाहरी अंतरिक्ष में घनवायु होती है, सिद्ध हो जाती है।

(78) घनोदधि ४०,००० फुट ऊपर है.....

दिनांक २९.९.१९२१ को अमेरिकी पायलट जे.के. मोकरेडी ४०,८०० फुट तक पहुंचा था। उसके बताए अनुसार - ''इस स्थान पर हवा भारी है। यहां बादल स्थिर हैं और आगे बढ़ने पर बर्फ जैसा कठोर पानी आता है। इस पर कितना भी भार रखा जाय, यह स्थिर ही रहता है। इस वर्णन से जैन शास्त्रों की घनोदधि सिद्ध हो जाती है।

(79) पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य बहुत छोटा है.....

आधुनिक वैज्ञानिकों का कहना है कि पृथ्वी से सूर्य बारह लाख गुना बड़ा है। यदि यह मान्यता सत्य है और पृथ्वी गेंद जैसी गोल है, तो आधी गेंद पर सूर्य का एकदम सीधा प्रकाश पड़ना चाहिए। अर्थात् सूर्य का प्रकाश जितनी पृथ्वी पर पड़े, वहाँ पर सब जगह दुपहर जैसी धूप होना चाहिए। इसके स्थान पर कहीं सुबह, कहीं दुपहर और कहीं सायंकाल होती है, जिससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी से सूर्य बहुत छोटा है और पृथ्वी गोल नहीं है।

(80) सूर्य सिकुडता जा रहा है ?.....

आज के वैज्ञानिकों का कहना है कि सूर्य प्रति २० वर्ष लगभग एक मील सिकुड़ता जा रहा है। यह कथन मात्र एक कल्पना है। सूर्य अनन्त काल से है और अनन्त काल तक वह रोशनी देता रहेगा। सूर्य यदि वास्तव में सिकुडता जा रहा है तो उसका कभी नाश हो भी सकता है। यह संभव नहीं है। इसलिए इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी से सूर्य बड़ा नहीं है और पृथ्वी गोल नहीं है।

(81) बीच समुद्र में पृथ्वी गोल दिखाई देती है ?.....

जब हम बीच समुद्र में होते हैं और चारों ओर नजर घुमाते हैं, तो पृथ्वी दिखाई देती है और इसी आधार पर आज के वैज्ञानिक कहते हैं कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है। बलून में या विमान में बैठकर जाने वाले मनुष्य को भी पृथ्वी गोल दिखाई देती है। वास्तविकता यह है कि इस प्रकार पृथ्वी गेंद जैसी नहीं बल्कि थाली जैसी गोल और सपाट दिखाई देती है। आज तक किसी भी नाविक या पाइलट ने ऐसा दावा नहीं किया है कि उसने पृथ्वी को गेंद जैसी गोल देखा है। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल नहीं है।

(82) क्या सब घूमते हैं ?.....

आज के वैज्ञानिक कहते हैं कि पृथ्वी के चारों ओर चन्द्रमा घूमता है। सूर्य के चारों ओर पृथ्वी घूमती है। संपूर्ण सौरमण्डल किसी केन्द्र के चारों ओर प्रदक्षिणा लगाता है, इस प्रकार कोई भी पिंड स्थिर नहीं है। कई वैज्ञानिक कहते हैं कि पूरा ब्रह्मांड ही एक गुब्बारे की तरह फैलता जा रहा है, जो एक दिन फुट जायगा। ये सब कल्पनाएँ कहाँ तक जाएगी, भगवान जाने परंतु सत्य यही है कि पृथ्वी स्थिर है।

(83) दीवारें समानान्तर होती हैं.....

पृथ्वी यदि गोल है और उसकी सतह पर दो दीवारें यदि समकोण पर निर्मित की जाएँ, तो इन दीवारों की जैसे-जैसे ऊँचाई बढ़ेगी, वैसे-वैसे उनके शीर्ष-भाग के बीच का अन्तर बढ़ना चाहिए। किसी गोले पर समकोण पर दो लकड़ी की पट्टियों को लगाकर इसे प्रयोग कर प्रत्यक्ष देख लें। वास्तविकता यह है कि पृथ्वी पर ये दीवारें अन्त तक समानान्तर रहती हैं, जिससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल नहीं है।

(84) विमान को गति में आने की आवश्यकता क्यों है ?.....

यदि पृथ्वी अपनी स्वयं की धुरी पर १,१०० मील प्रति मिनट की दर से घूमती है तो फिर किसी भी विमान को एक स्थल से दूसरे स्थल पर पहुंचने के लिए पेट्रोल जलाने की कोई जरूरत ही नहीं है। विमान पहले आकाश में ३०,००० फुट ऊँचा जाए और दस मिनट स्थिर रहकर नीचे आ जाए तो फिर अमेरीका आ ही जाना चाहिए। लेकिन ऐसा होता नहीं है, क्योंकि पृथ्वी गोल नहीं है और वह घूमती भी नहीं है।

(85) एक भूल को छिपाने के लिए दूसरी भूल.....

पहली भूल जो आज के वैज्ञानिकों द्वारा हुई है, वह है यह मानना कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है। पृथ्वी यदि गेंद जैसी गोल है, तो वह आकाश में बिना आधार के किस प्रकार रह सकती है ? इस सवाल का जवाब प्राप्त करने के लिए यह कल्पना करनी पड़ी कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है। पृथ्वी यदि सूर्य के चारों और घूमती है, तो सूर्य उसको अपने पास खींच नहीं लेगा ? इस समस्या को हल करने के लिए यह कल्पना करनी पड़ी कि पृथ्वी अपनी धुरी पर भी घूमती है। ये सब कल्पनाएँ उस बड़ी कल्पना पर आधारित हैं कि "पृथ्वी गेंद जैसी गोल है और उसका सबूत उपलब्ध नहीं है।" पृथ्वी को ही जब गोल सिद्ध न किया जा सकता हो, तो आगे की सारी बातें स्वतः ही काल्पनिक सिद्ध हो जाती हैं। आज के वैज्ञानिकों के पास एक भी प्रमाण नहीं है, जिससे सिद्ध किया जा सके कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है और जिससे प्रमाणित किया जा सके कि पृथ्वी स्थिर है और वह सपाट है।

(86) पक्षी घोसलों में वापिस लौट आते है.....

सुबह होती है और पक्षी अपने घोसलों को छोड़कर आहार की शोध में निकल पड़ते हैं। दिन के समय आधे वक्त तो वे आकाश में उड़ते रहते हैं। इस अवधि में तो पृथ्वी अपनी धुरी पर हजारों मील घूम जाती होगी, जिसका हिसाब पक्षियों के पास नहीं हो सकता है। फिर भी शाम होती है और पक्षी अपने घोंसलों में लौट आते है। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी घूमती नहीं है और वह गोल भी नहीं है।

(87) पक्षी आकाश में क्यों उड़ते है ?.....

पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण बल समस्त वस्तुओं पर समान ढंग से पड़ता हो, तो पक्षी आकाश में कैसे उड़ते हैं और वे नीचे क्यों नहीं गिर जाते हैं ? पक्षी के उड़ने के बल के स्थान पर पृथ्वी का आकर्षण बल पदार्थ पर अधिक होना चाहिए, क्योंकि आकर्षण बल पदार्थ की संहिता पर अवलंबित होता है। इससे सिद्ध होता है कि गुरुत्वाकर्षण बल एक भ्रामक मान्यता है।

(88) पक्षियों को गुम हो जाना चाहिए.....

आकाश में हम ऋतु के अनुसार विहार करने वाले पक्षियों को देखते हैं। पक्षी पहले क्षितिज में प्रकट होते हैं, फिर वे मध्य आकाश में आ जाते हैं और फिर सामने के क्षितिज में अदृश्य हो जाते हैं। इस प्रकार पक्षियों के समूह को हम सतत दस से पन्द्रह मिनट तक देख सकते हैं। अब इस दस मिनट में तो पृथ्वी को ११,००० मील घूम जाना चाहिए, इसलिए आकाश में उड़नेवाले पक्षी तो हमें सतत कुछ सेकन्ड से अधिक वक्त तक नहीं दिखना चाहिए। परन्तु ऐसा नहीं होता है, क्योंकि पृथ्वी घूमती नहीं है।

(89) भंवरा धूल के कणों को फेंक देता है.....

जमीन पर भंवरा घूमता है और तब उस पर यदि रजकण डाल दिए जाएँ, तो वह उन धूलकणों को उड़ा देता है। इसी प्रकार पृथ्वी पर के मनुष्य और पशु पक्षी भी दूर फिंक जाना चाहिए। ऐसा नहीं होता है, जिससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोल नहीं है और वह घूमती भी नहीं है।

(90) पृथ्वी पर हम चिपक नहीं जाते है.....

वैज्ञानिक दलील करते हैं कि यद्यपि पृथ्वी प्रचंड वेग से घूमती है फिर भी हम आकाश में फिंक नहीं जाते हैं, क्योंकि पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण बल हमें जकड़े रखता है। यदि पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण बल इस केन्द्रत्यागी बल की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली है तो हम सबको पृथ्वी के साथ पूरी तरह चिपके हुए रहना चाहिए। हम मुक्त रूप से घूमते-फिरते हैं और फिंक नहीं जाते हैं और इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी घूमती नहीं है और वह गोल भी नहीं है।

(91) पृथ्वी की गति का अनुभव नहीं होता है.....

हम जब एक सौ किलोमीटर प्रति घंटे की गति वाली ट्रेन में जब बैठते हैं, तब उसकी गति का अनुभव होता है, तो फिर एक मिनट में १,१०० मील के वेग से घूम रही पृथ्वी की गति का अहसास हमें क्यों नहीं होता है? इसलिए नहीं होता है, क्योंकि पृथ्वी घूमती नहीं है।

(92) प्रतिदिन भूकंप नहीं आते है.....

एक खाली गोले को आधा पत्थरों से भर दें। शेष आधे भाग में गीली मिट्टी भर दें। अब जो भाग खाली रहे उस आधे भाग में पानी भर दें और शेष आधा भाग खाली रहने दें। अब इस गोले के ठीक बीच में से एक सरिया गुजारें और उस सरिए की धुरी पर गोले को जोर से घुमाएँ। इस गोले में मिट्टी, कंकड, पानी आदि के टकराने की आवाज आएगी ही। अब इस गोले में कुछ छेद करें और फिर इसे घुमाएं। छिद्रों में से मिट्टी, पानी, कंकर आदि तेज गति से बाहर आएंगे। आज के वैज्ञानिकों के अनुसार हमारी पृथ्वी भी इस गोले जैसी है, जो प्रति मिनट १,१०० मील की तेज गति से गोल-गोल घूम रही है। तो फिर क्यों इसमें से सब बाहर नहीं आ जाता है? क्योंकि पृथ्वी गोल नहीं है और वह घूमती भी नहीं है।

(93) सब कुछ घूमते रहने चाहिए.....

आज के वैज्ञानिक मानते है कि सूर्य के चारों ओर पृथ्वी घूमती है और वह अपनी धुरी पर भी घुमती है। पृथ्वी यदि सूर्य के आसपास नहीं घूमती हो, तब वह अपनी धुरी पर ही घूमने के कारण अंतरिक्ष में फिंक जाए। अंतरिक्ष में सूर्य भी स्थिर नहीं रह सकता है। न्यूटन के गति के नियम के अनुसार उसे भी किसी तारे के चारों ओर चक्कर लगाना जरूरी है। नहीं तो न्यूटन का नियम गलत सिद्ध हो जाएगा। सूर्य जिस तारे के चारों ओर घूमता होगा, उस तारे को अन्य किसी और बड़े तारे के चारों ओर चक्कर लगाना चाहिए। न्यूटन के नियम के अनुसार अंतरिक्ष में कोई भी पिंड स्थिर नहीं रह सकता है।

इस प्रकार कोई भी अंतरिक्षीय वस्तु अन्य किसी और वस्तु के चारों ओर प्रदक्षिणा करते ही रहना चाहिए। लेकिन अन्त में किसी वस्तु को तो स्थिर मानना ही होगा। लेकिन वह वस्तु क्यों स्थिर है, उसका जवाब न्यूटन के सिद्धान्त से नहीं मिल पाता है। जबकि वास्तविकता यह है कि वह स्थिर पिंड पृथ्वी ही है।

(94) बुध और सूर्य के बीच कोई ग्रह नहीं है.....

बुध एवं सूर्य की गति का आकलन कर आज के वैज्ञानिकों ने गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त के आधार पर यह अनुमान लगाया है कि बुध और सूर्य के बीच ''वल्कन''नामक ग्रह होना चाहिए। दूरबीन से देखने पर आज तक इस नए ग्रह के कोई प्रमाण वैज्ञानिकों को नहीं मिले हैं। इसके आधार पर न्यूटन का सिद्धान्त गलत साबित होता है और साथ ही पृथ्वी के घूमने की मान्यता भी गलत सिद्ध होती है।

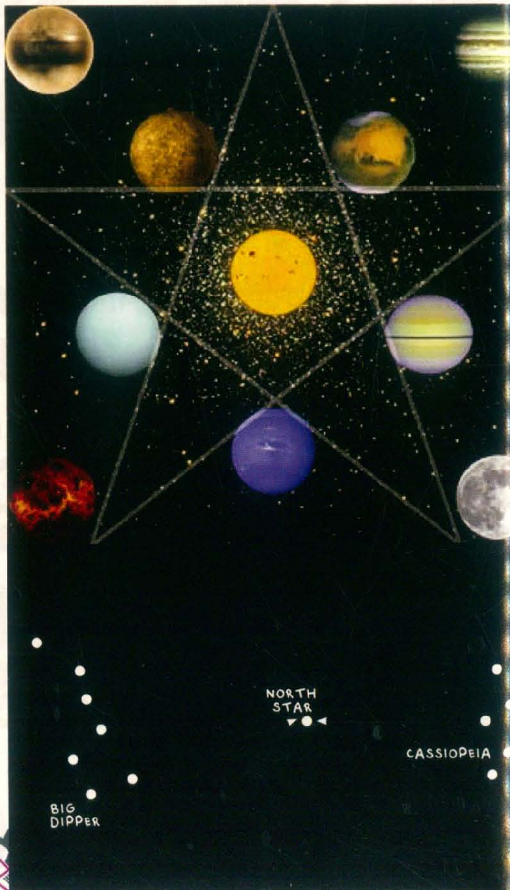

(95) ध्रुव के तारे की प्रदक्षिणा ग्रह करते हैं.....

वैज्ञानिक कहते हैं कि बुध, शुक्र, मंगल, गुरु, शनि आदि ग्रह सूर्य की प्रदक्षिणा करते हैं, लेकिन वास्तविकता में हम देखते हैं कि सभी ग्रह, नक्षत्र और तारे ध्रुव के तारे की प्रदक्षिणा करते हैं। इससे सिद्ध होता है कि सूर्य की प्रदक्षिणा ग्रह नहीं करते हैं। और पृथ्वी ग्रह नहीं है और वह घूमती भी नहीं है।

(96) गुरु ग्रह पृथ्वी जैसा नहीं है.....

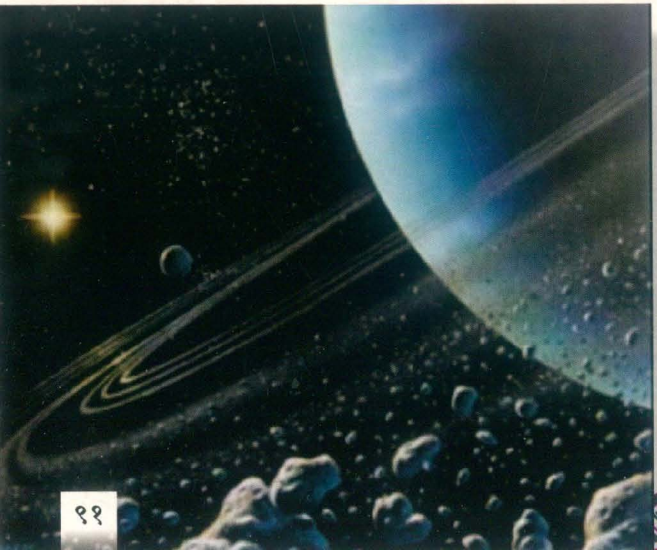

गैलीलियो ने दूरबीन के द्वारा गुरू ग्रह का अत्यन्त सूक्ष्म अध्ययन किया, तब उन्होंने पाया कि गुरु ग्रह के आसपास कुछ उपग्रह हैं जो गुरु के चारों ओर चक्कर लगाते हैं। इस निरीक्षण के आधार पर उनका निष्कर्ष था कि गुरु ग्रह सूर्य के चारों ओर प्रदक्षिणा लगाता है। उनके इस मंतव्य का कोई सबूत नहीं था, लेकिन उन्होंने इस विचार को सच मान लिया। इस आधार पर ही यह भी कल्पना की कि गुरु की तरह पृथ्वी भी सूर्य की प्रदक्षिणा करती है। इस विचार का भी उनके पास कोई प्रमाण नहीं था, लेकिन फिर भी उन्होंने इसे सच मान लिया। इसके बाद कल्पना कि की

जिस प्रकार गुरु ग्रह के चारों ओर उसके उपग्रह प्रदक्षिणा करते हैं उसी प्रकार पृथ्वी का उपग्रह चन्द्रमा है और वह भी पृथ्वी की प्रदक्षिणा करता है। इसका कोई सबूत नहीं है। मात्र कल्पनाओं को हकीकत मान लिया गया है।

(97) मनुष्यों को फिर बांध कर रखना पड़ेगा.....

पृथ्वी यदि वास्तव में गेंद जैसी गोल हो, तो इस गेंद के एकदम ऊपर के भाग पर रहनेवाले मनुष्य और प्राणी ही स्थिर होकर खड़े रह सकेंगे। गेंद की बाजू में और उसके नीचे रहनेवाले प्राणी और मनुष्य कहीं आकाश में गिर न पड़े, इसलिए उन्हें पट्टे से बांध कर रखना चाहिए। इस समस्या का हल बताते हुए वैज्ञानिक बताते हैं कि पृथ्वी के सभी ओर की दिशाओं में जो वस्तुएँ हैं, उन्हें वह केन्द्र की ओर आकर्षित करती है, इसलिए दक्षिण गोलार्ध में लोग गिरते नहीं है। इसके लिए रबर के गोले पर चारों ओर से चुभोई गई सुईयों का उदाहरण दिया जाता है। यहाँ फर्क इतना ही है कि सुइयों को रबर में चुभो दिया गया है, इसलिए वे स्थिर रहती है। जबकि मनुष्य व प्राणी हिलते डुलते हैं। पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के कारण जो प्राणी चिपक गए हो वे हिलना-डुलना नहीं कर सकेंगे। वास्तविकता जबकि यह है कि पृथ्वी के गोल होने और गुरुत्वाकर्षण के होने की दोनों ही बातें गलत हैं।

(98) वजन में फर्क होना चाहिए.....

जो वैज्ञानिक पृथ्वी के गेंद जैसी गोल होने की बात कहते हैं, उनका यह अभिप्राय: भी होता है कि पृथ्वी भूमध्य रेखा के आगे कुछ फूल गई है और उत्तर व दक्षिण ध्रुव पर कुछ चपटी है। यदि यह बात सच है, तो भूमध्य रेखा को गुरुत्वकेन्द्र से दूर होना चाहिए। और यदि यह बात भी सच हो तो किसी मनुष्य का उत्तर या दक्षिण ध्रुव पर जो वजन हो, उसकी तुलना में भूमध्य रेखा पर उसका वजन कम होना चाहिए। इस बात को वैज्ञानिक आज तक सिद्ध नहीं कर सके हैं। पृथ्वी के किसी भी भाग पर किसी भी मनुष्य का वजन एक समान पाया जाता है। इससे सिद्ध होता है कि भूमध्यरेखा पर पृथ्वी फूली हुई नहीं है और यही वास्तविकता है कि वह घूमती भी नहीं है और गोल भी नहीं है।

(99) गोले का मध्यभाग नहीं होता है.....

आज के वैज्ञानिकों का कहना है कि पृथ्वी गोल है, इसलिए इसमें ऊपर, नीचे, दाएँ, बाएँ जैसा कुछ भी नहीं है। यदि यह कथन सत्य है तो इसमें फिर उत्तर ध्रुव, दक्षिण ध्रुव और भूमध्य रेखा किस प्रकार हो सकती हैं? गोले में तो उत्तर, दक्षिण या मध्य संभव ही नहीं है। यदि भूमध्य रेखा पृथ्वी के गोले पर मध्य में खींची गई कोई काल्पनिक रेखा हो, तो गोले के मध्य में इस प्रकार की असंख्य वर्तुलाकार रेखाओं को खींचा जा सकता है। इन सबको क्यों नहीं भूमध्य रेखा कहा जा सकता है? यदि पृथ्वी का गोला सब ओर से समान है, तो फिर क्यों भूमध्यरेखा के नाम से दर्शाया गया भाग ही फूल गया है? ध्रुव प्रदेश क्यों चपटे हैं? इस गोले की क्यों उत्तर-दक्षिण प्रदक्षिणा नहीं की जा सकती है? इन सभी सवालों के कोई जवाब आज के वैज्ञानिकों के पास नहीं है, क्योंकि पृथ्वी गेंद जैसी गोल नहीं है।

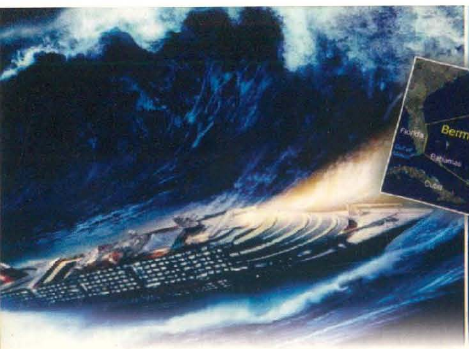

(100) पृथ्वी पर अनजान प्रदेश है.....

आज के भूगोलशास्त्री पृथ्वी का जो आकार प्रस्तुत करते हैं, उसके अनुसार आज की तारीख में पृथ्वी पर एक भी प्रदेश ऐसा नहीं है, जो हमारी जानकारी में न हो और जहाँ हम नहीं पहुंचे हों । फिर भी आज एटलान्टिक महासागर में बरमूडा ट्रेंगल नामक एक विस्तार है, जहाँ बड़े बड़े भीमकाय विमान और स्टीमर्स गुम हो जाते हैं और बाद में उनका कोई पता नही लग पाता है । इन स्टीमरों या विमानों का कबाड़ा या मनुष्यों के शव बाद में कभी भी मिलते नहीं हैं । कहा जाता है कि बरमूडा ट्रेंगल इस प्रकार की अज्ञात पृथ्वी का प्रवेश द्वार है, जहाँ आज तक यह दो पैर वाला इंसान नहीं पहुंच पाया है । पृथ्वी पर यदि ऐसा एक भी प्रदेश हो, तो पृथ्वी का वर्तमान नक्शा गलत सिद्ध हो जाता है और यह मान्यता भी गलत सिद्ध हो जाती है कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है ।

(101) एन्टार्कटिका खण्ड प्रमाण है.....

पृथ्वी गेंद जैसी गोल नहीं है और इसका सबसे बडा सबूत है, दक्षिण महासागर के छोर पर स्थित हिमाच्छादित एन्टार्कटिका खंड । विमान या स्टीमर में बैठकर आज तक यह इन्सान नामक प्राणी इस खंड के आरपार नहीं जा सका है । आज जो लोग भी एन्टार्कटिका का प्रवास करते हैं, वे उसकी परिधि तक जा कर लौट आते हैं, परन्तु केन्द्र तक कोई भी नहीं पहुंच पाता है । आधुनिक विमानों या हेलीकाप्टर्स के द्वारा भी कोई भी व्यक्ति एन्टार्कटिका खंड को पार नहीं कर सका है । इसके लिए किए गए सभी प्रयास अब तक निष्फल ही रहे हैं । आज के वैज्ञानिक जिसे दक्षिण ध्रुव कहते हैं, उस प्रदेश तक अब तक कोई भी पहुंच नही सका है । इससे सिद्ध होता है कि अज्ञात विश्व अत्यन्त ही विशाल है और उसका आरंभ एन्टार्कटिका से होता है । पृथ्वी पर दक्षिण ध्रुव जैसा कोई केन्द्र ही नहीं है और इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोल नहीं है ।

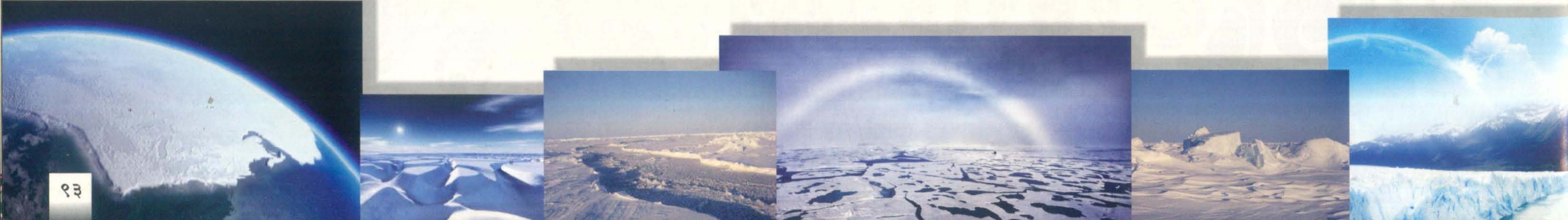

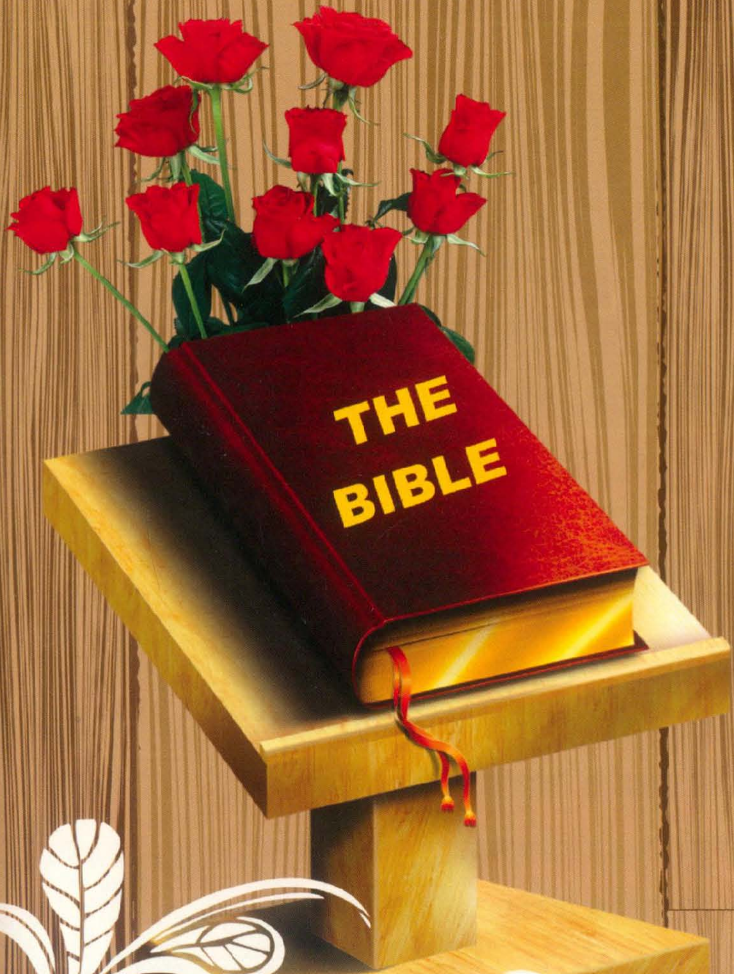

१३. ईसाई धर्म भी पृथ्वी को समतल मानता है....

ईसाईयों के धर्मग्रंथ बाईबल में अनेक स्थलों पर इसी मान्यता को समर्थन दिया है कि पृथ्वी स्थिर और सपाट है। बाईबल के जिनेसिस ११:१-९ (४) में बताया गया है कि - "फिर उन्होंने कहा कि - चलो, हम एक नगर बनाएँ, जिसमें स्वर्ग तक पहुँचने वाली एक मीनार हो।" बाईबल के ईसाइहा ११:१२ में लिखा गया है कि - "फिर वे इजराईल के जाति बाहर किए लोगों को एकत्रित करेंगे और उन्हें दुनिया की चार किनारी पर भेजेंगे।" डेनियल ४:११ में लिखा गया है कि - "फिर वह मजबूत वृक्ष उगा और ऊँचा होकर स्वर्ग तक गया। वहाँ से पृथ्वी का सिरा दिखाई देता था।" बाईबल के साल्म ९३:१ में लिखा है कि - "पृथ्वी इतनी मजबूत है कि उसे हिलाया नहीं जा सकता है।" बाईबल के एक्सेलेसियास्टस १:५ में लिखा है कि - "सूर्य उदित होता है और अस्त होता है। जहाँ से वह उदित हुआ है वहाँ वह शीघ्रता से लौट जाता है।" इन विवरणों से स्पष्ट हो जाता है कि बाईबल के मतानुसार सूर्य घूमता है और पृथ्वी स्थिर है। बाईबल के ईसाईहा ४०:२२ में बताया गया है कि - "वे पृथ्वी के वर्तुल में सिंहासन पर बिराजमान है।" कई आधुनिक वैज्ञानिक इस विधान को पृथ्वी के गेंद जैसी गोल होने की मान्यता के समर्थन के रूप में देखते हैं, लेकिन बाईबल में गोल आकार की बात कही गई है, वह थाली जैसी सपाट गोलाकार होने की बात है। बाईबल के जाँब ३७:३३ में बताया गया है - "मैंने जब पृथ्वी की बुनियाद रखी, तब तुम कहाँ थे?" इस प्रकार ईसाई धर्म में पृथ्वी को स्थिर व सपाट ही मानी गयी है।

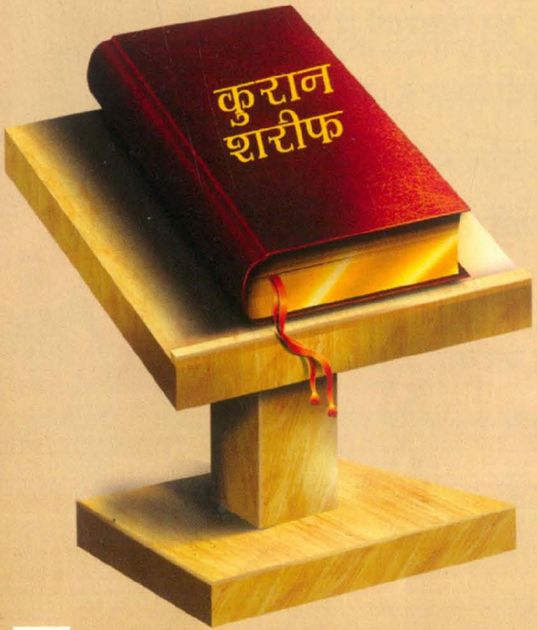

१४. इस्लाम दर्शन में भी पृथ्वी स्थिर है.....

मुस्लिमों के धर्मग्रंथ "कुरान-शरीफ" में भी जगह-जगह बताया गया है कि पृथ्वी स्थिर है और वह सपाट भी है। कुरान-शरीफ की सुरे यामीन आयत-६७ में बताया गया है कि - "सूर्य एक निश्चित मार्ग पर ही चलता है। इसी सुरा की आयत ३८ में लिखा गया है कि - चन्द्रमा भी अपनी स्वयं की निर्धारित मंजिल का राही है। यहाँ तक कि वह कम होते-होते खजूर की एक सूखी डाली जैसा पतला बन जाता है।" आयत-३९ में बताया गया है कि - "सूर्य के लिए संभव नहीं है कि वह चन्द्रमा को जाकर पकड़ ले। दिन के पहले सूर्य भी नहीं आ सकता है । प्रत्येक अपने नियत मार्ग पर चल रहे हैं।" सूरा कातिर की आयत-४९ में लिखा गया है कि - "खुदा ही जमीन और आकाश को स्थिर रख सकते हैं, जिससे वे गिर न जाएँ।" इस प्रकार इस्लाम धर्म में पृथ्वी को स्थिर मानी गयी है।

ले. संजय K. वोरा

१५. पृथ्वी के गोल होने के वैज्ञानिकों के पास कोई प्रमाण नहीं है...

अनादि काल से दुनिया के समस्त आर्य व अनार्य धर्मों में पृथ्वी को सपाट माना गया है। आर्य धर्मों में से जैन, बौद्ध व वैदिक धर्मों में पृथ्वी के तश्तरी जैसी गोल व समतल होने के स्पष्ट पाठ उपलब्ध है। ईसाई धर्म की बाइबल व इस्लाम धर्म की कुरान में भी पृथ्वी को समतल मानी गयी है। पृथ्वी को तश्तरी जैसी गोल व सपाट मानने में कोई वैज्ञानिक अडचनें नहीं हैं। अपने स्वानुभवों, निरीक्षणों व सदियों के पारंपरिक ज्ञान के माध्यम से भी पृथ्वी को स्थिर व समतल सिद्ध किया जा सकता है। इसके विपरीत पृथ्वी को गोल व घूमती हुई मानने का एक भी प्रत्यक्ष प्रमाण आज तक वैज्ञानिक उपलब्ध नहीं करा सके हैं। वास्तविकता तो यह है कि इतिहास के किसी भी दौर में वैज्ञानिक यह सिद्ध नहीं कर सके हैं कि पृथ्वी गोल है और वह घूमती है। पृथ्वी गेंद जैसी गोल है और वह घूमती है यह विज्ञान की दृष्टि में भी केवल एक सिद्धान्त है, हकीकत नहीं है। यूनान में ईसा पूर्व ६४० में थालीज नामक एक दार्शनिक व खगोलशास्त्रीय हुआ। थालीज मानता था कि पृथ्वी तश्तरी जैसी गोल है और वह पानी में तैर रही है। थालीज ने ईसा पूर्व ५८५ में हुए सूर्यग्रहण के बारे में भी उसकी आगाही सफलता पूर्वक कर दी थी। थालीज के ही समकालीन खगोलशास्त्री अनेक्सीमेंडर भी पृथ्वी को गोल व सपाट मानते थे। यूनान में ईसा पूर्व छट्ठी सदी में जन्मे पायथोगोरस भी गणितशास्त्री व खगोलविद थे। आज भी विद्यालयों में पढ़ाई कर रहे छात्र गणित विषय में पायथोगोरस के सिद्धान्त का अध्ययन करते हैं। पायथोगोरस की मान्यता थी कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है, लेकिन वे अपनी इस मान्यता को सिद्ध नहीं कर सके थे। यूनान के उस समय के विचारकों को पायथोगोरस की यह बात ठीक नहीं लगी और इसलिए उन्हें जीवन के अंतिम दिन नजरकैद में बिताने पड़े। उनके शिष्यों के घर जला दिए गए थे।

प्लेटो व एरिस्टोटल

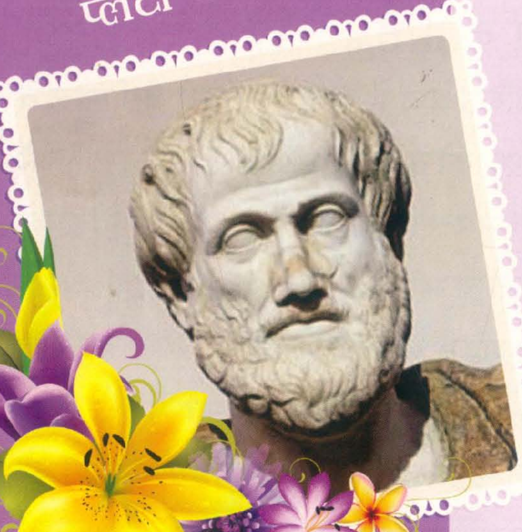

एरिस्टोटल

1. प्लेटो व एरिस्टोटल पृथ्वी को समतल मानते थे.....

एशिया माईनर में ईसा पूर्व सन् ४०८ में यूक्लिड नामक एक गणितज्ञ का जन्म हुआ था। उन्होंने इजिप्त के एक धर्मगुरु के पास रहकर खगोलशास्त्र का अध्ययन किया था। यूक्लिड ने लिखा है कि सृष्टि के केन्द्र में पृथ्वी है और समस्त ग्रह पृथ्वी की गोलाकार कक्षा में प्रदक्षिणा करते हैं। यूक्लिड २३ वर्ष की उम्र में यूनान की राजधानी एथेन्स गए थे और वहाँ के तत्त्वचिंतक प्लेटो के परिचय में आए थे। प्लेटो भी मानते थे कि पृथ्वी ही सृष्टि के केन्द्र में है और सूर्य, चन्द्र आदि ग्रह पृथ्वी की प्रदक्षिणा करते हैं। यूनान के एक छोटे से गाँव में ईसा पूर्व सन् ३८४ में एरिस्टोटल का जन्म हुआ था। वे प्लेटो के शिष्य थे। एरिस्टोटल भी मानते थे कि पृथ्वी स्थिर है और वह सृष्टि के केन्द्र में है। उनका तर्क था कि आकाश में फेंका गया पत्थर पृथ्वी पर पुनः लौटकर आ जाता है, इसलिए पृथ्वी स्थिर है। यह तर्क आज भी गलत सिद्ध नहीं हुआ है।

एरिस्टोटल के अनुसार विश्व दो प्रकार के गोलों से निर्मित है - एक गोला मनुष्य ने बनाया है और दूसरा दैवीय है। मानव निर्मित गोला परिवर्तनशील है और उसमें बदलाव किए जा सकते हैं जबकि आकाशीय गोले पवित्र है और उनमें किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया जा सकता है। जब एरिस्टोटल से पूछा जाता था कि इन आकाशिय गोलों को कौन चलाता है, तब उसके जवाब में वे कहते थे कि उन्हें अदृश्य आत्माएँ चलाती हैं। एरिस्टोटल की यह मान्यता सृष्टि के सत्य से अत्यन्त ही नजदीक है। ईसा की अठारहवीं सदी तक यह मान्यता अस्तित्व में रही। एरिस्टोटल के समकालीन एरिस्टार्चस नामक एक गणितज्ञ थे। पहली बार उन्होंने इस मान्यता का प्रचार किया कि सूर्य सृष्टि के केन्द्र में है और अन्य ग्रह उसके चारों और प्रदक्षिणा करते हैं। एरिस्टार्चस की इन मान्यताओं को किसी ने भी स्वीकार नहीं किया था।

ईस्वी सन् दूसरी सदी में यूनान के अलेक्जेन्ड्रिया शहर में एक क्लाडियस टोलेमस नामक एक खगोलशास्त्री हो गए हैं, जो मुख्यतः टोलेमी के नाम से जाने जाते थे। टोलेमी द्वारा लिखित "अनमाजेस्ट" नामक पुस्तक खगोलशास्त्र का एक आधारस्तंभ बन गई थी। भारत के जैन आगमों, बौद्ध त्रिपिटकों व वेदों में पृथ्वी के स्वरूप, सूर्य व चन्द्र की गति तथा ग्रहों की प्रदक्षिणा के सम्बन्ध में ठोस जानकारी उपलब्ध कराई गई है। जैन आगमों में से सूर्यप्रज्ञप्ति व चन्द्रप्रज्ञप्ति में तो सूर्य व चन्द्र की गति, दिन व रात, ऋतुएँ, मकर संक्रान्ति, ग्रहण आदि के बारे में तर्कयुक्त जानकारियाँ दी गई हैं। आज के खगोलशास्त्री भी आश्चर्यचकित हो जाएँ, उस प्रकार की ये जानकारियाँ है। ये सभी धर्म पृथ्वी को स्थिर व सृष्टि का केन्द्र मानते थे।

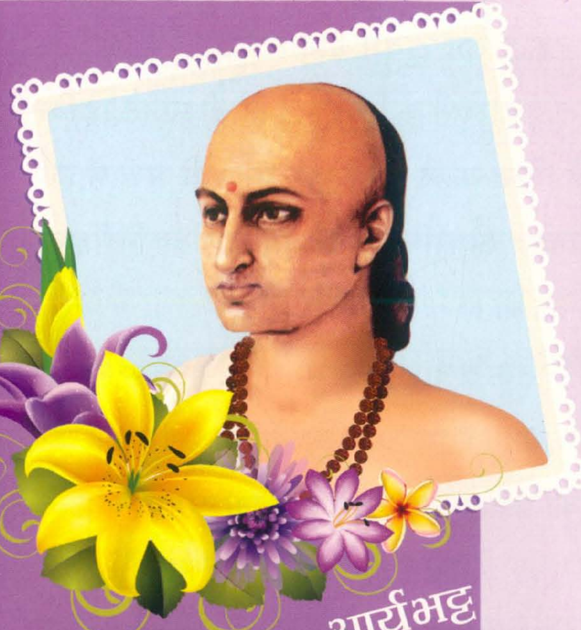

आर्यभट्ट

2. आर्यभट्ट पृथ्वी को गोल मानते थे.....

भारत में ईसा की पांचवीं सदी में आर्यभट्ट नामक एक खगोलशास्त्री हुए। उन्होंने पहली बार अपनी यह मान्यता प्रस्तुत की कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है, लेकिन स्थिर है। आर्यभट्ट का जन्म सन् ४७६ में बिहार के कुसुमपुर नामक गाँव में हुआ था। उन्होंने गणित के "पाई" की मान ३.१४१६ बताई थी। आज के गणितज्ञ भी "पाई" की कींमत लगभग इतनी ही मानते हैं। आर्यभट्ट के समकालीन वराहमिहिर भी प्रसिद्ध खगोलशास्त्री व ज्योतिषी थे। वे उज्जैन में रहते थे। उन्होंने बृहत्संहिता नामक एक ज्योतिषग्रंथ की रचना की थी। भारत के प्राचीन धर्मों के अनुसार वराहमिहिर पृथ्वी को स्थिर व समतल मानते थे। इस मान्यता के अनुसार ही उन्होंने अपने ग्रंथ में सूर्य, चन्द्र, ग्रहों, नक्षत्रों आदि का अचूक गणित उपलब्ध कराया था।

ब्रह्मगुप्त

3. ब्रह्मगुप्त पृथ्वी को समतल मानते थे.....

वराहमिहिर के पश्चात सन् ५९६ में राजस्थान के श्रीमालनगर में ब्रह्मगुप्त का जन्म हुआ था। उन्होंने खगोलशास्त्र से सम्बन्धित ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त व खंडखारुक नामक ग्रंथों की रचना की थी। इन ग्रंथों का अनुवाद अरबी भाषा में भी हुआ था। वराहमिहिर की तरह ब्रह्मगुप्त भी पृथ्वी को स्थिर व सृष्टि का केन्द्र मानते थे। सन् १११४ में भारत में भास्कराचार्य नामक एक खगोलशास्त्री व गणितज्ञ का जन्म हुआ था। उन्होंने सिद्धान्त शिरोमणि व करण कुतूहल नामक ग्रंथों की रचना की थी। भास्कराचार्य बीजगणित के भी प्रखर विद्वान थे। आर्यभट्ट के अतिरिक्त भारत के अन्य किसी भी खगोलशास्त्री ने यह मीमांसा प्रस्तुत नहीं की कि पृथ्वी गोल है। इसलिए अन्तरिक्ष में भारत से जो कृत्रिम उपग्रह सर्वप्रथम छोड़ा गया था, उसे "आर्यभट्ट" नाम दिया गया था।

निकोलस कोपरनिकस

4. निकोलस कोपरनिकस ने पृथ्वी के घूमते रहते का तुक्का लगाया.....

ईसा की पन्द्रहवीं सदी तक यूरोप में हुए समस्त खगोलशास्त्री एरिस्टोटल व टोलेमी के सिद्धान्तों को ही मानते रहे कि पृथ्वी स्थिर है, सपाट है व सृष्टि का केन्द्र है। लेकिन यह सिद्धान्त गलत हैं, ऐसा कहने का साहस पन्द्रहवीं सदी में हुए कोपरनिकस ने किया। सन् १४७३ में पोलेन्ड में कोपरनिकस का जन्म हुआ था। कोपरनिकस को आकाश का निरीक्षण करना अच्छा लगता था। इसलिए उसने अपने घर की छत पर ही वेधशाला बनाई थी।

वास्तव में कोपरनिकस खगोलज्ञ न होकर एक गणितज्ञ था। वह एक चिंतक व दार्शनिक भी था। अपनी स्वयं की वेधशाला में हुए निरीक्षणों के आधार पर नहीं, लेकिन मस्तिष्क की तरंगों के आधार पर उसने अपनी मान्यता प्रकट की कि सृष्टि के केन्द्र में पृथ्वी नहीं बल्कि सूर्य है और पृथ्वी सहित शेष ग्रह उसकी प्रदक्षिणा करते हैं। अपनी इस मान्यता के बारे में उसके पास कोई प्रमाण नहीं थे।

पृथ्वी घूमती है, इस मान्यता के खण्डन करने हेतु वह सवाल पूछता था कि यदि पृथ्वी अपनी धुरी के आसपास चारों ओर घूमती है तो उसके भाग अलग होकर फिंक क्यों नहीं जाते? एरिस्टोटल ने यह प्रश्न भी उपस्थित किया था कि पृथ्वी यदि घूमती है तो आकाश में पत्थर फेंकने पर वह अपनी मूल जगह पर ही क्यों आ जाता है? इन सवालों के जवाब दो हजार वर्षों तक कोई नहीं दे पाया था। इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कोपरनिकस ने कहा था कि - "पृथ्वी के साथ उसका वायुमण्डल भी गोल-गोल घूमता है, इसलिए आकाश में पत्थर फेंकने पर वह अपने मूल स्थान पर लौट आता है।"

पृथ्वी घूमती है इस तुक्के का उसके पास कोई प्रमाण नहीं था और न ही इसका कोपरनिकस के पास कोई सबूत था कि पृथ्वी का वायुमण्डल भी घूमता है। एक गलत मान्यता को सही सिद्ध करने के लिए उसने एक और गलत मान्यता निर्मित की। इसके लिए उसके पास कोई वैज्ञानिक आधार नहीं था। यह मान्यता मात्र काल्पनिक थी।

स्वयं की अवैज्ञानिक व अतार्किक कल्पना के आधार पर कोपरनिकस ने एक कल्पनाचित्र भी बनाया, जिसमें मध्य में सूर्य को रखा और आसपास भ्रमण कर रहे ग्रहों को बताया। इन ग्रहों में पृथ्वी को भी एक ग्रह के रूप में दर्शाया गया था। तब कोपरनिकस ने कल्पना की थी कि पृथ्वी एक ही दिन में सूर्य के चारों ओर एक प्रदक्षिणा करती है। कोपरनिकस ने जब विचार किया कि पृथ्वी सूर्य की प्रदक्षिणा करती है तब एक समस्या उभर कर सामने आई। पृथ्वी यदि आकाश में

परिभ्रमण करती है, तो जब वह कुछ तारों के नजदीक आ जाती होगी, तब वे तारे एकदम प्रकाशित होकर दिखने चाहिए और जब वे दूर जाएँ तब वे धुंधले हो जाना चाहिए लेकिन वास्तव में ऐसा होता नहीं है और इसलिए पृथ्वी के परिभ्रमण का तर्क गलत सिद्ध हुआ था। अपनी भूल स्वीकार करने के स्थान पर कोपरनिकस ने दूसरी भूल की और यह बताया कि तारे पृथ्वी से इतने अधिक दूर हैं कि पृथ्वी के घूमने के कारण उनके प्रकाश में कोई अन्तर मालूम नहीं होता है।

5. कोपरनिकस में इस पुस्तक को प्रकाशित करने की हिम्मत नहीं थी.....

निकोलस कोपरनिकस इटली की राजधानी रोम नगर में प्रोफेसर था। उसने सन् १५०० में अपने विद्यार्थियों के समक्ष पृथ्वी के परिभ्रमण के सम्बन्ध में अपने सिद्धान्त प्रस्तुत किए। कोपरनिकस को यह विचार आया कि इटली में रहकर इस सिद्धान्त का अधिक प्रचार करना संभव नहीं है, क्योंकि रोमन कैथोलिक चर्च का प्रधान मुख्यालय वेटिकन-रोम में ही है। ईसाई प्रमुख गुरु पोप की नाराजगी के डर से वह अपने देश पौलेन्ड लौट गया। यहाँ भी चर्च का बहुत प्रभाव था। इसलिए कोपरनिकस इतनी हिम्मत नहीं दिखला सका कि वह अपने विचारों को समाहित करने वाली कोई पुस्तक प्रकाशित कर सके।

अन्त में पृथ्वी के परिभ्रमण से सम्बन्धित अपने विचारों का "रिवोलूशन ऑफ दि हेवनली बाडीज" में शब्दबद्ध किया और उस पुस्तक को उसने पोप को ही समर्पित किया। अब भी कोपरनिकस में इस पुस्तक को प्रकाशित करने के उद्देश्य से उसने उस पुस्तक को न्यूरेम्बर्ग में रह रहे अपने मित्र ओसियान्डर को भेज दिया। पोप की ओर इशारा कर उसने इस पुस्तक की प्रस्तावना में लिखा कि इन नए विचारों की प्रस्तुति के लिए उन्हें कोपरनिकस को माफ कर देना चाहिए।

इस पुस्तक में उसने यह भी लिखा कि कोपरनिकस ने ये विचार बतौर एक वास्तविकता के नहीं बल्कि कल्पना के आधार पर प्रस्तुत किए हैं। यह पुस्तक मुद्रित होकर २४ मई १५४३ को जब वयोवृद्ध कोपरनिकस के हाथों में आई, तब वह मृत्यु-शैय्या पर था। यह पुस्तक उसके हाथों में आई, उसके कुछ ही घन्टों में कोपरनिकस की मृत्यु हो गई। उस वक्त यूरोप में रोमन कैथोलिक चर्च का प्रभाव इतना अधिक था कि कोपरनिकस की कब्र पर जो तख्ती लगाई गई उसमें भी उसकी विवादास्पद पुस्तक का जिक्र नहीं था। कोपरनिकस के मित्रों को भी मालूम था कि पृथ्वी के सम्बन्ध में बाइबल में दी गई मान्यताओं का विरोध करने का अन्जाम क्या हो सकता है।

कोपरनिकस की पुस्तक का रोमन कैथोलिक धर्म ने विरोध नहीं किया, लेकिन उपेक्षा की। इस पुस्तक की प्रस्तावना में ओसियान्डर ने लिखा था कि यह मात्र कल्पना है, इसका चर्च पर गहरा प्रभाव हुआ। जब गैलीलियो ने सन् १६१६ में दूरबीन बनाकर आकाश का निरीक्षण किया और साथ ही यह भी शाब्दिक बाण चलाया कि कोपरनिकस की कल्पना सच है, तब रोमन कैथोलिक चर्च तुरन्त ही कोपरनिकस व गैलीलियो के विरोध में सामने आ गया। उस वक्त ईसाई प्रोटेस्टेंट संप्रदाय के बड़े पादरी मार्टिन लूथर थे। एक बार उन्होंने कोपरनिकस के सिद्धान्त के बारे में व्यंग करते हुए कहा था कि - "यह बेवकूफ पृथ्वी को औंधा करना चाहता है। इस समय सृष्टि के केन्द्र में हमारी पृथ्वी है। इसके स्थान पर यह बेवकूफ सृष्टि के केन्द्र के रूप में सूर्य को स्थापित कर यह मेज को उल्टा कर देना चाहता है" इस प्रकार प्रोटेस्टेंट चर्च कोपरनिकस के विरोध में आ गया था।

टायको ब्राह

6. टायको ब्राह पृथ्वी को समतल मानता था.....

निरीक्षणों के आधार पर खगोलशास्त्र में हडकम्प मचानेवाले वैज्ञानिकों में टायको ब्राह का नाम भी सम्मिलित है। कोपरनिकस के अवसान के ढाई वर्ष के पश्चात टायको ब्राह का जन्म सन् १५४६ में डेनमार्क में हुआ था । टायको डेनमार्क के एक अमीर परिवार की सन्तान था । अंतरिक्ष के पदार्थों के सूक्ष्म निरीक्षण के लिए टायको ने धातु के यंत्र बनाए थे, जिनके द्वारा नियमित रूप से वह आकाश का गहन अध्ययन करता था । टायको ने सन् १५७७ में यूरोप के आकाश में एक धूमकेतु देखा । इस धूमकेतु का अध्ययन कर उसने घोषित किया कि उसकी भ्रमण कक्षा वर्तुलाकार नहीं बल्कि अंडाकार है । स्विटझरलैंड के एक विन नामक टापू पर टायको ने यूरोप की सर्वप्रथम वेधशाला स्थापित किया । उस वक्त तब दूरबीन का आविष्कार नहीं हुआ था, इसलिए वेधशाला की मदद से ही टायको ने आकाश का निरीक्षण किया ।

एरिस्टोटल व टोलेमी ने पृथ्वी को सृष्टि का केन्द्र माना था और इस मान्यता को टायको ने स्वयं के निरीक्षणों से सिद्ध किया । एरिस्टोटल व टोलेमी ने बताया की था कि सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र व तारे पृथ्वी की प्रदक्षिणा करते हैं । टायको ने पाया कि ग्रहों की गति वक्र है और ऐसा मालूम नहीं होता है कि वे पृथ्वी की वर्तुलाकार भ्रमणकक्षा में गति करते हैं । दूसरी ओर कोपरनिकस की इस कल्पना के साथ टायको सहमत नहीं था कि पृथ्वी व ग्रह सूर्य के चारों ओर परिभ्रमण करते हैं । टायको भी मानता था कि यदि सूर्य के चारों ओर पृथ्वी परिभ्रमण करती है तो नजदीक के तारों का प्रकाश कम-ज्यादा होना चाहिए और उनका स्थान भी बदलता हुआ दिखाई की देना चाहिए । इन तथ्यों के आधार पर टायको इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि सूर्य, चन्द्र तो पृथ्वी की प्रदक्षिणा करते हैं, लेकिन ग्रह सूर्य की प्रदक्षिणा करते हैं । अपने स्वयं के निरीक्षणों के आधार पर टायको इस निष्कर्ष पर पहुँचा था ।

जोहानिस केप्लर

7. जोहानिस केप्लर था टायको ब्राह का शिष्य.....

खगोलशास्त्र में कई प्रकार की कल्पनाओं को जन्म देने वाले केप्लर का जन्म जर्मनी में सन् १५७१ में हुआ था। यूरोप की ट्यूनबिन्जन यूनिवर्सिटी में पढ़ाई करते समय केप्लर को उनके प्रोफेसर मेस्टीलीन ने कोपरनिकस के सिद्धान्तों का अभ्यास कराया था। इस वक्त के प्रोटेस्टेन्ट ईसाई कोपरनिकस की सूर्य को केन्द्र मानने वाली विचारधारा के कट्टर विरोधी थे। केप्लर की कल्पना थी कि पृथ्वी से ऊपर आकाश में यदि कोई इंसान किसी ग्रह के ऊपर जाय तो उसे पृथ्वी घूमती हुई दिखनी चाहिए। वास्तव में यह कल्पना भ्रामक थी क्योंकि पृथ्वी इन ग्रहों की तुलना में हजारों लाखों गुना बड़ी है। विमान में बैठकर सवारी करते समय इंसान को पृथ्वी घूमती हुई नहीं दिखाई देती है, उसी प्रकार अन्य ग्रहों के ऊपर से भी घूमती हुई नहीं दिखाई देती है, क्योंकि दोनों के आकार में बहुत अन्तर है।

जोहानिस केप्लर ने सन् १५८३ में अपनी इन वैचारिक कल्पनाओं के आधार पर एक निबन्ध लिखा, लेकिन निबन्ध चूंकि कोपरनिकस की कल्पनाओं पर आधारित था, इसलिए यूनिवर्सिटी के अधिकारीयों ने उसे प्रकाशित नहीं किया। अब केप्लर वैज्ञानिक संशोधन न करते हुए मात्र कल्पना की दुनिया में ही विहार करने लगा। लगभग १५ वर्षों के पश्चात उन्होंने "सोम्नियम" नामक पहली विज्ञान कल्पना-कथा (साईन्सफिक्शन) लिखी, जिसमें असली हकीकतों के स्थान पर केवल कल्पनाओं का ही सहारा लिया गया था।

निकोलस कोपरनिकस को एक प्रश्न सदैव बेचैन करता था कि इन अंतरिक्षपिंडों को कौन चलाता है ? यही प्रश्न अब केप्लर को बेचैन करने लगा। कोपरनिकस ने यह मान लिया था कि अंतरिक्ष के पिंड सूर्य के चारों ओर वर्तुलाकार कक्षा में गति करते हैं और वह उनका प्राकृतिक गुणधर्म है, अथवा यह किसी दैवीय शक्ति के कारण है। यह बात केप्लर अपने दिमाग में स्वीकार नहीं कर पा रहा था।

केप्लर आकाश पर सतत निरीक्षण करता था। इन ग्रहों के निरीक्षण से उसे यह प्रश्न उभरा कि जो ग्रह आकार में सूर्य से दूर मालूम होते हैं, वे क्यों धीमी गति से सूर्य की प्रदक्षिणा करते हैं ? उसने यह मान्यता प्रस्तुत की कि समस्त ग्रहों की गति एक समान है, लेकिन शनि व गुरु के दूर होने के कारण उन्हें सूर्य की प्रदक्षिणा करने में अधिक समय लगता है।

जब केप्लर ने शनि व गुरु के प्रदक्षिणा काल की तुलना की तब उसे मालूम हुआ कि शनि का समय गुरु के समय की अपेक्षा दुगुना नहीं बल्कि ढाई गुना है। केप्लर ने कल्पना की थी कि सूर्य में ऐसी कोई शक्ति है, जिस वजह से ये ग्रह सूर्य

के चारों ओर परिभ्रमण करते हैं । केप्लर मानता था कि सूर्य के नजदीक के ग्रहों पर उसकी शक्ति का प्रभाव अधिक होने के कारण वे अधिक तेज गति से प्रदक्षिणा करते हैं और दूर के ग्रहों पर सूर्य की शक्ति का प्रभाव कम होने के कारण वे धीमी गति में प्रदक्षिणा करते हैं ।

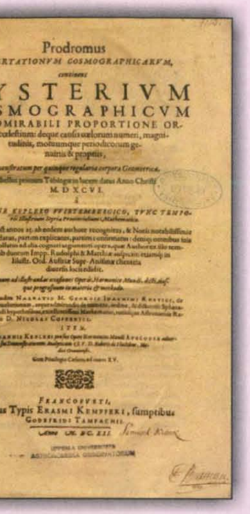

जोहानिस केप्लर ने "मिस्टेरियम कॉस्माग्राफी" नामक पुस्तक लिखकर उसने विश्व के सम्बन्ध में अपनी मान्यताएँ प्रस्तुत कीं थी केप्लर ने अपनी इस पुस्तक को गैलीलियो व टायको ब्राह के पास भी भेजा था । केप्लर के विचारों के सम्बन्ध में अपना कोई अभिप्राय न देते हुए गैलीलियो ने लिखा था कि "आप जैसे मित्र से मिलकर मैं बहुत आनन्दित हूँ ।" केप्लर की पुस्तक को टायको ने भी पढ़ा, लेकिन वह सूर्य को केन्द्र माननेवाली विचारधारा से सहमत नहीं हुआ । अपनी वेधशाला छोड़कर सन् १५९७ में यंत्रों व निरीक्षणों के साथ टायको बोहेनिया के प्राग नगर में आकर बस गया । केप्लर अपनी काल्पनिक मान्यताओं को प्रयोगों के द्वारा परखना चाहते थे । इसके लिए उन्हें एक वेधशाला की जरुरत थी, जो यूरोप में मात्र टायको के पास ही थी । इसलिए सन् १६०० में केप्लर टायको की वेधशाला में अभ्यास करने के लिए प्राग आ गए ।

जोहानिस केप्लर

8. जोहानिस केप्लर बने टायको ब्राह के वारिस.....

टायको ब्राह

कुछ ही समय में टायको ने केप्लर को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर दिया । टायको ने केप्लर को सलाह दी कि मात्र कल्पना के घोड़े दौड़ाने से सृष्टि के गूढ रहस्यों का पता नहीं लगाया जा सकता है, बल्कि उसके लिए प्रायोगिक प्रमाणों की भी जरूरत रहती है । टायको की सन् १६०१ में मृत्यु हो गई । अपने समग्र जीवन में अंतरिक्ष पिंडों के निरीक्षणों के द्वारा टायको ने जो जानकारियाँ एकत्रित की थी, वह निधि अब केप्लर के हाथों में आई । टायको ने जो शोध सामग्री एकत्रित की थी, उसे केप्लर ने एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया । अपनी कल्पना व निरीक्षणों को बिना किसी तर्क के, मिश्रित कर केप्लर ने सन् १६०९ में अपनी पुस्तक "न्यू एस्ट्रोनामी" प्रकाशित की । टायको द्वारा अपनी वेधशाला में किए निरीक्षणों का उपयोग कर केप्लर ने इस पुस्तक में यह सिद्ध करने की कोशिश की कि सूर्य सृष्टि का केन्द्र है और समस्त ग्रह उसके चारों ओर घूम रहे हैं ।

जोहानिस केप्लर ने अपनी इस पुस्तक में एरिस्टोटल व टोलेमी के सिद्धान्तों के विरुद्ध व कोपरनिकस की मान्यता के समर्थन में दलीलें प्रस्तुत की । उसने लिखा है कि - "सूर्य व चन्द्र वक्री नहीं होते हैं और इससे यह कैसे सिद्ध होता है कि पृथ्वी सूर्य की प्रदक्षिणा क़रती है ?" इस नियम के अनुसार यदि पृथ्वी द्वारा सूर्य की

प्रदक्षिणा की जाती है तो उसके द्वारा चन्द्र की भी प्रदक्षिणा होनी चाहिए, क्योंकि चन्द्र भी वक्री नहीं होता है। यह किस आधार पर मान लिया जाय कि पृथ्वी ही सूर्य की प्रदक्षिणा करती है और यह चन्द्र की प्रदक्षिणा नहीं करती है? वास्तव में चन्द्र व सूर्य ही पृथ्वी की प्रदक्षिणा करते हैं?

यह वास्तविकता गलत सिद्ध करने के लिए केप्लर के पास कोई तर्क या सबूत नहीं थे। अपने गुरु टायको के कहने से केप्लर ने मंगल ग्रह का अध्ययन प्रारम्भ किया और इस विचित्र निष्कर्ष पर पहुंचा कि मंगल ग्रह भी सूर्य की प्रदक्षिणा करता है। उसने पहली बार यह अवलोकन भी किया कि मंगल सूर्य की कक्षा में वर्तुलाकार नहीं बल्कि अंडाकार भ्रमणकक्षा में प्रदक्षिणा करता है।

यह मात्र केप्लर की कल्पना थी या उसका भ्रम था, लेकिन उसे वह सच मानता था और इसलिए अपनी पुस्तक में इस प्रकार की प्रस्तुति उसने दी थी। मंगल ग्रह के लिए केप्लर ने जो कल्पना की थी बाद में उसने उसे गुरु व शनि तक के ग्रहों पर भी लागू किया। इस गलत कल्पना के आधार पर उसने मंतव्य दिया कि पृथ्वी सहित ग्रह सूर्य के चारों ओर अंडाकार कक्षा में परिभ्रमण करते हैं। एक प्रकार से निकोलस कोपरनिकस ने अपनी पुस्तक में जो भी लिखा था, उसका पुनरावर्तन ही केप्लर ने किया था। उसने नया कुछ भी नहीं कहा था। कोपरनिकस को भुला दिया गया था, जबकि केप्लर की पुस्तक बहुत पढ़ी गई थी।

चुंबकत्व के सम्बन्ध में जोहानिस केप्लर ने एक बार गिल्बर्ट की पुस्तक पढ़ी। इस पुस्तक को पढ़कर उसने कल्पना की कि पृथ्वी चन्द्रमा को अपनी ओर खींचता है और चन्द्रमा पृथ्वी को अपनी ओर खींचता है। यदि यह कल्पना हकीकत हो तो पृथ्वी व चन्द्रमा को एक दूसरे में मिल जाना चाहिए। पृथ्वी के समुद्रों में जो ज्वार-भाटे आते हैं, उसका भी कारण रूप चन्द्रमा रहता है, इस प्रकार की गलत मान्यता का भी केप्लर ने प्रचार किया। उसका कारण था चन्द्रमा की कला के अनुसार समुद्र में ज्वार-भाटे के समय में परिवर्तन होता था। यद्यपि चन्द्रमा व ज्वार-भाटे के बीच कार्य-कारण का सम्बन्ध स्थापित करने में केप्लर को सफलता नहीं मिली थी। इसके कई वर्षों के पश्चात् न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण बल की कल्पना की, जबकि इस बल का मूल विचार केप्लर का ही था। केप्लर ने यह भी कहा था कि जब दूरी बढ़ती है, तब इसका प्रभाव भी कम हो जाता है।

कई वैज्ञानिक ऐसे भी होते है जो जगत को असत्य से प्रकाश की ओर ले जाते हैं। कई अज्ञानी ऐसे होते हैं जो जगत को प्रकाश से अंधकार की ओर ले जा रहे हैं। जोहानिस केप्लर भी इसी प्रकार का एक अज्ञानी था। हजारों - लाखों वर्षों से धरती के मनुष्य जिन सनातन सत्यों को जानते व स्वीकार करते थे, उससे विपरीत बातें उसके दिमाग में आईं। इन मुद्दों के प्रचार के लिए उसने जो तर्क प्रस्तुत किए थे, वे परिशुद्ध नहीं थे और जो प्रमाण दिए थे, वे भी कमजोर थे। यह भी यूरोप के लोगों का दुर्भाग्य ही था कि वे केप्लर को एक वैज्ञानिक व संशोधक मानते थे। हकीकत में वह कल्पना की दुनिया में खेलनेवाला एक पागल ही था उस दौर में यूरोप में कोई वैज्ञानिक नहीं होने से केप्लर को चुनौती देने वाला भी कोई नहीं था।

गैलीलियो गेलिली

9. गैलीलियो गेलिली पृथ्वी को घूमती हुई मानते थे.....

कोपरनिकस और केप्लर के असत्यों को आगे और गति देने के लिए जिन्हें जाना जाता है उन दूरबीन के आविष्कारक खगोलशास्त्री गैलीलियो गेलिली का जन्म १६ फरवरी १५६४ को इटली के उस शहर पित्जा में हुआ था जो झुकी हुई मीनार के लिए प्रसिद्ध है। गैलीलियो ने गणित का अभ्यास किया था। पित्जा यूनिवर्सिटी में गणित के प्राध्यापक के रूप में वे नियुक्त किए गए थे। गैलीलियो ने अपना स्वयं का दूरबीन सन् १६०९ में बनाया। अपने स्वयं के दूरबीन से उन्होंने आकाश का अवलोकन करना प्रारम्भ किया। रात्रि में जहाँ रिक्त जगह मालूम होती थी, वहाँ उन्होंने दूरबीन से तारे देखे। आकाशगंगा में उन्होंने लाखों तारे देखे। वेनिस के लोगों को यह दूरबीन पृथ्वी पर से दूर की वस्तुओं को देखने के लिए और समुद्री यात्राओं के लिए बहुत उपयोगी महसूस हुई, जबकि गैलीलियो उससे आकाश दर्शन करता था।

एक दिन गैलीलियो दुरबीन के द्वारा गुरु ग्रह का अवलोकन कर रहा था, तब उसने नजदीक में एक रेखा पर चार तारे देखे। ये तारे प्रतिदिन अपना स्थान बदलते थे। एक दिन ये चारों तारे गुरु ग्रह के पीछे गायब हो गए और कुछ दिनों के पश्चात् पुनः बाहर आए। इस पर से गैलीलियो ने यह निष्कर्ष निकाला कि ये तारे वास्तव में गुरु के उपग्रह हैं। कुछ तारे यदि गुरु की प्रदक्षिणा करते हों, तो उसमें गलत कुछ भी नहीं था। जिस प्रकार ध्रुव तारे की प्रदक्षिणा सप्तर्षि तारे करते हैं, उसी प्रकार कुछ तारे गुरु की भी प्रदक्षिणा करते हैं। इस निरीक्षण के आधार पर गैलीलियो बगैर किसी तर्क या प्रमाण के इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि चन्द्र पृथ्वी की प्रदक्षिणा करता है और पृथ्वी सहित अन्य ग्रह सूर्य की प्रदक्षिणा करते है। गुरु के उपग्रह है उससे यह बात सिद्ध नहीं हो रही थी, लेकिन गैलीलियो ने ऐसा मान लिया।

इसके पश्चात् गैलीलियो ने पता लगाया कि चन्द्रमा की तरह शुक्र की भी कलाएँ होती हैं। अपनी दूरबीन से गैलीलियो ने सूर्य की सतह पर काले धब्बे देखे। इन धब्बों को उन्होंने सूर्यकलंक के रूप में पहचान दिलाई। उन्होंने देखा कि ये धब्बे रोज अपना स्थान बदलते हैं। वास्तव में सूर्य जब उदित होता हैं जब हमारी आँखों को सूर्य का एक ही ओर का भाग दिखाई देता है और वह जब बीच आकाश में होता है, तब मात्र नीचे का भाग दिखाई देता है और उसके अस्त होने के समय हम उसका दूसरी ओर का भाग देख पाते हैं। सूर्य का आकार आधा कटे हुए तरबूज जैसा है और इसलिए धब्बे स्थान परिवर्तन करते हुए मालूम होते हैं। इस वास्तविकता से बेचारे गैलीलियो वाकिफ नहीं थे, इसलिए उन्होंने कल्पना की थी कि सूर्य

अपनी धुरी पर घूमता है और इसलिए धब्बों का स्थान बदलता रहता है। भ्रान्ति का शिकार बने गैलीलियो स्वयं की भ्रान्तियों को ही सत्य मानने लगे।

केप्लर व गैलीलियो यद्यपि समकालीन थे, लेकिन उनकी आपस में कभी मुलाकात हुई हो, ऐसी कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है। गैलीलियो ने जब अपनी दूरबीन से शनि ग्रह की ओर देखा, तब उसे शनि का आकार कुछ विचित्र लगा, लेकिन शनि ग्रह के चारों ओर वर्तुल हैं, यह विचार गैलीलियो को तब नहीं आया था। अपनी दूरबीन के द्वारा गैलीलियो ने जो भी अवलोकन किए थे, उसका वर्णन ''द स्टोरी मैसेन्जर'' नामक पुस्तक में दर्ज है। दूरबीन द्वारा गैलीलियो ने जो भी अवलोकन किए थे वे तो सत्य थे, लेकिन उनके द्वारा जो निष्कर्ष उन्होंने निकाले वे गलत थे। गुरु ग्रह के उपग्रह हैं इसलिए पृथ्वी भी सूर्य का ग्रह है, यह मन्तव्य तर्कयुक्त नहीं था। सूर्य की सतह पर के धब्बों के स्थान में परिवर्तन होता रहता है, इसलिए उनका तर्क कि सूर्य अपनी धुरी पर घूमता है भी तर्कयुक्त नहीं था। इसके होने के अन्य कई दूसरे कारण भी हो सकते हैं, जिसकी कल्पना गैलीलियो ने नहीं की थी। गैलीलियो वैज्ञानिक नहीं बल्कि अज्ञानी था।

निकोलस कोपरनिकस ने ''रिवोलूशन ऑफ द हेवनली बॉडीझ'' नामक पुस्तक लिखकर पहली बार कल्पना की थी कि पृथ्वी गेंद जैसी गोल है और वह सूर्य के चारों ओर घूमती है, कोपरनिकस की यह पुस्तक सन १५४३ में प्रकाशित हुई थी और उसके तुरन्त बाद ही उनका अवसान हो गया था। ईसाई धर्मगुरुओं ने इस पुस्तक और उसमें दिए समस्त मुद्दों की उपेक्षा की थी, क्योंकि यूरोप में बहुत कम व्यक्तियों ने उसे पढ़ा था और बहुत कम विद्वान उसमें उठाई बातों के साथ सहमत थे। जब गैलीलियो ने दूरबीन का आविष्कार किया और उसके द्वारा कोपरनिकस की कल्पना को सच करने का प्रयास किया, तब ईसाई धर्मगुरु सजाग हो गए और गैलीलियो का जोर-शोर से विरोध करने लगे, जिससे यूरोपीय प्रजा पर गैलीलियो की गलत बातों का प्रभाव न पड़े। इसका मुख्य कारण धार्मिकता थी। किसी वैज्ञानिक भूमिका के कारण किसी ने गैलीलियो का विरोध नहीं किया था।

ईसाई पादरियों की दलील थी कि बाइबल में लिखा है कि आकाश में सात ग्रह हैं, इसलिए गुरु के उपग्रह नहीं हो सकते हैं। अपनी दूरबीन के द्वारा गैलीलियो लोगों को गुरु के उपग्रह बताता था और तब चर्च के पादरी दलील करते थे कि ये उपग्रह तो शैतान द्वारा सृजित मायाजाल है। फिर गैलीलियो ने दूरबीन से चन्द्र की सतह पर दाग देखे। उसने घोषित किया कि ये पहाड व गड्डे हैं। उसने यह भी बताया कि चन्द्र स्वयं प्रकाशित नहीं है वह तो सूर्य के प्रकाश को ही परावर्तित करता है। गैलीलियो के पास उसकी इस मान्यता के लिए कोई तर्क या आधार नहीं था। किसी प्रयोग अथवा किसी सांयोगिक प्रमाण के द्वारा उसने इसे सिद्ध नहीं किया था। यह बाइबल की उस पंक्ति के विरुद्ध था कि ''चन्द्र एक बड़ा प्रकाश है।'' गैलीलियो की इस बात को वैज्ञानिक नहीं बल्कि धार्मिक आधार पर ही चुनौती दी गई थी।

पृथ्वी, सूर्य व चन्द्र के बारे में गैलीलियो द्वारा जो बातें प्रचारित की गई थीं, वे सब ईसाई धर्म के मूलभूत सिद्धान्तों के विरुद्ध थीं, इसलिए सन् १६१५ में वेटिकन के पोप ने उन्हें रोम बुलाया और आदेश दिया कि - ''सूर्य सृष्टि का केन्द्र है और पृथ्वी घूमती है, इस प्रकार की बातों का प्रचार वे न तो शब्दों के द्वारा और न ही लिखकर करें।'' पोप पॉल पंचम ने यह फरमान भी निकाला कि जो भी इनका प्रचार करेगा या उन्हें पढ़ेगा, उन्हें दन्डित किया जायगा। गैलीलियो जब पित्जा लौटा तब उसे मालूम हुआ कि यूनिवर्सिटी में उसका वेतन भुगतान बंद

कर दिया गया है। समस्त यूरोप में धर्मगुरु गैलीलियो के विरोध में हो गए। इससे गैलीलियो लाभान्वित ही हुआ। जो लोग अब तक उसे नहीं जानते थे, वे सब भी अब उसे जानने लग गए। इस प्रकार परोक्ष रूप से उसके सिद्धान्तों का प्रचार बढ़ने लगा। इस प्रकार ईसाई पादरियों ने ही अनजाने में गैलीलियो को महान बना दिया।

गैलीलियो का जो विरोध ईसाई पादरियों द्वारा किया गया था, वह मुख्य रूप से धार्मिक बिन्दुओं पर ही था। उसमें वैज्ञानिक दलीलों व तर्क का उपयोग मुश्किल से ही किया जाता था। इस वजह से यूरोप में विज्ञान के विरुद्ध धर्म का माहौल निर्मित हो गया। वैसे वास्तविकता तो यह भी थी कि गैलीलियो जिस प्रकार की बातों का जिक्र कर रहा था, उन्हें वैज्ञानिक रूप से सिद्ध भी नहीं किया जा सकता था। ये बातें केवल अटकलें मात्र थीं और उनके कोई स्वतंत्र प्रमाण मौजूद नहीं थे। इस प्रकार के वैज्ञानिक भी उस समय यूरोप में नहीं थे, जो गैलीलियो के सिद्धान्तों को गलत सिद्ध कर सकें। इस वजह से कई व्यक्ति ऐसा मानने लगे कि वैज्ञानिक दृष्टि से गैलीलियो सही है और मात्र धार्मिक कारणों से ही ईसाई पादरी उसका विरोध कर रहे हैं। साथ ही गैलीलियो ने दूरबीन का आविष्कार किया था इससे प्रजा अत्यन्त ही अभिभूत थी और मंत्रमुग्ध बनी वह प्रजा उसके अर्धसत्यों व असत्यों को ही सत्य मानने लगी थी।

अपने विचारों को गैलीलियो ने जिस पुस्तक में लिखा था, उसे प्रकाशित करने पर चर्च ने प्रतिबन्ध लगा दिया। अन्त में जब गैलीलियो ने इस पुस्तक की प्रस्तावना में लिखा कि उसके ये विचार मात्र कल्पना की सैर हैं और वे टोलेमी की मान्यता के विपरीत नहीं हैं, तब ही उसे इस पुस्तक को प्रकाशित करने की मंजूरी मिली। गैलीलियो की पुस्तक "डायलोगो" सन् १६३२ में प्रकाशित हुई, जिसमें उपरोक्त प्रस्तावना समाहित की गई। यूरोपीय प्रजा ने उस प्रस्तावना को तो मजाक में ले लिया, लेकिन पुस्तक में दिए गए सिद्धान्तों को वे सच मानने लगे। इससे पोप अर्बन अष्टम क्रोधित हो गया और उसने गैलीलियो के विरुद्ध अदालती कार्यवाई करने का आदेश दिया। इसलिए गैलीलियो ने पोप के पैरों पर गिर कर क्षमा मांगते हुए याचना की कि..... "मैं गैलीलियो, पवित्र बाइबल को मेरी आँखो पर रखते हुए माफी माँगता हूँ और कहता हूँ कि पृथ्वी घूमती है इस गलत मान्यता का मैं त्याग करता हूँ।" इस वाकये (प्रसंग) के पश्चात गैलीलियो को उसके परिवार व मित्रों से अलग कर दिया गया।

अपनी वृद्धावस्था में वह बीमार हो गया था, अंधा हो गया था और लाचार था तब भी उसकी एकांतवास की सजा में उसे कोई राहत नहीं दी गई। यूरोप की समस्त यूनिवर्सिटियों में गैलीलियों के विचारों को पढ़ाने पर प्रतिबंध लगा दिया गया। एक बार यूरोप की समस्त यूनिवर्सिटियों के गणितशास्त्र व खगोलशास्त्र के प्राध्यापकों को एकत्रित किया गया और उनके हाथों में पोप का आज्ञापत्र थमा दिया गया, जिसमें कहा गया था कि यदि वे गैलीलियो के विचारों का प्रचार करेंगे तो उनकी दशा भी गैलीलियो जैसी ही हो जायगी। दूसरी और चर्च के प्रोत्साहन से कई पुस्तकें प्रकाशित हो रहीं थीं, जिनमें कोपरनिकस, केप्लर व गैलीलियो को गलत सिद्ध किया गया था। गैलीलियो का १६४२ की ८ जनवरी को अवसान हो गया। पोप की आज्ञा के अनुसार किसी अज्ञात स्थल पर गैलीलियो को दफना दिया गया और उसकी कब्र पर किसी प्रकार की कोई तख्ती लगाने की इजाजत भी उन्होंने नहीं दी थी।

ऑइजक न्यूटन

10. ऑइजक न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त की शोध की थी.....

गैलीलियो की मृत्यु सन् १६४२ में हुई थी और उस वर्ष ही न्यूटन का जन्म हुआ । कोपरनिकस, केप्लर व गैलीलियो ने पृथ्वी के गोल होने और सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने की जिस कल्पना का प्रचार किया था, उसे अधिक सशक्त बनाकर आगे बढ़ाने का कार्य ऑइजक न्यूटन ने किया । बचपन से ही न्यूटन को जलघटिका यंत्र, सूर्यघटिका यंत्र, छाया यंत्र, पवनचक्की आदि बनाने का शौक था । वह रात्रि में पतंग उड़ाता था और साथ ही कागज की पूंछ उसके साथ बांध देता था । यह देखकर लोगों को भ्रम हो जाता था कि आकाश से धूमकेतु उतर आया है । न्यूटन सन् १६६१ में कोम्बिज के ट्रिनिटी कॉलेज में दाखिल हुआ । यहाँ उसने कोपरनिकस, केप्लर व गैलीलियो जैसे खगोलशास्त्रियों के ग्रंथों का अभ्यास किया और उनके प्रभाव से वह भी यह मानने लगा कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती है । न्यूटन सन् १६६४ में एक बगीचे में बैठकर चिंतन कर रहा था । वहाँ उसने वृक्ष पर से सेबफल को नीचे गिरता देखा । इस पर से न्यूटन ने विचार किया कि पृथ्वी में अवश्य ही किसी प्रकार का कोई आकर्षणबल होना चाहिए, जो सभी पदार्थों को अपनी ओर खींचता है । यदि उस समय ही न्यूटन ने अपनी रसोईघर की चिमनी से आकाश की ओर उठता हुआ धुआँ देखा होता तो न्यूटन की यह गलत मान्यता दूर हो गई होती कि पृथ्वी सभी पदार्थों को अपनी ओर खींचती है । अपनी कल्पना को सत्य मानकर न्यूटन ने विचार किया कि इसी प्रकार पृथ्वी का आकर्षणबल चन्द्रमा पर लगता है और इसलिए वह पृथ्वी की प्रदक्षिणा करता है यह समानता बिल्कुल भी तर्कयुक्त नहीं थी । यदि पृथ्वी चन्द्रमा को सेबफल की तरह आकर्षित करती है, तो उसे भी जमीन पर गिर जाना चाहिए । ऐसा क्यों नहीं होता है, यह समझने के लिए न्यूटन ने अन्य कल्पनाएँ कीं ।

पृथ्वी के आकर्षणबल की कल्पना न्यूटन ने जब सन् १६६४ में की थी, उस समय स्वयं उन्हें भी विश्वास नहीं था कि उनकी कल्पना वास्तव में सत्य है । इसलिए उन्होंने बीस वर्ष तक प्रयोग तो किए, लेकिन अपनी कल्पना को उन्होंने दुनिया के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया । अंत में सन् १६८४ में न्यूटन के मित्र एडमन्ड हेली ने अपने स्वयं के खर्च पर न्यूटन की पुस्तक ''प्रिंसिपिया मेथेमेटिका'' मुद्रित करवाई, जिसमें न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के विचारों को पहली बार प्रस्तुति किया गया था । न्यूटन ने अपने गति के नियम बनाए और उनके द्वारा समझाया कि सूर्य, चन्द्र, ग्रह आदि ब्रह्मांडीय पदार्थ दैवीय शक्ति से नहीं परंतु इन गति के नियमों के अनुसार एक विशाल यन्त्र की तरह परिभ्रमण करते हैं । इन नियमों का उपयोग कर

न्यूटन ने दावा किया कि उसने ग्रहों, उपग्रहों और तारों का वजन मालूम करने की रीति की शोध भी कर ली है। न्यूटन ने शोध में यह भी पता लगाया कि धूमकेतू ग्रह हैं, लेकिन उनकी भ्रमणकक्षा अतिपरवलय प्रकार की है। अपने गुरुत्वाकर्षण के नियमों को सत्य मानकर ऑइजक न्यूटन ने कई नए मुद्दे बताए। न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त यदि सत्य है तो तारे भी ग्रहों की तरह सूर्य के गुरुत्वाकर्षण प्रभाव के अन्दर होने चाहिए। कोई तारा सूर्य की प्रदक्षिणा करता हो, ऐसा मालूम नहीं हुआ है। इसलिए न्यूटन ने एक झूठ को सिद्ध करने के लिए दूसरा झूठ प्रस्तुत किया कि शनि की अपेक्षा तारे हजारों लाखों गुना दूर होने के कारण, उन पर सूर्य के गुरुत्वाकर्षण का प्रभाव नहीं होता है। अब यदि तारे इतने दूर हैं, तो वे सूर्य के प्रकाश को परावर्तित किस प्रकार कर सकते हैं? इस उलझन को दूर करने के लिए न्यूटन ने कह दिया कि तारे स्वयंप्रकाशित है। उसने और आगे बढ़कर गप्प लगाई कि तारे सूर्य जैसे ही हैं। दूसरी एक और गप्प उसने लगाई कि तारों का भी ग्रहमंडल होता है। यद्यपि आज तक किसी भी तारे के ग्रहमंडल को शोधा नहीं जा सका है।

ऐसा कहा जाता है कि न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण व गति के नियमों के कारण पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र आदि की गतियों की जानकारी मिलती है। न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के नियम के अनुसार चन्द्र को पृथ्वी अपनी ओर खींचती है। तो फिर पृथ्वी पर चन्द्रमा क्यों नहीं गिर जाता है? इसके उत्तर में न्यूटन कहते हैं कि चूंकि चन्द्र अपनी धुरी पर घूमता है इसलिए उसमें केन्द्रत्यागी बल उत्पन्न होता है। यह केन्द्रत्यागी बल उसे पृथ्वी से दूर ले जाने की कोशिश करता है। इन दो बलों को संतुलित करते हुए चन्द्रमा पृथ्वी के चारों ओर घूमता है।

न्यूटन के गति के पहले नियम के अनुसार स्थिर वस्तु स्थिर ही रहती है और गतिवान वस्तु गति में ही रहती है। इसलिए सूर्य, चन्द्रमा आदि अंतरिक्ष में गति की स्थिति में ही रहते हैं, लेकिन सर्वप्रथम उन्हें गति किसने दी, इसका कोई उत्तर न्यूटन के पास नहीं है। पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण बल यदि प्रचंड है तो धुआं किस तरह इस बल का मुकाबला करता हैं, उसका उत्तर भी न्यूटन के पास नहीं है।

न्यूटन के सिद्धान्त के अनुसार पृथ्वी के चारों ओर चन्द्रमा घूमता है और पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है। तो फिर सूर्य किस प्रकार आकाश में स्थिर रह सकता है? न्यूटन ने कल्पना की है कि पूरा सौरमंडल ही ब्रह्मांड के किसी केन्द्र की प्रदक्षिणा कर रहा है। यदि सूर्य को भी गति में न बताया जाय तो न्यूटन का सिद्धान्त ही गलत सिद्ध हो जाता है। इसलिए ऐसा बताना पड़ा है कि सूर्य किसी की प्रदक्षिणा कर रहा है। अब प्रश्न यही उपस्थित होता है कि सूर्य किसके चारों ओर प्रदक्षिणा कर रहा है? अब यदि कोई विशाल सूर्य हो तो वह भी स्थिर नहीं रह सकता है। उसे भी किसी और बड़े सूर्य की प्रदक्षिणा करता हुआ बताना पड़े। इसका कोई अंत नहीं आने वाला है। इसलिए अन्त में न्यूटन एक विचित्र विधान देता है कि विश्व का कोई अन्त नहीं है, वह अन्तहीन है। इसलिए न्यूटन की मीमांसा अपने स्वयं के भार से ही गलत सिद्ध हो जाती है।

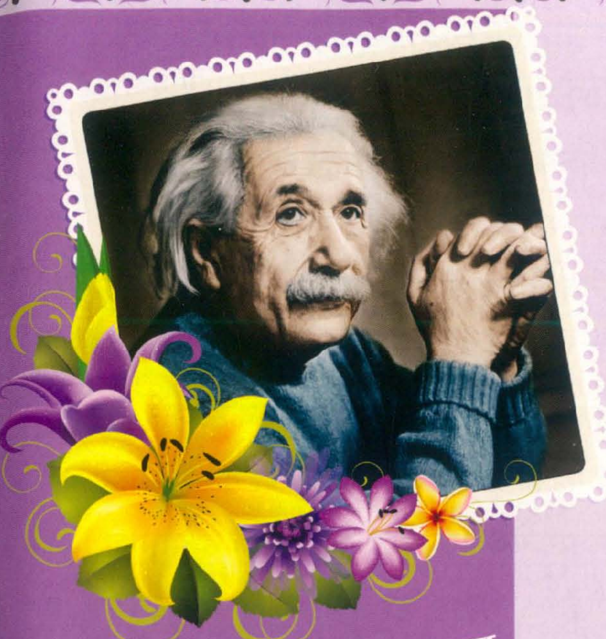

अल्बर्ट आइंस्टाइन

11. अल्बर्ट आइंस्टाइन ने न्यूटन की परिकल्पना को गलत सिद्ध किया था.....

पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण बल की जो परिकल्पना ऑइजक न्यूटन ने की उसे लगभग दो सौ वर्षों तक सभी वैज्ञानिक सत्य ही मानते रहे। उन्नीसवीं सदी में जन्मे वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंस्टाइन ने न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के नियमों को गलत सिद्ध किया और उनके स्थान पर नए नियम प्रस्थापित किए।

अल्बर्ट आइंस्टाइन यहूदी थे। जर्मनी के एक गाँव उल्म में उनका जन्म १४ मार्च १८७९ को हुआ था। जन्म के कुछ वर्षों के पश्चात् उनका परिवार म्यूनिख में रहने के लिए गया। यहाँ आइंस्टाइन के पिता ने बिजली के उपकरणों की एक दुकान खोली। वह व्यवसाय नहीं चला, इसलिए उनका परिवार दुकान बंद कर रहने के लिए इटली चला गया। आइंस्टाइन का विद्यालयीन शिक्षण स्विटझरलैंड में हुआ। उन्होंने सन् १९०० में गणित व भौतिकविज्ञान में डिप्लोमा प्राप्त किए।

आइंस्टाईन ने सन् १९१५ में अपनी प्रसिद्ध "थ्योरी ऑफ रिलेटिवीटी" (सापेक्षतावाद का सिद्धान्त) प्रस्तुत किया और बताया कि पदार्थ को ऊर्जा में रूपांतरित किया जा सकता है। इसके साथ ही आइंस्टाइन ने दुनिया को $E=mc^2$ का समीकरण भी दिया। इसके पश्चात शोध में उन्होंने पता लगाया कि प्रकाश भी फोटोन नामक कणों से बना है। आइंस्टाइन ने सन् १९१७ में अपने सापेक्षतावाद के सिद्धान्त को अंतरिक्ष की वस्तुओं व ब्रह्मांड पर लागू किया। न्यूटन की मीमांसा में था कि किन्हीं भी दो पदार्थों के बीच आकर्षणबल होता है। इस बल का आधार दो वस्तुओं की संहिता और उनके बीच की दूरी होती है। जब पदार्थ की संहिता में वृद्धि होती है, लेकिन जब दूरी बढ़ती है तब आकर्षणबल उनके वर्ग के प्रतिलोम के अनुसार कम हो जाता है। न्यूटन यह भी बताते हैं कि इस बल के कारण स्थिर अथवा गतिशील पदार्थ में प्रवेग उत्पन्न हो जाता है।

न्यूटन की परिकल्पना यह भी बताती थी कि दो गतिशील पदार्थ एक ही समतल पर सीधी रेखा में यदि समानान्तर गति करते हैं तो उनके बीच आकर्षण उत्पन्न होता है और उसकी वजह से उनके पथ बदल जाते हैं और अंत में वे इकट्ठे हो जाते हैं। इसी मुद्दे को अलग ढंग से प्रस्तुत करते हुए आइंस्टाइन ने बताया कि इन दो पदार्थों के बीच कोई आकर्षणबल ही नहीं है। वास्तव में वे एक समतल पर प्रवास करने के स्थान पर वे गोले पर खींची दो समानान्तर रेखाओं पर ही प्रवास कर रहे हैं। ये दो रेखाएँ समानान्तर होने पर भी अलग-अलग समतल पर होने के कारण मिल जाती हैं और बिना किसी भी प्रकार के आकर्षणबल के वे दोनों पदार्थ एक दूसरे के साथ मिल जाते हैं। आइंस्टाइन का कहना है कि दो पदार्थों के बीच

कोई आकर्षणबल ही नहीं है, लेकिन स्थल-काल की परिस्थितियों के कारण वे एक दूसरे के नजदीक आ जाते हैं। आइंस्टाइन के सिद्धान्त के अनुसार अंतरिक्ष में कोई गुरुत्वाकर्षण बल नहीं है।

इसके स्थान पर स्थल-काल में होने वाले स्खलन के कारण पदार्थ एक दूसरे के नजदीक आ जाते हैं। इसके अनुसार किसी विशाल गोले के नजदीक रहने वाले छोटे गोले स्थल-काल के स्खलन के कारण विशाल गोले पर गिर जाते हैं और उसके आसपास प्रदक्षिणा करने लगते हैं। अवकाश में रहनेवाले प्रत्येक पदार्थ पर स्थल (स्पेस) व काल (टाईम) का प्रभाव रहता है और उस कारण वे निश्चित प्रकार की गति करते हैं। आइंस्टाइन का कहना है कि इस प्रकार की गति के लिए गुरुत्वाकर्षण बल जैसा कोई बल काम नहीं करता है। इस प्रकार आइंस्टाइन की शोध न्यूटन की परिकल्पना से पूरी तरह भिन्न है। आइंस्टाइन की इस शोध के कारण ही गुरुत्वाकर्षण की लहरें व ब्लेक होल जैसी कल्पनाओं का जन्म हुआ।

न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त के अनुसार शुक्र ग्रह सूर्य के चारों ओर अंडाकार प्रदक्षिणा पथ पर घूमता है। इस अंडाकार पथ पर दो मध्यबिंदु होते हैं और इन दो में से एक मध्यबिन्दु पर सूर्य होता है। जबकि आइंस्टाइन की परिकल्पना के अनुसार शुक्र ग्रह सूर्य के चारों ओर एक ही अंडाकार पथ पर भ्रमण नहीं करता है बल्कि उसकी प्रत्येक भ्रमणकक्षा पहले की भ्रमणकक्षा से कुछ दूर होती है। यह भ्रमणकक्षा कछुआ छाप अगरबत्ती के आकार की होती है। निश्चित समय तक शुक्र ग्रह भ्रमणकक्षा में बाहर की ओर सरकता रहता है और फिर निश्चित समय तक फिर वह अंदर की और सरकता रहता है। यह चक्र निरन्तर चलता है। जब एक से अधिक ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमते हैं, उस स्थिति के लिए आइंस्टाइन का कहना है कि तब उनके भ्रमण पथ में कुछ फर्क हो जाता है।

12. गोलाकार सतह पर प्रकाश सरल रेखा में गति नहीं करता है....

अब तक वैज्ञानिक यही मानते थे कि प्रकाश सरल रेखा में ही गति करता है। लेकिन आइंस्टाइन ने शोध में पता लगाया कि जिस प्रकार गोले पर समानान्तर खींची गई दो रेखाओं पर प्रवास करनेवाले पदार्थ स्थल व काल के स्खलन के कारण नजदीक आ जाते हैं, उसी प्रकार गोलाकार सतह पर गुजरने वाली प्रकाश की किरणें भी अपने मार्ग से विचलित हो जाती हैं। उसका श्रेष्ठ उदाहरण है कि यदि प्रकाश के मार्ग में फुटबाल रखी गई हो तो प्रकाश की किरणें गेंद की ओर मुड जाती हैं और उस वजह से दीवार पर गेंद की छाया नहीं पड़ती है या फिर धुंधली पड़ती है। आज वैज्ञानिक कहते हैं कि चन्द्रमा की छाया धरती पर पड़ने से ही सूर्यग्रहण होता है। चन्द्र के गोले जैसे होने के कारण सूर्य की किरणें उसके आसपास तिरछी मुड़कर यदि पृथ्वी पर पहुंचे तो पृथ्वी पर परछाई पड़ेगी ही नहीं।

महान वैज्ञानिक के रूप में जाने गए ऑइजक न्यूटन ने जब पहली बार गुरुत्वाकर्षण के नियम की शोध की थी तब दुनिया में हडकंप मच गया था। गुरुत्वाकर्षण के नियम की शोध को विश्व में एक महान वैज्ञानिक अनुसंधान के रूप में जाना गया। लगभग उस समय ही पृथ्वी गेंद जैसी गोल है और वह अपनी ही धुरी पर सूर्य के चारों ओर घूमती है, इस प्रकार का सिद्धान्त तब प्रचलित हो रहा था। इस अजीबोगरीब लगनेवाली प्रक्रिया को समझने के लिए न्यूटन के गति के नियम व गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त बहुत उपयोगी हो गए थे। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि गुरुत्वाकर्षण के नियम की शोध के कारण ही उस परिकल्पना को वैज्ञानिक आधार मिला कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाती है। न्यूटन के सिद्धान्त न होते तो उस बात को कोई भी स्वीकार नहीं करता।

सापेक्षतावाद के सिद्धान्त (थ्योरी ऑफ रिलेटिवीटी) के संशोधन के द्वारा अल्बर्ट आइंस्टाइन ने अपने पूर्व के कई महान माने जानेवाले वैज्ञानिकों की शोधों को अत्यन्त ही महत्त्वहीन बना दिया था । न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के नियम भी उनमें से ही थे । आइंस्टाइन ने स्पष्ट कर दिया था कि इस दुनिया में गुरुत्वाकर्षण बल का कोई वजूद नहीं है । बगैर इस गुरुत्वाकर्षण बल के प्रभाव के पृथ्वी किस प्रकार सूर्य के आसापस घूम सकती है इसे सापेक्षतावाद के सिद्धान्त द्वारा समझाने में आइंस्टाइन को पूर्ण सफलता मिली थी । हमें आइंस्टाइन के इस सिद्धान्त को भी अन्तिम सत्य मानने की आवश्यकता नहीं है । जिस प्रकार आइंस्टाइन ने न्यूटन को गलत सिद्ध किया, उसी प्रकार कल आइंस्टाइन को गलत सिद्ध करनेवाला यदि कोई दूसरा वैज्ञानिक उभरता है, तब हम किसे सही मानेंगे ?

यहाँ हमारी चर्चा यह नहीं है की आइंस्टाइन का सिद्धान्त सच है अथवा नहीं, बल्कि मुद्दा यह है कि न्यूटन के नियम को आइंस्टाइन के सिद्धान्त के द्वारा किस प्रकार गलत सिद्ध किया गया । आइंस्टाइन के सिद्धान्त में अंतरिक्ष के दूर के पदार्थों पर किसी रहस्यमयी बल जैसे काल्पनिक गुरुत्वाकर्षण बल के प्रभाव को नकार दिया गया है । न्यूटन के उस किस्से में जिसमें सेबवृक्ष से फल के गिरने का जिक्र है, उसके लिए पृथ्वी से उत्पन्न कोई गुरुत्वाकर्षण बल नहीं था, लेकिन सेबफल का नीचे की ओर गति करने का स्वभाव था । इस प्रकार आइंस्टाइन ने सृष्टि की किसी भी गतिविधि में गुरुत्वाकर्षण बल के अस्तित्व को ही नकार दिया है, बल्कि प्रत्येक प्रक्रिया के लिए तर्कबद्ध कारण दिए थे, जिनमें गुरुत्वाकर्षण की कोई भूमिका नहीं थी । चन्द्र व अन्य दूसरे कृत्रिम उपग्रह क्यों पृथ्वी की ओर आकर्षित होकर उसके चारों ओर घूमते हैं, उसे समझाने के लिए आइंस्टाइन ने रोचक परिकल्पना प्रस्तुत की थी । एक छोटे व सरल उदाहरण के माध्यम से हम आइंस्टाइन के इस सिद्धान्त को समझने की हम कोशिश करते हैं ।

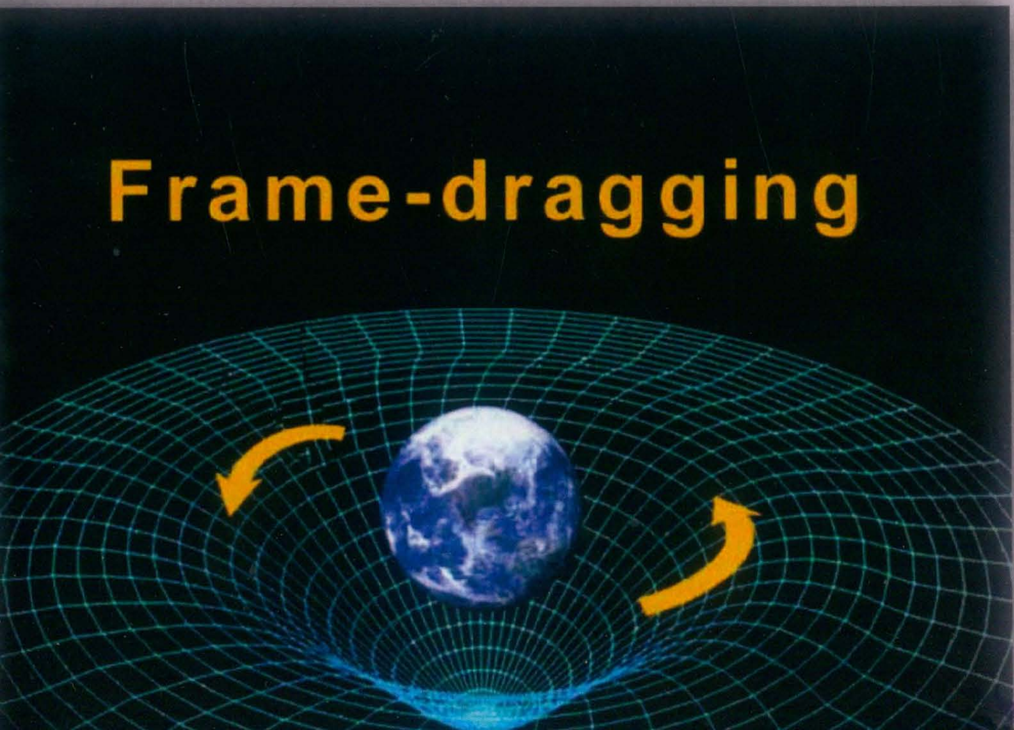

13. आइंस्टाइन की फ्रेम ड्रेगिंग परिकल्पना.....

दो व्यक्ति एक चादर के चारों कोनों को तान कर पकड़े हुए हैं । अब यदि इस चादर के बीच कोई क्रिकेट बॉल रख दी जाय तो उसके बीच एक गड्ढा हो जाएगा और चादर का कुछ भाग बॉल के चारों ओर उलझ जाएगा और उस वजह से पूरी चादर में खिंचाव-युक्त सिलवर्ट निर्मित हो जाएगा । उस चादर में जो सल पड़े होंगे, उनका खिंचावबल स्वभाविक रूप से वह क्रिकेट बॉल की दिशा में लुढक जाएगा । अब यदि वह चादर पारदर्शक हो और नंगी आंखों से देख पाना संभव न हो तो देखनेवाले को स्वभाविक रूप से यही लगेगा कि क्रिकेट बॉल इस टेबल टेनिस बॉल को अपनी और खींच रही है और जो वास्तविकता नहीं है । आइंस्टाइन ने समझाया कि पृथ्वी ने भी अंतरिक्ष की इस चादर को इसी प्रकार अपने आसपास लपेट लिया है । आइंस्टाइन के सिद्धान्त के अनुसार पृथ्वी अपनी धुरी पर चक्कर लगाती हुई घूमती रहती है और इस

प्रकार अंतरिक्ष रूपी चादर में भी भंवर उत्पन्न हो जाता है। आइंस्टाइन की भाषा में उस भंवर को "फ्रेम ड्रेगिंग" कहा जाता है। इस फ्रेम ड्रेगिंग का प्रभाव चन्द्र व कृत्रिम उपग्रहों पर भी होता है। अंतरिक्षीय पदार्थों की गति की तर्कयुक्त समझ के लिए न्यूटन ने जिस प्रकार गुरुत्वाकर्षण के नियम प्रस्तुत किए थे, उसी प्रकार आइंस्टाइन ने भी इस फ्रेम ड्रेगिंग परिकल्पना को इजाद किया था। यह भी अन्तिम सत्य है, ऐसा वैज्ञानिक आज भी नहीं मान रहे हैं। आइंस्टाइन के उस सिद्धान्त की जांच के लिए अमेरीका की "नासा" संस्था ने ७० करोड़ अमेरीकन डालर (लगभग ३५०० करोड़ रुपये) के खर्च पर अंतरिक्ष में एक कृत्रिम उपग्रह भेजा, जिसका नाम "द ग्रेविटी प्रॉब-बी" रखा गया था। गुरुत्वाकर्षण की जांच के लिए उपयोग में आनेवाले उपकरणों को इस उपग्रह पर जमाने के लिए और उसे पृथ्वी के प्रदक्षिणा पथ पर रखने के लिए "नासा" के वैज्ञानिक ४५ वर्षों से मेहनत कर रहे थे। यह जनाना अत्यन्त ही रोचक है कि आइंस्टाइन के सिद्धान्त की जांच अमेरीका का "द ग्रेविटी प्रॉब-बी" किस प्रकार करेगा। कृत्रिम उपग्रह में क्वाटर्झ के बने चार गायरोस्कोप लगाए गए हैं। यह गायरोस्कोप इस प्रकार का उपकरण है, जिसमें एक धातु रिंग में एक पहिया इस प्रकार लगाया गया है कि पहिया अपनी धुरी के चारों ओर घूम सके। इस धातु की रिंग की धुरी किसी भी दिशा में घूमने के लिए स्वतंत्र रहती है। जब इस पहिए को जोर से गोल घुमाया जाता है तब वह अपने परिभ्रमण के समतल में ही घूमता है। अंतरिक्ष में इस गायरोस्कोपी के सूक्ष्म रूप से संचालित होने पर आइंस्टाइन द्वारा परिकल्पित "फ्रेम ड्रेगिंग" की जांच की जा सकती है।

आइंस्टाइन जिस "फ्रेम ड्रेगिंग" बल की बात करते हैं, उसका प्रभाव इतना सूक्ष्म है कि यदि १६ किलोमीटर दूर से देखा जाय तो गायरोस्कोपी पहिए की धुरी में एक धागे के बराबर का अन्तर होता है। गायरोस्कोपी के इस धुरी को यदि किसी निश्चित तारे के समक्ष रखा जाय तो अनन्त काल तक वह वैसी ही रहनी चाहिए। लेकिन आइंस्टाइन के सिद्धान्त के अनुसार पृथ्वी के भंवर जैसे प्रभाव के कारण गायरोस्कोपी की धुरी कुछ आडी हो जानी चाहिए। पृथ्वी पर अन्य कई बलों के अस्तित्व के कारण इस प्रयोग को पृथ्वी पर नहीं किया जा सकता है। इस कारण अमेरीका ने इन चार अत्यन्त संवेदनशील गायरोस्कोप के साथ कृत्रिम उपग्रह को अंतरिक्ष में भेजा है। अंतरिक्ष में जलवायु व शीत-गर्मी के परिवर्तनों का प्रभाव गायरोस्कोप पर न हो, इसलिए उसे संपूर्ण शून्यावकाश में शून्य डिग्री तापक्रम पर रखा गया है। इसके लिए एक बड़ा थर्मोस भी सेटेलाईट में रखा गया है, जिसमें क्वाटर्झ के गायरोस्कोप लगाए गए है। किसी वैज्ञानिक सिद्धान्त की जांच के लिए "नासा" द्वारा संचालित यह अब तक का सबसे बड़ा मिशन है। अत्यन्त सूक्ष्म बिजली यंत्रों के द्वारा बाह्य अंतरिक्ष में गायरोस्कोप गोले की हलचल कुछ निश्चित समय के लिए नोट की जायगी। इन प्रयोगों के द्वारा वैज्ञानिक यह मालूम कर पाएंगे कि अल्बर्ट आइंस्टाइन ने जो सिद्धान्त प्रस्तुत किया है, वह वास्तव में सत्य है अथवा नहीं।

अल्बर्ट आइंस्टाइन ने जो "फ्रेम ड्रेगिंग" का नियम प्रस्तुत किया है वह मात्र गणित व तर्क पर आधारित है। उसके समय में इस प्रकार के उपकरण नहीं थे, जिससे इस प्रकार के सिद्धान्तों की सत्यता की जांच की जा सके। इसलिए आज भी गुरुत्वाकर्षणों के नियमों को सत्य माना जाता है और विद्यालयों में छात्रों को यह पढ़ाया जाता है। प्रयोगों द्वारा आइंस्टाइन के नियम यदि सत्य सिद्ध हो जाते हैं, तब न्यूटन की मीमांसा अर्थ हीन हो जायगी। न्यूटन के गुरुत्वाकर्षणों के नियम तब बेमतलब हो जाएंगे।

अब यदि आइंस्टाइन के सिद्धान्त सत्य सिद्ध नहीं हुए तब ? फिर भी न्यूटन के सिद्धान्त के समक्ष आइंस्टाइन द्वारा प्रस्तुत किए गए प्रश्न चुनौती के रूप में तो मौजूद रहेंगे ही । अंतरिक्षीय पदार्थों की तथाकथित गति को समझने के लिए न्यूटन या आइंस्टाइन द्वारा जो सिद्धान्त प्रस्तुत किए गए थे, वे मात्र सिद्धान्त ही थे, अंतिम सत्य नहीं और यह निष्कर्ष तो अब तक की चर्चा के द्वारा हम निकाल ही सकते हैं । कल यदि नया वैज्ञानिक आकर तीसरी परिकल्पना प्रस्तुत करे तब न्यूटन व आइंस्टाइन दोनों के ही सिद्धान्त निरर्थक हो जाएंगे । इसलिए विज्ञान में कुछ भी अंतिम सत्य की तरह स्वीकार नहीं किया जा सकता है । वैज्ञानिकों को जो कुछ भी मानना हो मानें लेकिन जो सत्य है वह सदैव सत्य ही रहता है । वैज्ञानिक जो बात न मानते हों, उनका इस दुनिया में अस्तित्व ही नहीं है, इस प्रकार की मान्यता रखना मूर्खता है ।

14. ब्लेकहोल की अजीबोगरीब परिकल्पना.....

आइंस्टाइन के सापेक्षावाद के सिद्धान्त का उपयोग कर इन दिनों कुछ वैज्ञानिकों ने ब्लेकहोल के नाम से जिन्हें जाना जाता है, ऐसे तारों की उन्होंने शोध की है । इसके अनुसार अंतरिक्ष में ऐसे कई स्थान हैं जो प्रकाश को भी अपने अन्दर खींच लेते हैं, इसलिए उसके अन्दर से भी प्रकाश बाहर नहीं आ सकता है । यदि तारों का कोई समूह अंतरिक्ष में रिक्त लगनेवाले स्थान के चारों ओर परिभ्रमण कर रहा हो, तब वैज्ञानिकों के अनुसार संभावना है कि उसके केन्द्र में ब्लेकहोल हो । किसी भी अंतरिक्षीय पदार्थ के आकर्षणबल से यदि मुक्त होना हो, तो उसके लिए जिस वेग की जरूरत पड़ती है, उसे विज्ञान की परिभाषा में ''एस्केप वेलेसिटी'' कहते हैं । ऐसी सबसे अधिक गति प्रकाश की हो सकती है । जिस अंतरिक्षीय पदार्थ की एस्केप वेलेसिटी प्रकाश की गति से अधिक हो, उसे वैज्ञानिक ब्लेकहोल के नाम से जानते हैं ।

वैज्ञानिक बताते हैं कि किसी भी अंतरिक्षीय पदार्थ की एस्केप वेलेसिटी का आधार उसकी घनता होती है । पदार्थ की घनता यदि अधिक हो तो उसकी एस्केप वेलेसिटी भी अधिक होगी । ब्लेकहोल के रूप में जाने जाते तारों की घनता इतनी अधिक होती है कि उनकी एस्केप वेलेसिटी प्रकाश की गति से भी अधिक होती है, इसलिए उनके अन्दर से भी प्रकाश बहार नहीं आ पाता है । वैज्ञानिक कहते हैं कि पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य बाहर लाख गुना अधिक बड़ा है, लेकिन ब्लेकहोल की घनता इतनी अधिक है कि सूर्य का समस्त पदार्थ मात्र तीन किलोमीटर त्रिज्या वाले गोले में ही समा सकता है । वास्तव में ब्लेकहोल को दूरबीन के माध्यम से देखना संभव नहीं हो पाता है, लेकिन वैज्ञानिकों का कहना है कि उसके आसपास के तारों की गति के द्वारा ब्लेकहोल की उपस्थिति मालूम होने लगती है ।

अल्बर्ट आइंस्टाइन ने सन् १९१५ में जनरल थ्योरी ऑफ रिलेटिवीटी की शोध की थी । इसके पूर्व उन्होंने दर्शाया था कि प्रकाश पर भी गुरुत्वाकर्षण का प्रभाव नहीं होता है । इसके कुछ माह के पश्चात् ही कार्ल स्कवार्झ चाईल्ड नामक वैज्ञानिक ने आइंस्टाइन के सिद्धान्त के आधार पर अंतरिक्ष में ब्लेकहोल की संभावना व्यक्त की ।

भारतीय मूल के वैज्ञानिक सुब्रमण्यम् ने सन् १९३० के शोध में मालूम किया कि सूर्य से डेढ़ गुना अधिक संहितावाले तारे ब्लेकहोल में रूपांतरित हो सकते हैं । वैज्ञानिक कहते हैं कि ब्लेकहोल के केन्द्र में किसी भी पदार्थ का इतना अधिक संकोचन हो जाता है कि उसकी घनता अनन्त हो जाती है और आकार शून्य हो जाता है । इस शून्य आकार की जगह को विज्ञान की भाषा में ''ग्रेवीटेशनल सिग्नुलरिटी'' के नाम से जाना जाता है ।

वैज्ञानिक कहते हैं कि तारों में जब ईंधन समाप्त हो जाता है, तब उसके अपने वजन से ही टूटने की प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है । इसलिए तारों की घनता बढ़ने लगती है और कद घटने लगता है । पहले जिन तारों का कद बीस सूर्यों के बराबर था, उनका कद अब पांच सूर्य जितना रह गया है । एक स्थिति ऐसी भी आ जाती है कि तारों की घनता के बढ़ने से उनमें से निकलने वाला प्रकाश बंद हो जाता है और वह ब्लेकहोल बन जाता है । यह ब्लेकहोल की परिकल्पना इन पूर्वधारणाओं के आधार पर रचित है कि तारे सूर्य से विशाल हैं, अत्यन्त दूर हैं और पृथ्वी की अपेक्षा सूर्य कई गुना विशाल है । सूर्य व तारों का जितना कद आज वैज्ञानिक मानते है, उसकी अपेक्षा उनका कद थोड़ा कम होने से ब्लेकहोल मात्र कल्पना ही है ।

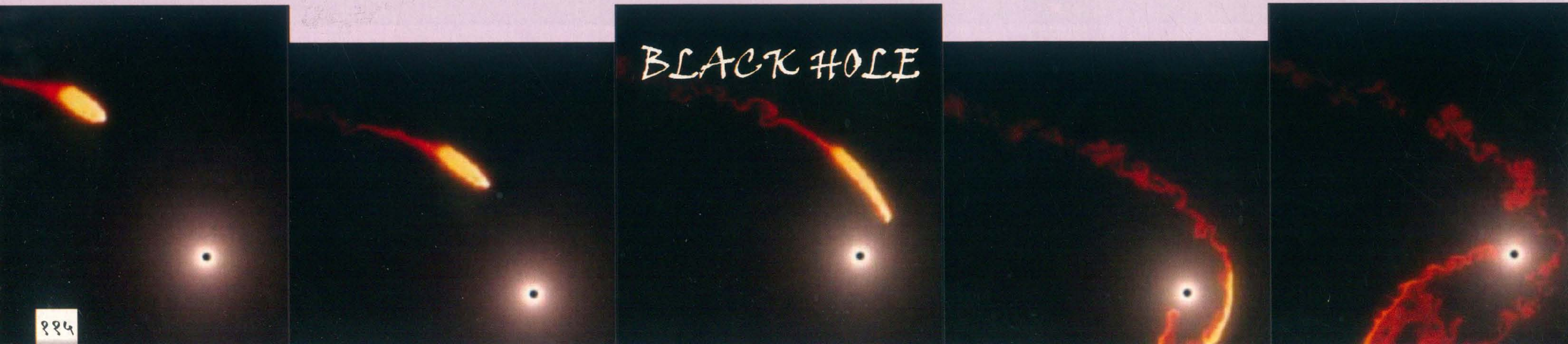

15. आइंस्टाइन के सिद्धान्त के समक्ष गुजरात के वैज्ञानिक की चुनौती.....

आज वैज्ञानिक शोध के द्वारा किसी एक सिद्धान्त का पता लगाते हैं और कल उसे गलत सिद्ध कर देते हैं। विज्ञान सतत परिवर्तनशील है और उसके सिद्धान्तों में सदैव बदलाव आता रहता है। इसका श्रेष्ठ उदाहरण है - पृथ्वी आदि ग्रहों की सूर्य के चारों ओर लगनेवाली गति को समझने के लिए वैज्ञानिकों द्वारा तैयार किए गए सिद्धान्त हैं। सबसे पहले कोपरनिकस ने घोषित किया था कि सूर्य स्थिर है और पृथ्वी उसके चारों ओर घूम रही है। तब यह एक पहेली थी कि किस बल के आधार पर सूर्य के चारों ओर पृथ्वी घूम सकती है और कौन सा बल उसे सौर मंडल के बाहर छिटकने से रोकता है ? ऑइजक न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्तों को अंतरिक्षीय पदार्थों पर लागू कर इस पहेली का हल दिया था। न्यूटन की परिकल्पना के अनुसार पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है और उससे केन्द्रत्यागी बल उत्पन्न होता है। यह केन्द्रत्यागी बल पृथ्वी को सूर्य से दूर ले जाने की कोशिश करता है। दूसरी ओर सूर्य अपने गुरुत्वाकर्षण बल के प्रभाव से पृथ्वी को अपनी ओर खींचने का प्रयास करता है उसे केन्द्राभिमुखी बल कहा जाता है। इन केन्द्रत्यागी व केन्द्राभिमुखी बलों के संयुक्त प्रभाव के कारण पृथ्वी सूर्य के चारों ओर अंडाकार पथ पर परिभ्रमण करती रहती है। कुछ अंतराल के पश्चात न्यूटन के इस सिद्धान्त को अल्बर्ट आइंस्टाइन ने गलत सिद्ध किया था।

डॉ. पंकज जोशी

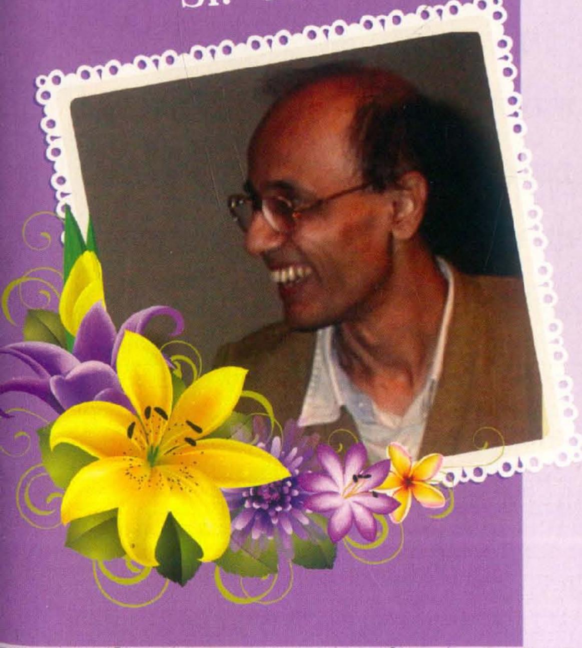

आइंस्टाइन की मीमांसा के अनुसार सूर्य में कोई गुरुत्वाकर्षण बल है ही नहीं। हमारा अंतरिक्ष चारों ओर तान कर रखी गई चादर जैसा है। सूर्य ने इसमें अपनी जगह बनाई है और अपनी धुरी के आसपास चारों ओर घूम रहा है। सूर्य के इस भ्रमण के कारण अंतरिक्ष की इस चादर में भी भंवर बन जाता है, इस प्रकार का माहौल निर्मित हो जाता है और उसके प्रभाव से पृथ्वी व अन्य ग्रह सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाते हैं। आइंस्टाइन के इस सिद्धान्त को भी वैज्ञानिकों ने स्वीकार कर लिया। इस सिद्धान्त के अनुसार कोई तारा यदि संकुचित होने लगे तो उसका आकार घटने लगता है और गुरुत्वाकर्षण बल सतत बढ़ने लगता है। यह बल तो बढ़कर इस सीमा तक हो जाता है कि उस तारे में से प्रकाश की किरणें भी बाहर नहीं निकल पाती हैं और अंत में वह तारा ब्लेकहोल बन जाता है। आइंस्टाइन के सिद्धान्त को यदि स्वीकार करना पड़े तो इस ब्लेकहोल के सिद्धान्त को भी स्वीकार करना होगा। लेकिन अब गुजराती वैज्ञानिक पंकज जोशी ने तो तारे के ब्लेकहोल में रूपांतरित होने के सिद्धान्त को ही गलत सिद्ध किया है और इसलिए इससे आइंस्टाइन के सापेक्षतावाद के सिद्धान्त के समक्ष भी चुनौती उपस्थित हो गई है।

गुजरात के भावनगर में जिनका जन्म हुआ वे श्री पंकज जोशी अपने आदर्श के रूप में महात्मा गांधी और आइंस्टाइन को मानते हैं। उनके पिताजी स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थे। सौराष्ट्र विश्वविद्यालय से भौतिक शास्त्र में स्नातकोत्तर पदवी प्राप्त करने के पश्चात् वे मुंबई की टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेन्टल रिसर्च संस्था में एस्ट्रोफिजिस्ट के रूप में कार्यरत हो गए। उनकी ब्लेकहोल सिद्धांत के प्रति रुचि जागृत हुई। पी.एच.डी. उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् उन्होंने यूरोप व अमरीका की यूनिवर्सिटी में एक संशोधक के रूप में तीन वर्ष बिताए। भारत लौटने के पश्चात ब्लेकहोल परिकल्पना के रहस्य पर से पर्दा उठाने के लिए शोध शुरू की।

ब्लेकहोल परिकल्पना आइंस्टाईन के सापेक्षतावाद के सिद्धान्त का सर्जन है। इस परिकल्पना के अनुसार कोई तारा यदि सूर्य की संहिता से चार या पाँच गुना संहिता वाला हो और यदि वह संकुचित होने लगे, तब उसकी घनता अनन्त हो जाती है और उसमें से प्रकाश की किरण भी बाहर नहीं निकल सकती है। अंतरिक्षीय पदार्थों की गति को समझने के लिए आज तक आइंस्टाइन के सापेक्षतावाद के सिद्धांत की मदद ली जाती थी व परमाणु में इलेक्ट्रान, प्रोटोन आदि का परिभ्रमण समझने के लिए क्वांटम थ्योरी को ही मूल आधार माना जाता था। यह भी एक विचित्रता ही थी कि इन दोनों थ्योरी के परस्पर विरोधाभासी होने के पश्चात् भी पिछले साठ वर्षों से पूरी दुनिया के वैज्ञानिक इन दोनों थ्योरी को ही सत्य मानते रहे। कितने ही दशकों से वैज्ञानिक इन दोनों थ्योरी का समन्वय करने वाली "थियरी ऑफ एवरीथिंग" की शोध का प्रयास करते रहे, लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिली। पेन्सिलवेनिया यूनिवर्सिटी में शोध कर रहे अभय अष्टेकर व उनके साथियों ने अंतरिक्षीय पदार्थों की गतिविधियों को समझने के लिए "लूप क्वेन्टम" नामक थ्योरी की शोध की थी। लेकिन जब तक प्रयोग के द्वारा कोई थ्योरी सिद्ध न हो जाए तब तक वैज्ञानिक उसे स्वीकार नहीं करते हैं। इस थ्योरी को प्रयोगों द्वारा सिद्ध करने की चुनौती श्री पंकज जोशी व उनके साथियों ने संयुक्त रूप से स्वीकार की।

अपने साथियों के साथ मिलकर डॉ. पंकज जोशी ने सूर्य से अनेक गुनी संहिता वाले व समाप्ति की ओर जा रहे तारे का निरीक्षण किया और भविष्यवाणी की कि यह तारा ब्लेकहोल में रूपान्तरित होने के स्थान पर इसमें विस्फोट हो जायेगे और उसका समस्त पदार्थ अंतरिक्ष में फिंक जाएगा। उन्होंने वैज्ञानिक रूप से गणना कर यह सिद्ध कर दिया कि तारे की समाप्ति के अंतिम दौर में स्पेस-टाईम का मोड इतना विस्तृत हो जाता है कि उससे आइंस्टाइन की "जनरल रिलेटिवीटी थ्योरी" गलत सिद्ध हो जाती है और आगे की घटनाएँ "क्वांटम ग्रेविटी थ्योरी" के अनुसार ही घटती हैं। खिरते हुए तारों का निरीक्षण कर डॉ. पंकज जोशी ने सिद्ध किया कि कोई भी तारा जब नष्ट होने वाला होता है तो उसके प्रकाश में पहले कमी होती है और बाद में एकदम अचानक चमकने लगता है और फिर उसमें से अधिक ऊर्जावाले रजकणों का (जिन्हें गामा किरणें, कास्मिक किरणें और न्यूट्रीन कहते हैं) तेज प्रवाह बहने लगता है।

यह घटना सिद्ध करती है कि अंतरिक्षीय पदार्थों पर क्वांटम थ्योरी तो लागू होती है लेकिन आइंस्टाइन की "जनरल रिलेटिवीटी थ्योरी" लागू नहीं पड़ती है। डॉ. पंकज जोशी के इस संशोधन को "फिजिकल रिव्यू लेटर्स" जैसी प्रतिष्ठित विज्ञान पत्रिका में स्थान मिला है।

आइंस्टाइन ने आज से लगभग ६० वर्ष पूर्व "जनरल थ्योरी ऑफ रिलेटिवीटी" की शोध की थी, लेकिन अंतरिक्षीय पदार्थों के सम्बन्ध में उनका प्राकृतिक प्रयोगशाला में परीक्षण आज तक नहीं हो पाया है। प्रयोगों के द्वारा अब डॉ. पंकज जोशी ने सिद्ध कर दिया है कि अंतरिक्षीय पदार्थों की गति के सम्बन्ध में उन पर क्वांटम थ्योरी ही लागू होती है, अब यदि डॉ. पंकज जोशी के अवलोकन को समर्थन प्राप्त होगा तो अल्बर्ट आइंस्टाइन की जनरल रिलेटिवीटी थ्योरी को चुनौती देनेवाले प्रथम वैज्ञानिक के रूप में डॉ. पंकज जोशी होंगे। अपने संशोधन के बारे में डॉ. पंकज जोशी कहते हैं कि - "ब्लेकहोल की परिकल्पना में कोई भी जानकारी उसमें से बाहर ही नहीं आ सकती है, वह बात मुझे बहुत विचित्र लगती थी। जबकि क्वांटम मिकेनिक्स का मूलभूत सिद्धान्त ही यही है कि जानकारी का नाश संभव ही नहीं है। लेकिन ब्लेकहोल के मूल में ही असीमित घनता का सिद्धान्त है, जिसमें भौतिकशास्त्र के समस्त नियम गलत सिद्ध हो जाते हैं। इस विरोधाभास को किस प्रकार हल किया जाय, वह कोई नहीं जानता था। मैं इस समस्या के मूल तक पहुंचना चाहता था। मैं सन् १९८० के दशक में कैम्बिज में महान खगोलशास्त्री स्टीफन हाकिंग्स से मिला, तब मैंने इस बारे में उनसे सलाह माँगी। उनका प्रतिभाव बिल्कुल भी उत्साहवर्धक नहीं था। उन्होंने तो मुझे यह चेतावनी भी दी कि यह उलझन बहुत जटिल है और इसे हल करने की कोशिश करने के स्थान पर अच्छा हो कि मैं स्ट्रिंग थ्योरी की ओर अपनी लक्ष्य को केन्द्रित करूँ। इससे अपने निश्चिय पर मैं अधिक दृढ हो गया। मैंने तय किया कि मैं प्रकृति के पास लौटूँगा और तारों का अभ्यास कर मूलभूत सत्य को जानूंगा।"

स्टीफन हाकिंग्स

डॉ. पंकज जोशी ने नष्ट होने को अग्रसर हो रहे तारों के सम्बन्ध में अपना यह संशोधन सबसे पहले सन् १९९६ में प्रकाशित किया। दुनिया की नजरों पर आने में इसे आठ वर्ष लगे। अब भी विश्व के प्रमुख वैज्ञानिक डॉ. जोशी की इस मीमांसा पर अपनी सौ प्रतिशत स्वीकृति नहीं देते हैं। यदि ऐसी स्वीकृति देते हैं तो विद्यालयों में छात्रों को आइंस्टाइन का सापेक्षवाद पढ़ाना बंद करना होगा। विज्ञान की दुनिया में किसी शोध को सत्य साबित करने के लिए जिस प्रकार सत्य माने जाने वाली प्रस्थापित शोध को गलत सिद्ध करने के लिए भी बहुत संघर्ष करना होता है। डॉ. पंकज जोशी व उनके साथी इस समय उस कठीन दौर से ही गुजर रहे है फिर भी इस समय ब्लेकहोल के बारे में डॉ. पंकज जोशी व उनके साथी जो भी संशोधन कर रहे हैं, उस पर पूरी दुनिया के वैज्ञानिकों की नजर है। इस गुजराती वैज्ञानिक ने पुनः एक बार सिद्ध कर दिया है कि वैज्ञानिक किसी सिद्धान्त को चाहे कितना भी महान मानते हों, तब भी उसे अंतिम सत्य के रूप में स्वीकार करने की आवश्यकता बिल्कुल भी नहीं है।

("जैन दर्शन में भूगोल मिमांसा" ग्रंथ में से साभार...)

१६. पू. आत्मारामजी महाराज के अंतरोद्गार....

पू. आत्मारामजी महाराज

पंचम काल की मनुष्यायु.....

कितने ही भव्य जीवोंने सामान्य प्रकार से ऐसा सुन रक्खा है, कि पाँचवें आरे में उत्कृष्ट एकसौ बीस वर्ष की आयु है। जब वह जीव किसी अंग्रेज तथा और किसी के मुख से सुनते हैं, कि डेढसौ अथवा दोसौ, तथा अढाईसौ वर्ष की आयुवाले भी भोट्टानादि(भूटानादि)किसी देश में मनुष्य होते हैं, तब दृढ श्रद्धावाले भोले जीव तो कदापि किसी का कहना नहीं मानते हैं, चाहे बड़ी आयुवाला मनुष्य उनके सन्मुख भी खड़ा कर दिया जाय, तो भी वे झूठ ही मानेंगे। क्योंकि वे जानते है कि जो हमारे जिनेन्द्र देव का कथन है, सो कदापि झूठा नहीं है। परन्तु जिन को जैन मत की दृढ श्रद्धा नहीं है, वे कुछ सांसारिक विद्या में निपुण हैं, चाहे जैन मत वाले ही हो, उनके मन में अवश्य शंका पड़ जायेगी। क्योंकि उन्होंने भी सर्व जैन मत के शास्त्र सुने नहीं है। शास्त्र में जो कथन है, सो सापेक्ष है, बाहुल्य करके कहा हुआ है। सो कथंचित् जो अन्यथा हो, तो आश्चर्य नहीं। क्योंकि बहुत से शास्त्रों में लिखा है, कि ज्योतिष-चक्र अर्थात् तारा-मंडल है , सो सर्व तारे मेरुपर्वत की प्रदक्षिणा देते हैं। यह बात सर्व जैन मानते हैं। परन्तु ध्रुव का तारा कहीं भी नहीं जाता है, और ध्रुव के पास जो तारे-सप्तर्षि रूढि(लोक)में प्रसिद्ध हैं, जिनको बालक मंजी, पहरेदार, कुत्ता और चोर कहते हैं। तथा और भी कितनेक तारे ध्रुव के पार्श्ववर्ती हैं। वे सर्व ध्रुव की प्रदक्षिणा देते हैं। परन्तु मेरुपर्वत की प्रदक्षिणा नहीं देते हैं। यह बात हमने आँखों से देखी है, और औरों को दिखा सकते हैं। तो फिर प्रथम जो शास्त्रकार ने कहा था, कि सर्व तारे मेरु की प्रदक्षिणा देते हैं, यह कहना जैनी क्यों सत्य मानते हैं ?

इसका समाधान ऐसा है, कि प्रथम जो कथन है, सो बाहुल्य की अपेक्षा से है। क्योंकि बहुत तारा-मंडल ऐसा है, जो मेरुपर्वत की प्रदक्षिणा देता है, और कितने ही ऐसे हैं, जो ध्रुव के आस-पास ही चक्र देते हैं। यह समाधान, पूज्यश्री जिनभद्रगणिक्षमाश्रमणजी ने संघयणी तथा विशेषणवती ग्रन्थ में लिखा है - कि मेरुपर्वत के चारों और चार ध्रुव हैं, और उन चारों ध्रुवों के पास ऐसे ऐसे तारे हैं, जो सदा उन चारों ध्रुवों के ही आस-पास चक्र देते हैं। इससे यह सिद्ध हुआ कि जो शास्त्र का कहना है, सो बाहुल्य से और किसी अपेक्षा करके संयुक्त है और किसी जगह स्थूल व्यवहार नय के मत से कथन है, परन्तु सूक्ष्म अधिक न्यूनता की विवक्षा नहीं की है। इसी तरह सौ वर्ष से अधिक आयु जो पंचम काल में कही है, सो बाहुल्य की अपेक्षा तथा आर्य खंड अर्थात् मध्य खंड की अपेक्षा से है। यदि किसी पुरुष की १५०, २००, २५० इत्यादि वर्षों की आयु हो जाय, तो मन में जिनवचन की शंका न करनी - कि क्या जाने जिनवचन सत्य हैं कि झूठ हैं ? अर्थात् ऐसा विकल्प मन में नहीं करना। क्योंकि शास्त्र का आशय अति गम्भीर है, और ऐसा गीतार्थ कोई गुरु नहीं है, जो यथार्थ बतला दे।

इस आयु के कहने का यह समाधान है, कि भगवान् श्री महावीर के निर्वाण बाद ५८५ वर्ष के लगभग जैनमत के आचार्य श्री आर्यरक्षितसूरि साढे नव पूर्व के पाठक, जिन के पास शक्रेन्द्र निगोद के जीवों का स्वरूप सुनने आया था। तब शक्रेन्द्र ने प्रथम वृद्ध ब्राह्मण का रूप करके श्री आर्यरक्षितसूरि को पूछा, कि हे भगवन्! मैं वृद्ध हो गया हूँ यदि मेरी आयु थोड़ी हो तो मुझे बता दीजिये, ताकि मैं अनशन करूं। तब श्री आर्यरक्षितसूरिजी ने दशवें पूर्व के यव का अध्ययन में उपयोग देकर देखा, तो उस की आयु सौ वर्ष से अधिक जानी, फिर उपयोग देकर देखा, तो दो सौ वर्ष से अधिक जानी, फिर उपयोग दिया, तो तीन सौ वर्ष से अधिक आयु जानी। तब आचार्य श्री आर्यरक्षितसूरिजी ने विचार किया, कि यह भारत वर्ष का मनुष्य नहीं है। यह कथानक आवश्यक सूत्र की सामायिक अध्ययन की उपोद्घात निर्युक्ति मैं है। इस कथानक से ऐसा भाव निकलता है, कि यदि भारत वर्ष के मनुष्य की आयु तीन सौ वर्ष की भी हो तो आश्चर्य नहीं। क्योंकि श्री आर्यरक्षितसूरिजी ने जो तीन सौ वर्ष से जब अधिक आयु देखी, तब कहा, कि यह भारत वर्ष का मनुष्य नहीं। यह कहने से तीन सौ वर्ष की आयु भी भारत वर्ष में मनुष्य की किसी प्रकार से हो, तो क्या आश्चर्य है?

आधुनिक भूगोल तथा जैन मान्यता.....

तथा कितने ही जीवों के मन में ऐसी भी शंका हो, तो उसका क्या समाधान है? जैसे कि जैनमत वाले भरत खंड कहाँ तक मानते हैं? क्योंकि अमेरिका, रूस, चीन आदि जो देश इस काल में लोगों के देखने या सुनने में आते हैं, जैनलोक उन सब को भारत वर्ष मैं ही मानते हैं। तथा अमेरिका, विलायतादि सर्व मुलकों के बीच में जो समुद्र पडा है, सो ऋषभदेव और भरतचक्रवर्ती के समय में नहीं था, किंतु जगत के बाहिर जो महासमुद्र है, सो था। इस कारण से अर्थात् समुद्र के अंदर आ जाने से असली भरतक्षेत्र का स्वरूप बिगड गया-कहीं समुद्र हो गया, और कहीं द्वीप बन गये।

इस विषय जैनमत का शत्रुंजयमाहात्म्य नामक ग्रंथ है, उसमें लिखा है, कि दूसरा सगरनामा चक्रवर्ती हुआ है, वह इस समुद्र को भारत वर्ष में जंबूद्वीप के दक्षिण दिशा के विजयंत नामक दरवाजे के रास्ते से लाया है। उसके लाने से बर्बरादि अनेक हजारों देश तो जल में डूबकर समुद्र की भूमिका बन गये, और जो उच्चस्थल थे, वे द्वीप और विलायतादि देश बन गये। पीछे से असली देशों का नाम नष्ट होने से बहुत देशों के नाम कल्पित रक्खें गये। भरतखंड कुछ और का और बन गया। कितने ही देशों के उत्तर खंडों में बर्फ पड जाने से, और समय के बदलने से सर्वथा पानी जम गया। तब तो चारों और समुद्र ही दिखने लगा। इसलिये आना-जाना बंद हो गया। और हमारे शास्त्रकार तो प्रथम आरे में तथा ऋषभदेव और भरतचक्रवर्ती के समय में जो इस भारत वर्ष का हाल था, सो सदा से लिखते चले आये हैं। परंतु भरतक्षेत्र के बिगड तिगड के और का और बन जाने से किसी ने विस्तारपूर्वक वृत्तांत ठीक ठीक नहीं लिखा। यदि लिखा भी होगा, तो भी जैनमत के ऊपर बड़ी बड़ी विपत्तियाँ आई हैं, उनके लाखों ग्रंथ नष्ट हो गये हैं। इस वास्ते हम ठीक ठीक सर्व वृत्तांत बता नहीं सकते हैं। परंतु जितने जैन मत के ग्रंथ हमारे पढ़ने में आये हैं, उनमें से जो ठीक है, सो इस ग्रंथ में लिखते हैं।

इस समय सर्वक्षेत्र अदल बदल हो गये हैं। गंगा, सिंधु असलस्थान में नहीं बहती। क्योंकि उनका अगला प्रवाह तो समुद्र ने रोक लिया, और पीछे से पानी आना बंद हो गया। फिर जिस पर्वत से अधिक नदी की प्रवृत्ति हुई, वह नदी उसी पर्वत से निकलती लोगों ने मान ली। इस वास्ते गंगा और सिंधु में क्षुल्लक हेमवंत पर्वत से जल आना बंद हो गया, नाम मात्र से गंगा सिंधु रह गई। और नगरियों में

विनिता नगरी की कल्पना पर अयोध्या बनाई गई। काबल के परे तक्षशिला अर्थात् बाहुबल की नगरी की कल्पना की गई।इस समय में वह तक्षशिला भी नहीं रही। उसका नाम गजनी प्रसिद्ध हुआ।

जैनियों की श्रद्धा के अनुसार प्रथम आरे को और ऋषभदेव तथा भरत राजा के समय के व्यतीत होने में असंख्य वर्ष व्यतीत हो गये हैं। तो फिर नदी, पर्वत, देश, नगरों के ऊलट पलट हो जाने में क्या आश्चर्य है? और समुद्र का देशों पर फिर जाना तो तौरेत (?) ग्रन्थ से भी ठीक ठीक सिद्ध होता है। तथा पुराणादि ग्रन्थों में भी लिखा है, कि कोई ऐसा समय भी था कि समुद्र में पानी नहीं था, पीछे से आया है। इस वास्ते शत्रुंजय-माहात्म्य में जो लिखा है कि भरत क्षेत्र में समुद्र का पानी सगर चक्रवर्ती लाया है, सो कहना ठीक है।

तथा तपगच्छ के आचार्य श्री विजयसेनसूरि अपने प्रश्नोत्तरों में लिखते हैं, कि मागध, वरदाम और प्रभास नामक तीन तीर्थ जगत के बाहिर के समुद्र में हैं। इससे भी यही सिद्ध होता है, कि भरत चक्रवर्ती जब षट्खण्ड और मागधादि तीर्थो को साधने को गये थे, तब यह समुद्र का पानी रस्ते में नही था। तथा शास्त्रकारों ने तो सर्व शास्त्रों की शैली श्री ऋषभदेव के कथनानुसार रक्खी है। इस वास्ते चक्रवर्ती आदि का कथन भरत चक्रवर्ती के सरीखा कह दिया है। तथा इस काल में कितने ही विद्वानो ने भूगोल के हिसाब से जो कुतब (नक्शे) बनाये हैं, और उनके अनुसार सरद तथा गरम देशों का विभाग किया है। यद्यपि उनके देखने सुनने अनुसार तथा उनके अनुमान के अनुसार वर्तमान समय में ऐसा ही होगा, परंतु सदा ऐसा ही था, यह कहना ठीक नहीं। क्योंकि भूगोल हस्तामलक पुस्तक में लिखा है, कि रूस देश के उत्तर के पास (तरफ) जहाँ बर्फ के सिवाय और कुछ भी नहीं है, वहाँ गरमी के दिनों में बर्फ के गलने से तथा किसी जगह बर्फ के करार गिर पड़ने से उसके हेठ (नीचे) से एक किसम के हाथी निकलते हैं, सो भी सैंकड़ों हजारों निकलते हैं, जिन का नाम उस देश वाले मेमाथ कहते हैं। अब बड़ा आश्चर्य तो इन मेमाथों के देखने से यह होता है, कि ये जानवर गरम मुलकों के रहने वाले हैं, और यह सरद मुलक में कहाँ से आये? और इनके खाने वास्ते भी कुछ नहीं। इस काल में जो एक भी हाथी उस मुलक में जाकर बांधे, तो थोडे से काल में मर जाएगा। तो ये लाखों मेमाथ इस मुलक में क्यों कर जाते होंगे? और क्या खाते होंगे? इसमें यही कहना पडेगा कि किसी समय में यह मुलक गरम होगा, पीछे पवन की तासीर बदलने से सरद मुलक हो गया। इस वृत्तांत से यह सिद्ध होता है, कि जो सरद मुलक हैं, वे गरम हो सकते हैं, और जो गरम मुलक हैं, वे किसी काल में सरद हो जाते हैं। इस वास्ते भूगोल के अनुसार जो सरदी गरमी की व्यवस्था की

कल्पना करनी है, वह हमेशा के वास्ते दुरुस्त नहीं। क्या जाने देशों की क्या क्या व्यवस्था बदल चुकी हैं ? और क्या क्या बदलेगी ? इसका पूरा स्वरूप तो सर्वज्ञ ही जान सकता है।

तथा इस पृथ्वी को भूगोल कहते हैं। और यह भी कहते हैं कि सूर्य नहीं फिरता, किन्तु पृथ्वी सूर्य के इर्द गिर्द घूमती है। यह बात कुछ अंग्रेजों ने ही नहीं निकाली है, किन्तु अंग्रेजों से पहिले भी इस बात के मानने वाले भारत वर्ष में थे। क्योंकि जैनमत के शीलांगाचार्य जो विक्रम के ७०० वर्ष में हुये है, वे आचार्य आचारांग सूत्र की वृत्ति[१] में लिखते हैं, कि कितने ही ऐसा भी मानते हैं, कि भूगोल फिरता है और सूर्य स्थिर रहता है। परन्तु यह मत जैनियों का नहीं है। उनके शास्त्रों में तो प्रगट लिखा है, कि सूर्य चलता है, और पृथ्वी स्थिर रहती है। और सूर्य के भ्रमण करने के एक सौ चौरासी मंडल आकाश में हैं। उन मंडलों में प्रवेश करना, और दिनमान, रात्रिमान का घटना बढ़ना, और मौसमों का बदलना, ग्रहण का लगना, सूर्य के अस्त उदय होने में मतों का विवाद इत्यादि सर्व बातें सूर्यप्रज्ञप्ति या चंद्रप्रज्ञप्ति शास्त्रों के पढ़ने से अच्छी तरह मालूम पड़ जाती हैं।

तथा जो पृथ्वी के गोल होने में समुद्र के जहाज की ध्वजा प्रथम दिखती हैं, इत्यादि कहते हैं। सो यह बात कहने वालों की समझ में ऐसे आती होगी। परन्तु हमारी समझ में तो नहीं आती है। हम तो ऐसे समझते हैं, कि हमारे नेत्रों में ऐसी ही योग्यता है, कि जिससे वस्तु गोलादि दिख पड़ती है। क्योंकि जब हम सीधी सडक पर खड़े होते है, तब हमारे पगों की जगह सड़क चौड़ी मालूम पड़ती है, और जब दूर नजर से देखते हैं, तब वह ही सडक संकुचित मालूम पडती है। और आकाश में पक्षी को जब सिर के ऊपर उड़ता देखते हैं, तब हमको ऊंचा दूर दिखाई पड़ता है, और जब उसी पक्षी को थोड़ी सी दूर हटते हुए देखते हैं, तब धरती से बहुत निकट देखते हैं। इतनी दूर में पृथ्वी की इतनी गोलाई नहीं हो सकती है। तथा आकाश को जब देखते हैं, तब तंबू सा दिखलाई देता है। इसमें जो कोई यह बात कहे कि धरती की गोलाई के संबंध से आकाश भी गोल दिखता है, यह कहना ठीक नहीं। क्योंकि पृथ्वी की इतनी गोलाई नहीं हो सकती है। इस वास्ते नेत्रों में जिस वस्तु के जानने की जैसी योग्यता है, वैसी वस्तु दिखती है, यही कहना ठीक मालूम होता है।

तथा यह भरतखंडादिक की पृथ्वी बहुत जगह ऊँची नीची मालूम होती है, क्योंकि श्री हेमचन्द्रसूरि प्रमुख आचार्य पद्मप्रभचरित्रादि ग्रंथों में लिखते हैं, कि लंका से इतने योजन पश्चिम दिशा को जावें, तब आठ योजन नीचे पाताल लंका है। यदि इस प्रमाण योजन होवें, तब तो क्या जाने अमेरिका ही पाताल लंका होवे। और नीची जगह होने से बुद्धिमानों को पृथ्वी गोल मालूम पडती होगी। इसी पाताल लंका की तरह और जगह भी धरती ऊँची नीची हो, तो क्या आश्चर्य है ? क्योंकि पश्चिम महाविदेह की धरती एक हजार योजन ऊंडी (गहरी) लिखी है। इसी तरह और जगह भी ऊँची नीची धरती के संबंध से कुछ और का और दीख पडे, तो जैनमती को श्री अर्हन्त भगवंत के कहने में शंका न करनी चाहिये।

("जैन तत्त्वादर्श" ग्रंथ में से साभार....)

१. भूगोल : केषांचिन्मतेन नित्यं चलन्नेवास्ते, आदित्यस्तु व्यवस्थित एव। (उ. ६, अ. ८, सू. १९९).

तुर्कि में ७०० जैन मंदिर.....

लगभग ३०० वर्ष पहले राजस्थानी भाषा में ''बुलाखीदास खन्ना की वार्ता'' नाम की एक हस्तलिखित प्रति अभी-अभी हाथ लगी थी। इस हस्तप्रति से एसा जानने में आता है कि युरोप और एशिया महाद्वीप की सीमा जहाँ मिलती है वहाँ तुर्किस्तान की राजधानी इस्तंबुल के नजदीक तारातंबोल नाम के किसी शहर में जैनों के ७०० जिनमंदिर होने की जानकारी मिलती हैं।

हस्तप्रति का सारांश कुछ इस प्रकार हैं '' १६८४ के वर्ष में मूलतान निवासी बुलाखीदास खन्ना नाम का एक व्यक्ति अमदावाद, आगरा, लाहोर, मूलतान और गंधार के लाहोर, खुराषाण, इस्तंबुल नगर आदि स्थानो पर से होता हुआ तारातंबोल नगर में पहुँचा था।'' भारत में उस समय शाहजहाँ का शासन चल रहा था और एसा कहाँ जाता है कि देश-विदेश में चल रही गति-विधियों के अभ्यास हेतु शाहजहाँ ने बुलाखीदास को भेजा था।

सोने की मूर्तियाँ...

तारातंबोल शहेर में ७०० शिखरबद्ध मंदिर थे...। इन दहेरासरों और मंदिरों की दीवारे सोने से मढ़ी हुई थी तथा मूर्तिया पूर्ण रूपेण सोने की थी। शहर के बृहत्मार्ग पर आदीनाथ श्री ऋषभदेव का मंदिर था, मूर्ति खड़गासन में स्थित थी और सिंहासन सोने का था।

अपने प्रवास काल में मार्ग में पड़नेवाले इस्तंबुल शहर के बारे में वर्णन किया है कि शहर का राजा रुमी बादशाह था, वह प्रजा को दर्शन देने के लिए प्रति ६ महिने महल से बाहर आता था। शहर का विस्तार ३६ X २४ कोस का था। उसकी सेना में लाखों की संख्या में हाथी, घुडसवार और पैदल सैनिक थे।

सिकन्दर के साथ गये जैन...

शहरों और मूर्तियों से ओतप्रोत वर्णन आदि को छोड़ दे तो भी बुलाखीदास की यह कथा इतना स्पष्ट करती है कि तत्कालिन तुर्किस्तान की राजधानी इस्तंबुल के आस-पास (३५० वर्ष पहेले) जैन मंदिर होगे...। इसके समर्थन में इतिहास साक्ष्य है कि भारत की सीमा पर आकर वापिस लौटनेवाला ग्रीक विजेता सम्राट सिकन्दर अपने साथ विद्वानों को ले गया था। इन विद्वानों में थोड़े जैन साधु भी थे। ये जैन साधु युनान जाते समय जैनधर्म के प्रचार हेतु जैन मंदिरों की स्थापना करते गये होगे... एसा संभवित हैं। इन मंदिरों का अस्तित्व १६-१७-१८ वी शताब्दि तक बना रहा होगा एसा प्राय: अनुमान हैं।

फिर भी एक दुसरा आधार है... ''सन् १९१८ से १९२२ तक मिश्र की राजधानी केरो में रोशनलाल नाम का एक व्यपारी रह रहा था... उसने भी एसा अभिप्राय: दिया कि उसके आगे नदी के तट पर उसने पूरी ऊँचाईवाले २४ तीर्थंकरों की मूर्तियाँ देखी थी।''

इसके पश्चात् मध्यएशीया के कुछ स्थानों की खुदाई के दरम्यान बौद्ध एवं जैन संस्कृति के अवशेषो के नमूने देखने को मिलते हैं। मोहनजोदड़ो और हडप्पा के अवशेषो में से जैन संस्कृति के अवशेष भी मिले हैं। इस प्रकार तुर्किस्थान, तारातंबोलादि शहरों में जैन मंदिरो का अस्तित्व रहा हुआ है तो इसमें कोई आश्चर्य करने जैसा नहीं हैं।

चलिए मेरे प्यारे मित्रो ! अब देखते है संवत् १६८४ के समय में जब शाहजहाँ की आज्ञा से मूलतान निवासी ठाकुर बुलाखीदास खन्ना जब तारातंबोल नगरी को देख आया तब उसने स्वहस्ताक्षरो से उसे लिपिबद्ध किया... देखते है उनके अक्षर... उन्हीं के शब्दो में..... तारातंबोल नगर कि भावयात्रा...

अथ तारातंबोल नगरी

संवत् १६८४ मागसर वदि-१३ पातसाह श्री साहजहां दिल्ली राज करे छे ते समे की वात छे, मूलतान को वासी जात को खत्री (क्षत्रीय) ठाकुर बुलाखी तिहां देसा की वात आपकी निजर देख आयो ताकी, ए वात (यह कोपी) नकल छे. प्रथम देश गुजरात मध्ये श्री अहमदाबाद नगर तासु कोस ३०० मूलतान छे. मूलतान सुं कोस २०० लाहोर छे. लाहोर सेती कोस ३०० खंधार छे. खंधारसु कोस ९०० इसफानगर छे. ताको बाजार कोस १२ लांबो छे. इसफानगर सेती कोस ६०० खुराषाण छे. खुराषाण को बाजार कोष १५ लांबो छे. खुराषाणसुं कोस १२०० इसफतंबोल नगर छे, तिहां को बजार कोस ३६ लांबो छे. कोस २४ चोड़ो छे. तिहां रेमीयातिसाह राज करे छे. घोडा २४ लाख छे. हाथी १ लाख २५ हजार छे. ३ लाख गुलाम छे. ५ लाख वादी छे. १ क्रोड १५ लाख पाघ छे. नगर के चोफेर कोट चोकोर छे. पातसाह की रहास को कोट तांबा को छे. इसफतंबोल से कोस १४४४ चवदसैवव्वर (?) देश छे. तिहां सपेदरे (?) सम होवे छे. सो माणस का लोही में रंगीजे छे. किरमइया पाट रंगीजे छे. तीहां सेती कोस ५० आकल-नगर छे. आकलनगर से कोस ७०० तारातंबोल नगर छे.

तिहां (आ तारातंबोल नगरमां) महाराजा सूरचंदजीराज राज करे छे. नगर को बाजार कोस ४० लांबो छे. कोस ३६ चोड़ो छे. नगर चोकर (चोकोर) ५ कोट तांबा को छे. कोट माहेथी रुपा का छे बाकी सोना का छे. तिहां राजा जैनधर्म पाले छे. तिहां नगर में दहेरा सोना का छे. दहेरा सातसे (७००) शिखरबद्ध छे. तिहां नगर मध्ये वीच चौक छे. तिहां दहेरो श्री आदिनाथजी को छे, कोस २ के विस्तार में छे. दहेरा को पुठो सोना को छे. और दहेरा को काम रुपा को छे. थांभा दहेरा का सोना का छे. प्रतिमा सोना की छे. प्रतिमा ऊंची धनुष-६, मण-१०८३ तोल की छे. वेदी (वेदिका) सोना की छे. संघासन जडाव को छे. दहेरा ऊपर कलश मण सातसो ७०० को छे. (ते) सोना के दहेरा आसपास बहुत दहेरा छे. तिहां प्रतिमा तीन (३) चोवीसी की छे. तिहां त्रिकाल पूजा हुए छे. स्नात्र नाटक भगवान के आगे होय छे. (तिहां) साधु रहे छे. राजा नित्य वखाण (व्याख्यान-प्रवचन) सुणे छे. राजा साधुने आहार-पाणी देने भोजन करे छे. इसी भांती जैनधर्म री थिति (स्थिति) छे. तारातंबोल पास सिंधु नदी बड़ै विस्तार में वहे छे.

अमहदाबाद (कर्णावती-राजनगर) हुंती तारातंबोल नगर कोस ५,६५० छे. तिहां की वात सत्य छे ताकि (आ पत्र) नकल छे.....

॥ इति तारातंबोल नगरी री वार्ता संपूर्ण: ॥

अब हम आपको बताएगे सन् १८०५ से १८२१ तक शेठ पद्मचंद्र जो खुद इस तारातंबोल नगरी की यात्रा कर आए... चलिए पढ़ते है उनके अनुभव..... उन्हीं के शब्दो में...

तारातंबोल नगरी की हकिकत.....

एक श्रावक सोलह साल तक यात्रा करके आया उसका खत लिखा हैं...सीधा चाउ प्रणी पंथ थकी... भाई रतनचंद चरणान् चरण श्री हैदराबाद से लिखित भाई पद्मचंद का प्रणाम पढ़ना। जत अत्रे क्षेमकुशलता हैं। आपकी क्षेमकुशलता का खत लिखना... हम हमारे सपरिवार सींधुरदेश यात्रा करने संवत् १८०५ मध्ये गये थे उसकी विगत लिखी हैं।

प्रथम अमदावाद से कोस ३०० आगरा शहर हैं; वहाँ से कोस ४४० (५०००) तारातंबोल शहर है। उसकी विगत... अमदावाद से कोस ६,०० लाहोर हैं। वहाँ से कोस १५० मूलतान शहर हैं। वहाँ से कोस ३५० बंदीर देश हैं। वहाँ से कोस ९०० आशापुर नगर है उसका बाजार कोस १२ का हैं। वहाँ से कोस २००० श्री तारातंबोल हैं।

पहली हकीकत (विगत) श्री अहमदाबाद से मूगा (गौतम) स्वामी की मूर्ति कोस ६०० है। वो पहाड पे बिन आधार हैं। श्री मूगास्वामी की मूर्ति चौड़ी २८ हाथ की हैं। उसकी ऊँचाई भी ३९ हाथ की हैं। उन(के) पगलीया के नख पे ८ नंग श्रीफल रहता हैं। वहाँ की यात्रा करके हम लोग आगे चले। वहाँ से कोस ६०० गये तो वहाँ १ बड़ा तालाब आया वो तालाब का अनुमान १२ कोस का हैं। उस तालाब के बीच में श्री आदिनाथजी का मंदिर हैं। वहाँ नौका में बैठकर हम लोगो ने दरिसण किया। श्री आदिनाथ की प्रतिमा ६ हाथ कि (चोड़ी) हैं ऊँची भी १० हाथ की हैं। वहाँ की यात्रा करके हम लोग आगे चले। वहाँ से ५०० कोस आगे गये... वहाँ श्री तोलीगांधूर नगर ५० कोस का हैं। वहाँ हम लोग गये... २८ श्री जिनप्रासाद का मंदिर है। वहाँ श्रीमंदीर (सीमंधर) प्रभु का देवालय हैं। वो बहुत बड़ा हैं। वो देवालय में १२८ प्रतिमा हैं। वो प्रतिमा का दरिसण करके हम आगे चले। वहाँ से ७५० कोस गये। वहाँ श्री नाबीपुर पाटण हैं। उसके आगे कोस ३०० हैं। वहाँ तारातंबोल नगर बड़ा हैं। ४०० कोस लंबा हैं। उस नगर का कोट ताम्र का हैं। वहाँ राजा का महल सफेद धातु का हैं। राजा का नाम धरसाल महाराजा हैं। श्री साधु

व्रधमान (वर्धमान) जी राज करता हैं। व्यापारी लोग हीरा-माणेक-मोती-झवेर-सोनुं-रुपु-कपडादि का व्यापार करता हैं। सब अपना दुकान खुल्ला रखके घर जाता हैं। लेकीन कोई किसी की चीज लेते नहीं (चोरी करते नहीं) एसा लोग महाधरमी हैं।

उस (तारातंबोल) नगर का बाजार ६० कोस का हैं। उस नगर मध्य श्री जिनमंदिर का देरा है, जो ७०० देहरा हैं। वहाँ का राजा-परजा सब जैनी हैं। जैन (अलावा) बिना अन्य देव-देवी को मानते नहीं। उस नगर मध्ये प्रतिमा की गिनति इस प्रकार है.... जिसकी विगत है... ४,००० लीला माणेक की है। ५ वनसन की है जो अंगुष्ठ प्रमाण हैं। १५,००० सफेद पाषाण की हैं। ६ काशवर्णी है, वह भी अंगुष्ठ प्रमाण हैं। ४८७ श्यामरत्न की हैं। ४ नीला रत्न की है, वह भी अंगुष्ठ प्रमाण की हैं। ४,५४५ हरा (लीला) रत्न की हैं। ९ माणेक की हैं, वह भी अंगुष्ठ प्रमाण की हैं। ३,४८६ धातु की हैं। १ मोती की है, वो भी अंगुष्ठ प्रमाण हैं। १६ बावना चंदन की हैं। ११ गेरु चंदन की है। वो प्रतिमा की गिनती २४,७६४ हैं। सारांश... उपरोक्त प्रतिमा लिखी वो प्रमाण से हैं।

वहाँ का राजा का महल मध्ये तथा चौक मध्ये श्री रिखबदेव (आदिनाथ-ऋषभदेव) का देरासर हैं। वो भी ४ कोस ऊँचा हैं। एक एक देशी मंदीर ५९ एसा सारदेशी का मंदीर ५३६ हैं। वहाँ जिनप्रासाद का थंबा ताम्र का हैं। उस कोट का थंबा रुपा का हैं। कांगुरा सुवर्ण का हैं। अन्य थंबा सोने का हैं। प्रासाद का सिंहासन सोने का हैं और जडाव का हैं। उसी सिंहासन पे प्रतिमा ३ चोवीशी की हैं। उस प्रतिमा का वर्ण अलग अलग रंग हैं। धोला काला एसे सब अलग वर्ण की हैं। वहाँ का राजा प्रतिदिन प्रतिमा की (त्रि) काल पूजा करता हैं। बहोत गुणवान हैं। जैन धर्मी हैं। समतावंत, शीतवंत (शीलवंत), यशवंत, धनवान एसे सद्गुण सहित बिराजमान हैं। उस नगर में हम ४ दिन रुके थे। वहाँ अन्य देवालय हैं। वहाँ की प्रतिमा सोवनवर्णी तथा जडाव की १३२ है। अन्य प्रतिमा १०५ स्फटिक की हैं। दो रत्न की हैं। एसी प्रतिमा का दर्शन किया। उस नगर मध्ये सपज्ञ ने नेमाकुट महाधर्मी हैं। (ते गणी गणी जा सके... वात के बीच परणीकटसे) (?) वहाँ से ३० कोस जिनमंदिर हैं। तथा बंदीर (बद्री) हैं। मालबद्री (मूलबद्री) मध्ये रायपेती हैं। वहाँ जिनमंदिर का भंडार (ज्ञानभंडार) मध्ये (हरवन) ? करोड का हैं। जीव धोला (जयधवला) है। अन्य धवल का गरथ (ग्रंथ) हैं। वो गरथ १ लाख २ हजार का हैं। अन्य गरथ १ लाख ८ हजार तीरलोक हैं। वो ताडपत्र पे लिखा हैं। वो भी कोई पंडित पढ़ नही सकते। उस नगर का वनमध्ये श्री शांतीनाथजी रहते है। उस वन मध्ये सर्प तथा बाध का भेखड हैं। वहाँ रिखबदेवजी तथा नेमजी रहते हैं। उसकी उम्र

९० साल की हैं। शाम के समय भक्षण (भिक्षा) करने नीकलता हैं। सुजता आहार मिले तो लेता बाकी नहीं लेता... एसा साधु का दरिसण किया। बाद में आगे चले...।

वहाँ से ६५ कोस श्री गंगानगर है। उस नगर का वनमध्ये श्री रिखभनाथ का देरासर हैं। तिहाँ प्रभावशाली साधु रहता हैं। वो १ मास में दो-चार पारणा ही करता हैं। जोगवाई होवे तो पारणुं करते, नहीं तो दुसरे मास... एसा मुनिराज का दरिसण हुआ। वहाँ से हम आगे चले... उसी समय ये साधुजीने हमको मना किया कि तुम लोग आगे जाना मत (क्योंकि) यहाँ से ३०० कोस (आगे) एकटांगीयो मुलक हैं (जो बहुत ही राक्षसीवृत्ति वाले लोगो का देश होगा के जहाँ जाने के बाद कोई वापस नहीं आ सके... इसीलिए साधुजीने आगे जाने को ना कहाँ होगा)। एसी हकिकत हमको प्रभावशाली साधुजीने बताई... इसलिए हम संवत् १८२१ के साल मध्ये इतनी यात्रा करके हम लोग (हमारा) घर आया। इतने में मुखस गोपी का (?) दरिसन किया ये खत भगवान के गुणो का हैं। ये खत कोइ पढे या सुने उनको बहुत लाभ होगा।

॥ भूलचूक होवे तो मिच्छामि दुक्कडम् ॥

॥ इति श्री भगवान का खत सपूर्णम् ॥

संवत् १९३२ का ज्येष्ठ वद १४ दिने... खुशालचंद...

॥ श्रीरस्तु ॥

चलिए... मेरे प्रिय मित्रो ! अब हम आपको राजनगर निवासी श्री अमरचंदजी के द्वारा कि गई तारातंबोलादि नगरीयों कि यात्रा का अनुभव उन्हीं के शब्दो के माध्यम से करवाते हैं... वे तारातंबोलादि नगरीयों में कैसे और कौन से मार्ग से गये थे... वो भी इसी पत्र से जानने मिलेगा...।

स्वस्ति श्री राजनगरे लिखयंत अमरचंदजी....

राजनगर (अमदावाद) कोस-१२ कोट कोस ४ नो छे. तिहांथी कोस १०० सीरोही तिहां थकी कोस ७५ मेडतो (मेडता), १३२ कोस उन्हीं (आगरा) जिहां साहिजहां राज्य करे छे। तेनी राजधानी छे। १८,००० हाथी, ५,००,००० घोडा बीजी रिद्धि घणी... तेथी कोस ३० लाहोर, १५० कोस मूलतान, ३००० कोस खंधार, तीहाथी कोस ९०० इसपन्नदेस.. तिहां इसपन्ननगर २४ कोस विस्तार, ८ कोस बजार... २५०० तिलंगदेस तिलंगपति साह..., ७०० कोस रोमसाम नगर, उप कोस विस्तार, ३५ कोस बजार, तिहां बबरपातसाह तिलंगी, तिहांथी ८०० कोस सासतानगर... ३८ कोस विस्तार, १२ कोस बजार, तिहांथी ५०० कोस खुरसाण, १५ कोसनो (नगर) बाजार, मुगल राज करे छे... १२ कोस इसकतंबोल, ७२ कोस विस्तार, ४८ कोस बाजार, लोहरो कोठारोमी (लोखंडना कोठारोमांथी) पातसाह मास ५ बाहिर नीकले। २४,००,००० घोडा, ४०,००,००० हाथी, ३,००,००० महाजोधी सुभट, ५,००,००० घोडा, पाखरीया सुभट, ३,००,००० दीवी जले हैं। १५ स्त्री छे। ३,००,००० ओबराव (उंमराव) ५,००,००० वादी और ३,००,००० छडीदार और ऋद्धि धणी... पार नावे...। तिहाथी ५०० कोस बबरकोट... तांबीनो नगर कोट लोढानो दरबार रोज तिहां रेशम रंगीजे छे। भार थोडो मूल घणो...। बिघोडे १ माणस जुडे... चाले... मांस आहारी होय छे। तिहाथी ३०० कोस अटवी (जंगल)... वृक्ष घणा... में तिहां वाघणी-डाकी (डाकण जेवी) मंस आहारी (मांसाहारी) - मनुष्यभक्षीने अग्निथी बीहे छे।

तिहांथी ७०० कोस तारातंबोल नगर छे, ४८ कोस विस्तार, १५ कोस बजार..., बिचै (मध्य में) चौमुख प्रासाद ऋषभदेवनो ... तत्र राजा सूरचंद जेन (जैन), लोक (प्रजा) जिनाज्ञा पाले, श्री विमलप्रबोध आचार्य छे.

२०० कोस पांणीपंथ थकी गोमट (गौतम) स्वामी..., कोस हजार (२०००) दोय हैं, परबत (पर्वत) ऊपर निराधार खडी हैं...गोमट-सामीजी (गौतमस्वामीजी) की प्रतिमा चोडी हाथ १८ (अढार), ऊंची हाथ ५४ (चोपन) की खड़े जोग है। पग का अंगुठा ऊपर नारेल नालीयेर १३ (तेरे) समाते हैं, इसी हम जात्रा कीनी। उहा से हम आगु चले... तिहां औरंग नामा नगर हैं... तिहां तलाव एक कोस बारे है उस तलाव के बीच कोस एक को मंडल हैं। उस मंडल में चैत्याला (चैत्य=मंदिर) ४ (च्यार) हैं... च्योमुख हैं... प्रतिमा एक देहरा में अजितनाथ की हैं... चौड़ी हाथ ४ (चार) हैं... ऊंची हाथ १/२ बारे की हैं... फिटक्की (स्फटिक की) हैं। दुसरी प्रतिमा हाथ ९ (नव) आदिनाथजी की हैं... चौड़ी हाथ १ १/२ (दोड़) की है ऊंची हाथ ४ च्यार हैं। सो प्रतिमा वि (पण) चंदन की हैं और दुसरी प्रतिमा-दहेरा ४ (चार) में बहोत हैं। हम नाव चढकर गये थे। सो उहां से दरसण की आश लि उहा से

आगु हम चले तिहां तिलंगपुर नगर हैं । उहां वन में जेन (जैन) का देहेरा बहुत हैं । २५ (पचीस) बिंब है,तिस देहेरा में प्रतिमा १ (एक) कसोटि की हैं हाथ ९ उंची, हाथ ३ १/२ (साडा त्रण) चौड़ी है... बहोत मनोहर हैं... दुसरी दुसरी प्रतिमा हजारा हैं... ।

उहां से हम आगु चले... कोस १०० गये... तिहां तिलघाटी का मुलक है । तिहां निवासपुर पाटण हैं । सो समुद्र की कनारी हैं । तिहां एलची का वन हैं । काली मरचा की वेल हैं । तिहां मुक्तागिर (मुक्तागिरि) परबत हैं । उस पर जैन का देहेरा ५३ (त्रेपन) हैं । बडे जोग हैं इस देहेरा में प्रतिमा बहोत हैं । (आरा जाणे) चोथा काल समान हैं । आराधना जोग है ।

उहां दरसण कर आगे चले सो करणाटक के लोका जैन विना दुसरी बात नहीं... । राजा और प्रजा सब उहां जैनी हैं करणाटन देस विचे करणाटक सहर हैं । जो सहर विचे एक हजार चैताला (चैत्यो-मंदिरो) हैं । सब देहरा की प्रतिमा हम गणी सो गणकर लिखी हैं । प्रतिमा १५,००० (पन्नर हजार) हैं, दुसरी प्रतिमा ५१ (एकावन) हैं । तिसको विचारकर लिख्यो हैं । प्रतिमा १ (एक) लसणीये (पत्थरनी एक जात) की हैं... सो आंगुल १०८ की हैं । प्रतिमा ११ मोती की हैं... आंगुल आठ...आठ की हैं । प्रतिमा १ गोमेद की हैं । प्रतिमा ७ पुखराज की हैं... सो अंगुल १ १/२ की हैं । प्रतिमा १४ चिरंतन की हैं । सो आ प्रतिमा अंगुल ३ १/२ की हैं । प्रतिमा १० हीरा की हैं... अंगुल ४ की हैं । एसी प्रतिमा भारी बहोत हैं । मनोज्ञ छे । हवे प्रतिमा सरवे एकावन हैं । वले (वली) दुसरी प्रतिमा बहोत हैं... एसा दरिसण किया... तिका पुण्यप्रभाव से भी मोक्ष होये... ।

करणाटक राजा का दरबार मांहे विचे (मध्यमे) १०८ (एकसो आठ) थांबा का देवल हैं । थांबा तांबा का हैं । उस देहरा में प्रतिमा अतीत-अनागत-वरतमान की चोविसी की प्रतिमा ७२ (बहोत्तर)... सब फिटक की (स्फटिक की) हैं । धोली ने राती पीली लीली सब आप आप वरण की हैं । दुसरी प्रतिमा सब हैं... ३००० (तीन हजार) हैं, देहेरा बहोत ऊंचा हैं । २१ मंडप कर सहेत हैं ।

राजा हंमेश सेवा करत हैं, राजा बहुत गुणी हैं । उस नगर का वन में १ (एक) दहेरा है उसका पण हम दरिसण पाये फेर आंगे उहां वन हैं । एक (१) उहां ऋषभ मुनि हैं । उसकी ९० वरस की उमर भी हैं । एक महिना पछी आहार करत है । पांच घर की मर्याद कर आहार करत हैं । प्रासुक आहार करत हैं । लेकर आवत है फरे वन में जावत हैं । तिहां हम दरसण कुं वन में आय नै जीव हाथ पर रखी घर गये थे... सो दरिसण कि पुण्याई हैं ।

तिहा से हम पीछे आये... आगु हम चले । ३५० (साडे तीनसौ) कोस पर गये । तिहा जैनबद्री मूलबद्री दोय नगर आये । तिहां जैनबद्री मूलबद्री उंहा जैन का बड़ा उद्योत हैं । जैनबद्री विषे बहुत दहेरा है, तिसका पण हम दरिसण पाये । जैनबद्री का राजा के दरबार में भंडार (ज्ञानभंडार) हैं, तिहां शास्त्र ताडपत्र उपर लिख्या छे, उहां जयधवल नामा ग्रंथ ६०,०००, महाधवल ग्रंथ ७०,००० है, प्रतिधवल नामा ग्रंथ २८,००० हैं... एसा शास्त्र वांचने समरथ नहीं हैं । शास्त्र हैं जिकारा दरिसण होत हैं ।

तिहां वन में एक प्रभावचंद्र मुनि हैं, वो दिन पन्नरे पछे आहार लेत है । आहार ने अरथे नगर में आता है, जोगवाई वणै तो आहार सुजतो लेत है नहीं तो वन में फेर परा जाता हैं, हम तिसका (ते मुनि का) पण दरिसण पाये । एसी जात्रा महाविदेह समान है । इसा जैन का राजा-प्रजा सब ही करणाटक देस का हैं । जैनबद्री-मूलबद्री के विषे जैन का बहुत उद्योत है । चोथा आरा समान है... एसी यात्रा हम किधी पीछे (पछी) हम नाव चढ़कर... फिरकर घरे आविया ।

॥ इति तारातंबोल नगरी ॥

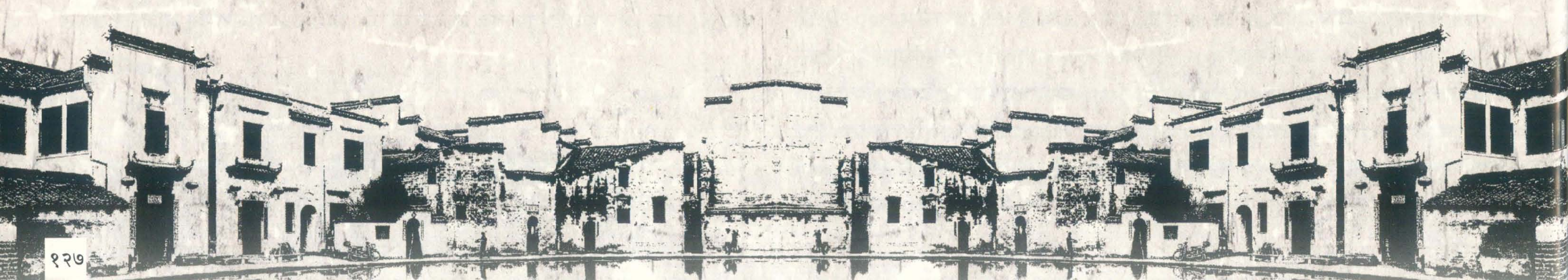

चौदह राजलोक के ठीक मध्यभाग में अत्यंत यौवन-सभर एसा मध्यलोक (तिर्च्छालोक) आया हुआ हैं... और इस मध्यलोक के ठीक बीचोबीच दीपक की चीरंजीव रोशनी के समान केसरिया रंगनुमा एक महाद्वीप आया हुआ हैं, यह विस्तार में १,००,००० योजन बड़ा है। जंबू नाम के वृक्ष को लेकर इसका नाम ''जंबूद्वीप'' पड़ा हैं। अपन जिस देश में रहते हैं, इसका प्राचीन नाम ''भरत क्षेत्र'' हैं। जंबूद्वीप के ठीक दक्षिण भाग में यह आया हुआ हैं। आज भी उसे ''भारत'' एसा पवित्रकर नाम से पहचानने में आता हैं। ५२६ योजन से अधिक इसकी चोड़ाई है और लंबाई तो कई हजारों योजन में विस्तरित हैं।

भरत क्षेत्र के मध्य में २५ योजन ऊँचाईवाला और ५० योजन की चौड़ाईवाला वैताढ्य नाम की एक विशाल पर्वतमाला भावसमाधि लगाकर अडग रूप में स्थित हैं। यह पर्वतश्रेणी पूर्व से पश्चिम समुद्र तक फैली हुई हैं। उसके ऊपर अनेक देश एवं गगनचुम्बी एसे दिप्तीमान अति मनभावन नगर बसे हुए हैं। स्वप्न तरंग समान इसका प्राकृतिक सौंदर्य मानो कुदरत द्वारा प्रदत्त भेंट हैं। इस पर्वतमाला से ''भरत क्षेत्र'' के उत्तर और दक्षिण रूप दो विभाग बनते हैं। अपन इसके दक्षिण छोरवाले विभाग में रहते हैं।

लवणसमुद्र में पूरवेग से हिलौरे लेता जल अपने पवित्र देश के पैर धौता हैं। आज भी एशिया, युरोप एवं अमेरिकादि की सर्व शोभा को धारण करनेवाली धरा... उत्तरध्रुव से दक्षिणध्रुव तक भरत क्षेत्र का ही एक भाग है... इसलिए ही अभी तक पृथ्वी का अधिकतर भाग अदृश्य ही अपने के लिए रहा हुआ हैं।

जैनशासन के अनुसार उत्तर और दक्षिण रूप भरत क्षेत्र के दोनो भागों में ३२,००० देश आये हुए हैं। इस ३२,००० देशों का उल्लेख कुछ इस प्रकार से जाने... २८ पुरुष + ३२ स्त्री = ६० जन का १ कुटुंब, एसे १०,००० कुटुंब = १ ग्राम (गामत्ति = दसकुलसाहस्त्रिको ग्रामः - ज्ञाताधर्मकथा ग्रंथ) और एसे १२,००० ग्राम = १ देश होता हैं। अर्थात् १ ग्राम में ६० X १०,००० = ६ लाख स्त्री-पुरुष... तो अब इस ६ लाख को १२,००० ग्राम से गुणा करे तो १ देश की जनसंख्या - ७,२०,००,००,००० (७ अबज २० क्रोड) हुई, एसे ३२,००० देश इस भरत क्षेत्र में है, तो ७,२०,००,००,००० X ३२,००० = २,३०,४००,००,००,००,००० (दो लाख, तीस हजार, चारसो अबज) व्यक्तियों की बस्ती मात्र दक्षिण भरत क्षेत्र में हुई...।

अपन जिस देश में रहते हैं यह देश बहुत ही प्राचीन है । हृदय के हितकर एसे ब्रह्मनिष्ठ साधु-संतो की यह अमृतमय तपोभूमि हैं। यहाँ ऋषि-मुनि और तीर्थंकरों की रणकार करती मधुर ध्वनी (वाणी) सुनने को मिल सकती हैं।

अब हम अपने देश भारत के बाहर थोडी दृष्टिपात करते हैं। जितना अपना देश प्राचीन गिना जाता है ठीक वैसे ही दुसरे देश भी अति-प्राचीन हैं। एक समय में अपनी आर्य संस्कृति यहाँ सर्वत्र एक समान फैली हुई थी... अपने देश से थोडी दुरी पर रहा हुआ अफ्रिका खण्ड हैं जैनशास्त्रो में जिसे शंखदेश के रूप में पहिचानने में आता हैं वह दुसरा कोई नहीं परंतु अफ्रिका खण्ड ही हैं । इसमें आया हुआ मिश्र देश भी बहुत प्राचीन है, जिसे पहले मिसर देश के नाम से पहचानने में आता था। इस देश के राज-परिवार की वंशावली यादवकुल के इतिहास के साथ अधिकतर मिलती-जुलती हैं। लगभग ४,००० वर्ष पहले ''अखतानन'' नाम का एक राजा हुआ था, वह खुब अहिंसावादी था...। दुनिया में ऐसे दुसरे भी बहुत से देश है कि उनके बारे मे हम जानते नहीं अथवा उनके बारे में थोडा बहुत ही जानते हैं।

अच्छा तो अब हम अपने मानसपटल पर से ऐसे अदृश्य देश में पहुचते हैं और एकाएक उसके रूप विलास का परिचय करते हैं।

हिमालय का नाम किसने नहीं सुना हैं। उसके उस पार एक बड़ा पर्वत आया हुआ हैं, उसका नाम हिंदुकुश पर्वत हैं । वर्ष में कोई दिनों तक यह बर्फ की मोटि चादर से ढका रहता हैं । इस पर्वत के दक्षिण की और ऊंचे पर्वतों की घाटी में एक देश आया हुआ है । यह इतना छोटा है कि कई बार तो भूगोल में इसका नाम तक आता नहीं हैं। दुनिया से बिलकुल अलग और गुप्त रहकर भी आज तक इसने अपना अस्तित्व बनाये हुए रखा हैं। इसे क्राफिस्तान अथवा काफ्रीरेशिया के नाम से पहचानने में आता हैं।

यहाँ वेगल, रामगल और बाशगल नाम के तीन घाटी-प्रदेश आये हुए हैं। पहले इन सभी प्रदेशों का समावेश सप्तसिंधु में आता था । काफ्रिस्तान की यह प्रजा खुब सुंदर, मजबूत मान्यतावाली है। उनकी आँखे चमकीली एवं बाल सोनेरी रंग के हैं। इस देश की आबादी बहुत थोडी हैं। इस प्रदेश का विस्तार मात्र ७,००० वर्ग माईल हैं फिर भी आज तक यह पूर्वरूपेण स्वतंत्रता का आस्वादन कर रहा हैं। यह खुब आश्चर्यदायक हैं। काबुल एवं जलालाबाद नजदीक होने से अफघान प्रजाए कई बार जाने अनजाने में आक्रमण किया, किन्तु इन संग्राम प्रिय लोगो की आंखों की प्रचण्ड ज्वाला को देखकर पीछे हट जाना पड़ा । चंगेजखाँ जैसे क्रूर राक्षस भी इस देश की अभेद्य दीवार को भेदने में असमर्थ रहा...।

भोजन के रूप में ये लोग दूध-गेहूँ और सुखे मेवे का उपयोग करते हैं। भारत के साथ इन लोगो का अद्भुत सहकार है। ये लोग अपने घर के दरवाजे भी मुख्य रूप से अपनी तरफ रखते हैं। ये लोग बाहर से तो इस्लाम धर्म को मान देते हैं लेकिन भीतर में कुछ अलग हैं । उनके रीति रिवाजों पर जरथुस्ट धर्म की छाप है। एक समय ये सभी लोग आर्य संस्कारो से ओतप्रोत थे, प्रजा के अधिकतर लोग बौद्ध, जैन और शैवधर्म पालते हैं जो कि ये सभी संस्कार भारतीय धर्म के विद्यमान संस्कार हैं। इसके उपरान्त आज भी वहाँ जैन, बौद्ध एवं हिन्दु मंदिर देखने को मिलते हैं।

इस भूमि-प्रदेश पर पहोंचकर जो कुछ विशेष संशोधन करने में आए तो अपनी प्राचीन भारतीय संस्कृति ऊपर जरूर कुछ नूतन प्रकाश प्राप्त हो सकता है... प्रायः एसा लग रहा हैं...।

(ले. पन्नालाल ज. मसालिया, राधनपुर)

१७. पल्योपम और सागरोपम का स्वरूप....

ता.क. : इस ग्रंथ में भवनपति आदि देवों के आयुष्य के प्रसंग पर तथा अन्य पदार्थों के विवरण के प्रसंग पर पल्योपम, सागरोपमादि शब्दों का उल्लेख देखने को मिले इसलिए अब उसे समझाने के लिए हम उसका नीचे विवरण कर रहे है....

यद्यपि सामान्यत: असंख्यात वर्ष का एक पल्योपम और १० कोडाकोडी पल्योपम का एक सागरोपम होता है। परन्तु असंख्य की संख्या कितनी बड़ी है और पल्य की उपमा के द्वारा और सागर की उपमा द्वारा वे काल प्रमाण कैसे लाया जाता है उसे समझना अत्यन्त जरूरी होने से ग्रन्थान्तर से उसका विस्तृत स्वरूप यहाँ दिया जाता है।

सर्व से अल्प (जघन्य में जघन्य) काल एक समय का है जिसे सर्वज्ञ भगवन्त ही जान सकते है, और उसी अत्यन्त सूक्ष्म काल को ''समय'' कहा जाता है। एक निमेष (आँख बंद करके खोलने जितना समय) मात्र में असंख्याता समय व्यतीत होता है, ऐसा सर्वदर्शी परमर्षि सर्वज्ञ पुरुषोंने प्रकाशित किया है। महानुभावो ! जरा सोचो ? एक निमेष मात्र में असंख्याता समय चला जाए तो समय रूप काल कितना सूक्ष्म होगा ? यह बात सामान्य बुद्धिवालों को आश्चर्य उत्पन्न करनेवाली है, परन्तु वीतराग परमात्माओं का वचन अन्यथा होता ही नहीं है।

"वीतरागा हि सर्वज्ञा मिथ्या न ब्रुवते क्वचित् ।
यस्मात्तस्माद्वचस्तेषां तथ्यं भूतार्थदर्शनम् ॥"

अर्थ :- राग द्वेष रहित सर्वज्ञ परमात्मा कदापि असत्य प्रतिपादन करने के कारणों से रहित होने से असत्य का प्रतिपादन करते ही नहीं, इसलिए उनका वचन यथार्थ - सत्य है।(आज के वैज्ञानिक एक मिनट के करोड़ वें भाग का ज्ञान रखते हैं तो क्षणभर विचार करें कि सामान्य मानव जड यंत्र की मदद से मिनट का करोडवाँ भाग समझ सके, तो त्रिकालदर्शी पुरुष उससे अति-अति सूक्ष्म समय को ज्ञान से जाने और कहें तो उसमें शंका को जरा भी स्थान नहीं है।)

यह काल वह द्रव्य है तथापि प्रदेशों के समुदाय रूप न होने से उसे धर्मास्तिकाय की तरह अस्तिकाय[1] कहा नहीं है। वास्तविकता से सोचने पर यह काल, भेदों के अभाववाला है। अतः काल के भेद नहीं हैं, तो भी निश्चय और व्यवहार रूप में दो भेद शास्त्रों में कहे गये हैं। गत्युपकारक धर्मास्तिकाय और स्थित्युपकारक अधर्मास्तिकाय की तरह यह काल द्रव्य भी उपकारी हैं। और इसी बात को श्री तत्त्वार्थ सूत्र कें पाँचवे अध्याय में "वर्तना परिणाम क्रिया परत्वापरत्वे च कालस्य" इस सूत्र पर समर्थ टीकाकार श्री सिद्धसेनगणि महाराजने सविस्तर व्याख्या से सिद्ध किया हैं। जिसका स्वरूप प्रारंभ के अभ्यासु - अभ्यासीयों के लिए अति कठिन होने से यहाँ नहीं दिया हैं। जिज्ञासुओं को वहाँ से देख लेना आवश्यक हैं। यहाँ तो व्यवहारिक काल दर्शाने का प्रयोजन होने से व्यवहारिक काल का ही स्वरूप हम संक्षेप में बता रहे हैं। व्यवहारिक काल अर्थात् क्या ? कहा है कि -

"ज्योति शास्त्रे यस्य मानम्, उच्यते समयादिकम्। स व्यवहारिकः कालः कालवेदिभिरामतः॥"

यह व्यवहारिक काल समय[2] से लेकर शिर्षप्रहेलिका (संख्य), असंख्य और अनंत तक अथवा शिर्षप्रहेलिका से पल्योपम, सागरोपम, उत्सर्पिणी, अपसर्पिणी, कालचक्र, पुद्गलपरावर्तादि अनेक प्रकार से हैं।

१. तस्मात् मानुषलोक-व्यापी, इह कालोऽस्ति समय एक इह। एकत्वाच्च स कायो, न भवति कायो हि समुदायः॥

२. समयाद्याश्च कालस्य, विशेषाः सर्वसंमताः। जगत् प्रसिद्धाः संसिद्धां, सिद्धांतादिप्रमाणतः॥
लोगाणुभाव-जणियं, जोइसचक्कं भणंति अरिहंता। सव्वे कालविसेसा, जस्स गई विसेसनिप्फन्ना॥(ज्योतिषकरंडक)
लोकानुभावतो ज्योतिष्कचक्रं भ्रमति सर्वदा। नृक्षेत्रे तद्गतिभवः, कालो नानाविध स्मृतः॥
सूर्यादिक्रियया व्यक्तोकृतो नृक्षेत्रगोचरः। गोदोहादिक्रियानिर्व्यपेक्षोऽद्धाकाल उच्यते॥
यावत्क्षेत्रं स्वकिरणैश्चरन्नुद्योत्तयेद्रविः। दिवसस्तावति क्षेत्रे परतो रजनी भवेत्॥(लोकप्रकाश)

यह व्यावहारिक काल मनुष्य क्षेत्रवर्ती तिर्च्छा ४५,००,००० (पैंतालीस लाख) योजन और ऊर्ध्वाधो १८०० योजन प्रमाण क्षेत्र में होने का शास्त्रों में प्रतिपादन किया गया हैं। व्यावहारिक काल के संबंध की इस मर्यादा का कथन इसलिए है कि जिस क्षेत्र में सूर्य-चंद्रादि ज्योतिषचक्र चर होने के साथ अपनी देदीप्यमान किरणों से प्रकाश देते है, उस क्षेत्र में व्यावहारिक गिनती करनी है और समयादिक सर्व काल को करनेवाला चर सूर्य ही है, इसलिए सूर्य को आदित्य कहा जाता है। श्री भगवती सूत्र में प्रश्न हुआ है कि - "से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चई (सूरे) आइच्चे सूरे ? गोयमा सूरादिया णं समयाइ वा आवलियाइ वा जाव उस्सप्पिणीइ वा अवस्सप्पिणीइ से तेणट्ठेणं जाव आइच्चे।" (पंचमांग - श्री भगवतीजी सूत्र, श. १२ / उ. ६)

शंका-काल का क्षेत्र ऊपर अनुसार अगर मर्यादित है तो देवलोकादि अन्य स्थानों में देवों आदि के आयुष्य का प्रमाण किस अपेक्षा से गिने ? क्योंकि उन स्थानों में तो व्यवहारिक काल का अभाव होता हैं।

उत्तर-देवलोकादि स्थानों में वर्तित जीवों के आयुष्यादि की गणना ऊपर बताए मर्यादित क्षेत्र में वर्तित व्यवहारिक काल से ही करनी हैं। वहाँ सूर्य-चंद्र के परिभ्रमण के अभाव में समय, आवलिका, मुहूर्त, दिवस, मास, वर्षादि काल की उत्पत्ती नहीं है, परंतु वहाँ वर्तित व्यवहारिक काल से ही वहाँ के जीवों का आयुष्यादि गिनने का शास्त्रों में अनेक स्थलों पर प्रतिपादन किया हैं।

देवलोक में सूर्य-चंद्रादि के अभाव में अंधकार हो ऐसी शंका करने की भी जरूरत नहीं है, क्योंकि देवों के दिव्य विमानों में रहे मणिरत्नों की अद्भुत कान्ति, साथ में देवों का अपना भी पुण्यप्रकर्ष (उद्योत नामकर्म का उदय) होता है कि वहाँ सर्वदा उद्योत ही होता है। यहाँ साथ में इतना समझना आवश्यक हैं की ऊपर बताए मर्यादित क्षेत्र में... जिस तरह व्यवहारिक काल होता हैं उसी तरह नैश्चयिक (वर्तना परिणाम-स्वरूप) काल उस मर्यादित क्षेत्र में और देवलोकादि सर्वस्थानों में भी होता हैं।

यह व्यवहारिक काल अतीत, अनागत और वर्तमान भेद को लेकर तीन प्रकार का है।[३] उसमें अतीत और अनागतकाल अनंतसमयात्मक हैं। वर्तमानकाल एक समय रूप ही है, क्योंकि काल की वर्तना एक समय रूप व्यवहारवाली हैं। प्रत्येक द्रव्य-पर्यायों में रहनेवाली तथा एक समय जितने ही काल में स्वसत्ता का अनुभव करनेवाली जो वर्तना वह उत्पन्न होते और विनाश पाते भावों के प्रथम समय संबंध विषयक संव्यवहार रूप हैं। और वह तंदुल (चावल) के विकार के जैसे अनुमान समझना चाहिए। तात्पर्य यह है कि उत्पन्न होते और व्यय पाते हुए पदार्थो के प्रथम समय का व्यवहार अर्थात् जिस समय पदार्थ की उत्पति हुई तथा जिस समय विनाश भाव हुआ उस प्रथम समय पर ही वर्तना का संव्यवहार होता है।

३. "अवधीकृत्यं समयं, वर्तमानं विवक्षितम्। भूतः समयराशिर्यः, कालोऽतीतः स उच्यते ॥"
अवधीकृत्यं समयं, वर्तमानं विवक्षितम्। भावोः समयराशिर्यः कालः स स्यादनागतः ॥
वर्तमानः पुनर्वर्तमानैक समयात्मकः। असौ नैश्चयिकः सर्वोऽप्यन्यस्तु व्यावहारिकः ॥ (काललोकप्रकाश, सर्ग - २८)

वह वर्तनाकाल समय प्रमाण अति सूक्ष्म होने से सर्वज्ञ पुरुषो से ही ग्राह्य हैं। जिसके कारण कहाँ हैं कि....

बिसस्य बाला इव दह्यमाना, न लक्ष्यते विकृतिरिहाग्निपाते ।

तां वेदयन्ते मित सर्वभावाः, सूक्ष्मो ही कालो अनुमितेन गम्य ॥१॥

अर्थ :- कमल नाल के तंतु अग्नि-संयोग से दह्यमान होने पर भी हमें ज्ञात नहीं होता, साथ ही उसका विकार रूप जो भस्म है वह भी चर्मचक्षु से दृष्टिगोचर नहींहो सकता, तथापि सर्व भावों को जाननेवाले सर्वज्ञ-परमात्मा तो उन विकारादि को जानते हैं। उसी तरह सूक्ष्मकाल को सर्वज्ञ तो जानते ही है, लेकिन हमारे लिए तो वह अनुमान से ही जानने योग्य है। उस सूक्ष्म से सूक्ष्म काल का ज्ञान कराने के लिए जैनागमों रूप शास्त्रों में नीचे अनुसार दृष्टांत दिए गये हैं।....

निमेष (आँख की पलक) मात्र होने में जितना समय लगता है, उस काल के असंख्यातवे भाग को ''समय'' कहा जाता है, अर्थात् आँख के एक पलक में असंख्यात समय होते हैं। इसके लिए दृष्टांत दिया है कि किसी तरुण[४] पुरुषने किसी अतिजीर्ण वस्त्र को शीघ्रता से फाड डाला, उस समय उस वस्त्र के एक तन्तु से दूसरे तन्तु को फाडने में असंख्य समय बीता होता है तो कल्पना करो कि उस जीर्णवस्त्र को पूरा करने में कितना समय बीता होगा ? अथवा दूसरी तरह से सोचें तो सैंकड़ों कमल के पत्रों को कोई बलवान पुरुष स्वसामर्थ्य से तीक्ष्ण भाला उठाकर उन १०० (सौ) पत्रो को एक साथ छेद डाले, उसमें वह भाला एक पत्ते को छेदकर दूसरे पत्ते में गया, उतने में असंख्यात समय चला जाता हैं। तब छेदनेवाले को स्थूलदृष्टि से एसा ही लगता है कि मैने एक ही साथ में १०० पत्रो का छेद किया, परन्तु सूक्ष्म दृष्टिवाले सर्वज्ञ महापुरुष उसमें असंख्य समय व्यतीत हुआ है, ऐसा ज्ञान से जान लेते हैं।

ऐसा सूक्ष्म से सूक्ष्म काल वह समय हैं। कर्मग्रंथादि ग्रंथों में वर्णित चौथे जघन्य युक्त असंख्याता की संख्या जितनी होती है तब एक आवलिका होती है, ऐसी २५६ आवलिका जितना आयुष्य सूक्ष्म-निगोदादि के जीवों का होता हैं, इससे अल्प आयुष्य किसी भी जीव का होता ही नहीं हैं। इस कारण २५६ आवलिका जितना काल एक क्षुल्लक भव स्वरूप आंका जाता हैं

४. जीर्णे पटे भिद्यमाने तरुणेन बलीयसा। काले न यावता तन्तुस्त्रुटत्येको जरातुरः ॥
असंख्येयतमो भागो, यः स्यात् कालाय तावतः। समये समये सैषः कथितस्तत्त्ववेदिभिः ॥
तस्मिन् तन्तौ यदेकस्मिनपक्ष्माणी स्युरनेकशः। प्रतिपक्ष्म च संघाताः, क्षणच्छेद्या असंख्यशः ॥
तेषां क्रमाच्छेदनेषु भवन्ति समयाः पृथक्। असंख्यैः समयैस्तत् स्यात्तन्तोरेकस्य भेदनम् ॥ (लोकप्रकाश, सर्ग - २८)
एवं पत्रशतोद्वेधे चक्षुसन्मेष एव च। भाव्याश्चपुट्टिकायां चासंख्येयाः समया बुधैः ॥ (काललोकप्रकाश, सर्ग - २८)

एक मुहूर्त में ऐसे ६५,५३६ क्षुल्लक भव होते हैं, क्योंकि एक मुहूर्त में १,६७,७७,२१६[5] आवलिकाएँ होती हैं। ४४४६, २४५८/३७७३ आवलिकाएँ जितना काल एक प्राण या श्वासोच्छवास कहलाता हैं। यहाँ श्वासोच्छवास निरोगी, सुखी तथा युवावस्था को प्राप्त हो ऐसे पुरुष का लेना, परन्तु रोगी या दुःखी मनुष्य[6] का श्वासोच्छवास नहीं लेना, क्योंकि उसके श्वासोच्छवास अनियत रूप से चलते हैं।

उच्छवास को उर्ध्वगमनशील और नीचे रखने पर अधोगमनशील निश्वास[7] समझना। यह उच्छवास और निःश्वास दोनों मिलकर प्राण (श्वासोच्छवास) होता हैं। (इस एक श्वासोच्छवास में अथवा एक प्राण में १७ से अधिक १७ १३९५/३७७३ क्षुल्लक भव होते हैं। ऐसे सात प्राण जितने काल को १ स्तोक कहाँ जाता है, ऐसे ७ स्तोकों से (४९ प्राणों से) १ लव[8] होता है। ऐसे ७७ लव हों तब १ मुहूर्त हुआ कहा जाता हैं। ये मुहूर्त चंद्र-मुहूर्त[9] और सूर्यमुहूर्त ऐसे दो प्रकार के हैं। इस मुहूर्त में एक समय कम होने पर उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कहलाता हैं और लघु में लघु (जघन्य) अन्तर्मुहूर्त ९ समय का होता हैं। दस समय से लेकर उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त में एक समय न्यून पर्यन्त मध्यम अन्तर्मुहूर्त गिना जाता है। अतः यह "अंतर्मुहूर्त असंख्य प्रकार से है" ऐसा सिद्धांतों में कहा गया है, यह बराबर घटित होता हैं। ३० मुहूर्त (६० घड़ी) का १ सूर्यदिवस होता हैं, ऐसे १५ सूर्यदिवस का १ सूर्यपक्ष होता हैं और वैसे १५ चान्द्रदिवस का भी १ चान्द्रपक्ष होता हैं, जिसे व्यवहार में पक्ष "पखवाडा" कहते हैं। ऐसे दो पखवाडों से एक मास होता है। १२ मासों से १ सूर्य-संवत्सर होता है पाँच सूर्य संवत्सरों का १ युग होता हैं। ८४ लाख सूर्य सवंत्सरों से १ पूर्वांग, ८४ लाख पूर्वांगों से १ पूर्व तथा ८४ लाख पूर्वो से १ त्रुटितांग होता हैं, (इतना आयुष्य श्री ऋषभदेव स्वामी का था) ८४ लाख त्रुटितांगों से १ त्रुटित, ८४ लाख त्रुटितों से १ अडडांग, ऐसे ८४ लाख - ८४ लाख से गुना करते हुए शीर्षप्रहेलिका तक आए....।

जैसे कि - अडडांग[10], अडड[11], अववांग, अवव, हुहुकांग, हुहुक, उत्पलांग, उत्पल, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अर्थनिपुरांग, अर्थनिपुर, अयुतांग, अयुत,

५. उक्तं च-एगा कोडी सतसट्ठी लक्खा सत्तहुत्तरी सहस्सा य। दोय सया सोलहिया, आवलिया इग मुहुत्तम्मि॥

६. हट्ठस्स अणवगल्लस्स, निरुवकिट्ठस्स जंतुणो। एगो उसास नीसासे, एस पाणुत्ति वुच्चई॥

७. "सोऽन्तर्मुख उच्छवासः" "बहिर्मुखस्तु निःश्वासः" (हैमकोष ग्रंथ)

८. काल का विशेष वर्णन "तंदुल वैचारिक पयन्ना, काल लोकप्रकाश, जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति, ज्योतिष करंडक..." इत्यादि ग्रंथो में विस्तार से दिया हैं। जिज्ञासु वहाँ से देखे।

९. चन्द्रमुहूर्त के बाद रात्रि के मुहूर्तो के नाम अलग-अलग प्रकारवाले हैं, उनका तथा सूर्यायन-दक्षिणायनादि प्रकारो का विस्तृत स्वरूप "काललोकप्रकाश ग्रंथ" में से देखें।

१०. पुव्वतुडियाडडाववहुहूय, तह-उप्पले य पउमेय। अट्ठावीसुं च ठाणा, चउणउयं होई ठाण सयं॥

११. ज्योतिषकरंडकादि अन्य ग्रंथो में इस संख्या के नाम अलग प्रकार से कहे गये हैं।

प्रयुतांग, प्रयुत, नयुतांग, नयुत, चुलिकांग, चुलिका, शीर्षप्रहेलिकांग, शीर्षप्रहेलिका। इस तरह शीर्षप्रहेलिका[१२] तक की संख्या हुई। पश्चात् असंख्यात वर्षो का एक पल्योपम होता हैं, जिसका स्वरूप इस प्रकार हैं.... पल्योपम के ६ प्रकार हैं[१३] (१) उद्धार पल्योपम, (२) अद्धा पल्योपम तथा (३) क्षेत्र पल्योपम और प्रत्येक के सूक्ष्म बादर ऐसे दो भेद हैं ऐसे कुल ६ भेद हुए, उसी प्रकार से सागरोपम[१४] के भी ६ प्रकार समझे।

★ समय से लेकर पुद्गल परावर्तन की काल संख्या का कोष्टक - यंत्र...

- निर्विभाज्य काल प्रमाण.....	१ समय
- ९ समय का.....	१ जघन्य अंतर्मुहूर्त
- चौथा ज.यु.[१५] असंख्याता की संख्या प्रमाण समयों की.....	१ आवलिका

१२. आज के प्रचलित गणित में १८ अंक पर्यंत ही संख्या या उसके नाम नहीं हैं, परन्तु जैनशास्त्र में १९४ अथवा मतान्तर से २५० अंक तक की संख्याएँ उनके नामों के साथ में हैं। उनमें एक मत के अनुसार शीर्षप्रहेलिका का अंक ७५८२६३२५३०७३०१०२४११५७९७३५६९९७५६९६४०६२१८९६८४८०८०१८३२९६.. इन ५४ अंको पर १४० शून्य लगाने जितना होता हैं, अर्थात् कुल १९४ अंक प्रमाण हैं। इस तरह माथुरी-वाचना प्रसंग पर अनुयोगद्वार सूत्र में कहा गया हैं। श्री भगवतीजी सूत्र, जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र और स्थानांगादि आगम ग्रंथो में यही अभिप्रायः व्यक्त हुआ हैं। जबकि अन्य ज्योतिषकरंडकादि ग्रंथों में उससे भी बृहत् संख्या गिनवाई हैं, अर्थात् ७० अंको को १८० शून्य लगाने से २५० अंक प्रमाण संख्या प्राप्त होती हैं। जो यह रही... १८७९५५१७९५५०११२५९५४१९००९६९९८१३४३०७७०७९७४६५४९४ २६-१९७७७४७६५७२५७३४ ५७१८६८१६(कुल ७० अंक संख्या) और ऊपर १८० शून्य रखे, जिससें २५० अंक संख्या आती हैं। इसी तरह ''वलभी'' (वल्लभीपुर नगर में हुई) वाचना में कहाँ गया हैं। इसके अतिरिक्त दुसरों ने भी दुसरी बहुत सी अलग-अलग रीतियाँ बताई है, इसके लिए ''श्री महावीराचार्य कृत-गणित संग्रह'' आदि देखने का अनुरोध हैं।

१३. पल्य अर्थात् बाँस की सलाईयों से बना प्याला अथवा पल्य अर्थात् कुआँ, अथवा गड्डा भी कहाँ जाय, उस उपमा से दिया जाता प्रमाण ''पल्योपम-प्रमाण'' कहा जाता हैं।

१४. सागरोपम अर्थात् सागर (समुद्र) का पार जिस तरह नहीं पाया जाता, उसी तरह इस प्रमाण का भी पार नहीं पा सकते, जिससे सागर की उपमावाला ऐसा काल वह सागरोपम काल कहाँ जाता हैं।

१५. चौथे जघन्ययुक्त असंख्यात की जो संख्या हैं वह संख्या प्रमाण समयों से मिलकर १ आवलिका होती हैं, २५६ आवलिका का १ क्षुल्लकभव होता हैं, ४४४६ $^{२४५८}/_{३७७३}$ आवलिका काल से १ स्तोक होता हैं, ७ स्तोकों से १ लव होता है, ७७ लव से एक मुहूर्त होता हैं। साथ ही एक मुहूर्त में ६५,५३६ क्षुल्लक भव भी होते हैं। मुहूर्त के भेद होने से ३,७७३ भव भी कम पडते हैं।

- २५६ आवलिका.....	१ क्षुल्लक भव
- २२२३ $^{१२२१}/_{३७७३}$ आवलिका का.....	१ उच्छ्वास अथवा निःश्वास
- ४४४६ $^{२४५८}/_{३७७३}$ आवलिका का अथवा साधिक १७ क्षुल्लक भव अथवा उच्छ्वास निःश्वास मिलकर...	१ प्राण (श्वासोच्छ्वास)
- ७ प्राणों का.....	१ स्तोक
- ७ स्तोकों का.....	१ लव
- ३८ $^{१}/_{२}$ लवों से (२४ मिनिट रूप).....	१ घडी
- ७७ लवों से अथवा २ घडीयों से अथवा ६५,५३६ क्षुल्लक भवों से अथवा १,६७,७७,२१६ आवलिकाओं से अथवा ३७७३ प्राणों का]	१ (चान्द्र) मुहूर्त १ सामायिक काल, २ घडी = ४८ मिनिट
- समय न्यून दो घडीयों का.....	१ उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त...

अन्य प्रकार से

- निर्विभाज्य असंख्य समयों का	१ निमेष	- १५ लवों से	१ कला
- १८ निमेषों से	१ काष्ठा	- २ कलाओं से	१ लेश
- २ काष्ठाओं से	१ लव	- १५ लेशों का	१ क्षण

(असंख्याता समयों का एक निमेष प्रमाण भी होता हैं। १८ निमेष से १ काष्ठा, २ काष्ठा से १ लव, १५ लवो से १ कला, २ कला से १ लेश, १५ लेशों से १ क्षण, ६ क्षणों से १ घटिका (नाडिका), २ घटिका से १ मुहूर्त...) ३० मुहूर्तो से १ अहोरात्र (दिन-रात), १५ अहोरात्र से १ शुक्लपक्ष, वैसे ही दूसरे १५ अहोरात्रों से १ कृष्णपक्ष, २ पक्ष मिलकर १ मास होता हैं, २ मास की १ ऋतु होती है (१२ मासो की - २ मास की एक ऋतु के हिसाब से ६ ऋतुएँ होती हैं। (१) हेमंत (२) शिशिर (३) वसंत (४) ग्रीष्म (५) वर्षा और (६) शरदऋतु।) तीन ऋतुएं मिलकर १ अयन, २ अयनों से १ संवत्सर, ५ संवत्सरों से १ युग, २० युगों से १ शत (१००) वर्ष, १० शत वर्षो से १ सहस्त्र (१०००) वर्ष, शत सहस्त्र वर्षो से १ लाख वर्ष, ८४ लाख वर्षो से १ पूर्वांग, ७० लाख करोड ५६ हजार करोड़ वर्षो से १ पूर्व होता हैं। ८४ लाख पूर्वो से १ त्रुटितांग होता है तथा इस त्रुटितांग की संख्या को ८४ लाख से २५ बार गुणा करने से शीर्षप्रहेलिका का प्रमाण आ जाता हैं।

- ६ क्षणों का	१ घटिका
- २ घटिकाओं का	१ मुहूर्त
- ३० मुहूर्त का	१ दिन (अहोरात्र)
- १५ दिन का	१ पक्ष (पखवाड़ा)
- २ पक्षों का	३० दिनों का १ मास
- २ मासों का	१ ऋत
- ३ ऋतुओं का (१८३ दिन वा ६ मास)	१ अयन (६ मास)
- २ अयनों का (१२ मास) अथवा ६ ऋतुओं[१६] से...	१ वर्ष
- ५ (सौर) वर्षों का	१ युग
- २० युगों का	१ शत वर्ष (१००)
- १० शत वर्षों का	१ सहस्त्र वर्ष
- १०० सहस्त्र वर्षों का	१ लाख वर्ष
- ८४ लाख वर्षों का	१ पूर्वांग
- ८४ लाख पूर्वांगों का (७० लाख क्रोड, ५६ हजार क्रोड - सूर्य वर्षो का)	१ पूर्व
- ८४ लाख पूर्व का	१ त्रुटितांग (ऋषभदेव का आयुष्य)
- ८४ लाख त्रुटितांगों का	१ अडडांग[1]
- ८४ लाख अडडांगों का	१ अडड[2]
- ८४ लाख अडडों का	१ अववांग[3]
- ८४ लाख अववांगों का	१ अवव[4]
- ८४ लाख अववों का	१ हुहुकांग

१६. जिसके विषय में कहा है कि... **''पाउस वासारत्तो सरओ हेमंत वसंत गिम्हाय । एए खलु छप्पि उऊ, जिणवर-दिट्ठा मए सिद्धा ॥''**

(1) अथवा-अटटांग (2) अटट (3) अयवांग (4) अयव

- ८४ लाख हुहुकांगों का	१ हूहूक
- ८४ लाख हुहुकों का	१ उत्पलांग
- ८४ लाख उत्पलांगों का	१ उत्पल
- ८४ लाख उत्पलों का	१ पद्मांग
- ८४ लाख पद्मांगों का	१ पद्म
- ८४ लाख पद्मों का	१ नलिनांग
- ८४ लाख नलिनांगों का	१ नलिन
- ८४ लाख नलिनों का	१ अर्थनिपुरांग
- ८४ लाख अर्थनिपुरांगों का	१ अर्थनिपुर
- ८४ लाख अर्थनिपुरों का	१ अयुतांग
- ८४ लाख अयुतांगों का	१ अयुत
- ८४ लाख अयुतों का	१ प्रयुतांग
- ८४ लाख प्रयुतांगों का	१ प्रयुत
- ८४ लाख प्रयुतों का	१ नयुतांग
- ८४ लाख नयुतांगों का	१ नयुत
- ८४ लाख नयुतों का	१ चुलिकांग
- ८४ लाख चुलिकांगों का	१ चुलिका
- ८४ लाख चुलिकाओं का	१ शीषप्रहेलिकांग
- ८४ लाख शीषप्रहेलिकांगों का	१ शीर्ष-प्रहेलिका (संख्यात वर्ष)
- असंख्यात वर्ष का (पल्य प्ररूपणा से)	१ पल्योपम (६ भेदों का)
- १० कोडाकोडी पल्योपम का	१ सागरोपम (६ भेदों का)
- १० कोडाकोडी अद्धा सागरोपम का	१ उत्सर्पिणी अथवा इतने ही काल की १ अवसर्पिणी... ६-६ आरा प्रमाण
- २० कोडाकोडी अद्धा सागरोपम का	१ कालचक्र
अथवा १ उत्सर्पिणी वा अवसर्पिणी मिलकर अनन्ता कालचक्र का	१ पुद्गल परावर्त होता हैं और वह ४ प्रकार का हैं।

बादर उद्धार पल्योपम

उत्सेधांगुल[१७] के प्रमाण द्वारा निष्पन्न १ योजन (४ कोस) गहरा घनवृत्त कुआँ (लंबाई, चौड़ाई और गहराई तीनों का प्रमाण समान होने से घनवृत्त कहा जाता हैं ।) जिसकी परिधि ३ $^{1}/_{6}$ योजन लगभग होती हैं, वह कुआँ सिद्धांतोक्त अभिप्रायः से महाविदेह क्षेत्रवर्ती मेरु के समीप आये देवकुरु और उत्तरकुरु[१८] के युगलिक मनुष्यों के मुंडन किए हुए मस्तकों[१९] पर एक से सात दिन तक उगे हुए बालाग्रो[२०] से भरना ।

प्रवचन सारोद्धार एवं संग्रहणी वृत्ति में जो मस्तक मुंडाने के बाद एक, दो यावत् उत्कृष्ट से सात दिन के उगे हुए बालाग्र लेना केवल इतना ही कथन हुआ हैं, अर्थात् अमुक क्षेत्राश्रयी लेने का सूचन नहीं है । क्षेत्रसमासस्वोपज्ञवृत्ति के अभिप्रायः से देवकुरु-उत्तरकुरु में उत्पन्न (इन क्षेत्रवर्ती युगलिकों के बाल सूक्ष्म हैं इसलिए...) सात दिन के मेढे[२१] के एक उत्सेधांगुल प्रमाण एक ही रोम के सात बार आठ-आठ खण्ड करें तब एक उत्सेधांगुल बाल के सब मिलकर २०,९७,१५२ रोमखण्ड होते हैं, ऐसे अतिसूक्ष्म किए हुए रोमखण्डों से इस पल्य को भरना, इत्यादिक सांप्रदायिक (गुरु - परंपरा) अर्थ है ।

इस तरह एक उत्सेधांगुल प्रमाण बाल के सात-सात बार आठ-आठ टुकड़े करके, उस पल्य को परिपूर्ण भरने से एक उत्सेधांगुल प्रमाण मोटे पल्य के तलवे के क्षेत्र में २०,९७,१५२ रोमखंड समा सकते हैं । एक-एक अंगुल के किए रोमखंडों की राशि को २४ अंगुलों का एक हाथ होने से २४ गुना करे तो एक हाथ जितनी जगह में ५,०३,३१,६४८ (५ क्रोड़, ३ लाख, ३१ हजार, ६४८) रोमखंड समा जाते हैं । पुनः उसे ही चार हाथ का धनुष्य होने से चार गुना करें तो २०,१३,२६,५९२ (बीस क्रोड़, तेरह लाख, छब्बीस हजार, ५९२) रोमखंड १ धनुष्य पल्य क्षेत्र में समाते हैं । पुनः उसे ही २००० दंड (अथवा धनुष्य) का एक कोस होने के कारण २००० गुना करें तब ४,०२,६५,३१,८४,००० (४ खर्व, २ अरब, ६५ क्रोड़, ३१ लाख, ८४ हजार) रोम राशी एक कोस जितने पल्य के क्षेत्र में समा जाती है । चार कोस का एक योजन होने से उक्त संख्या को चार गुना करें तब १,६,१०,६१,२७,३६,००० (१ निखर्व, ६ खर्व, १० अरब, ६१ क्रोड़, २७ लाख, ३६ हजार) रोमखंड केवल पल्य की एक योजन लंबी श्रेणी में समा जाए जब कि दूसरी अनेक श्रेणियाँ भरे तब मात्र कुएँ का तलभाग ही ढंका जाए । अतः उस समग्र तलवे को बालाग्रों से संपूर्ण भरने के लिए १,६,१०,६१,२७,३६,००० की उक्त संख्या का वर्ग करें अर्थात् पुनः उतनी ही संख्या से गुने तब २५,९४,०७,३३,८५,३६,५४,०५,६९६ रोमखंडों से केवल तलवा ही पूरित हों । इतनी बाल संख्या से एक ही प्रतररचना हुई कही जाय । पूर्वोक्त संख्या प्रमाण दूसरे बालों की परतों को भरें तो समग्र कुआँ भर जाए । यह गिनती ''घनवृत्त'' करने की थी परंतु यहाँ घनचौरस कुएँ की हुई । तो अब उस रोमखंडों को उतने ही रोमखंडों से पुनः गुनें तो ४१,७८,०४,७६,३२,५८,८१,५८, ४२, ७७, ८४, ५४, ०२,

१७. यह हमारा चालु माप हैं । १८. यह अभिप्रायः क्षेत्रसमास और जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति की वृत्ति का हैं । तथा जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण का भी यही अभिप्रायः हैं । १९. युगलियों को मुंडन नहीं होता है लेकिन माप समझने के लिए दृष्टांत समझाया हैं । २०. बालाग्र अर्थात् बाल का अग्र भाग नहीं है किन्तु अमुक प्रमाण बाल लेना अर्थात् १ से ७ दिन तक का बढ़ा हुआ बाल वह बालाग्र...। २१. विवक्षित एक रोम के ८ खंड किए, उसके दूसरी बार हरेक आठ (८) खंड के ८-८ बार टुकडे किये तब ६४,६४ खंड में प्रत्येक खंड के तीसरी बार ८-८ खंड करे तब ५१२, चौथी बार ४०१६, पांचवी बार ३२,७६८ छट्ठी बार २,६२,१९४ सातमी बार करें तब २०,९७,१५२ खंड, १ उत्सेधांगुल प्रमाण एक बाल के होते हैं ।

५६,००,००,००,००० इतने रोमखंडो से ''घनचौरस'' कुआँ भर जाए। ''घनवृत्त'' कुआँ भरने के लिए प्रस्तुत संख्या को १९ गुणी[२२] करके २४ से भाग करें तो ३३ क्रोड़, ७ लाख, ६२ हजार, १०४ कोडाकोडी कोडाकोडी, २४ लाख, ६५ हजार, ६२५ कोडाकोडी कोडी, ४२ लाख, १९ हजार, ९६० कोडाकोडी, ९७ लाख, ६५ हजार, ६०० (३३०७,६२,१०४, कोडाकोडी कोडाकोडी, २४,६५,६२५ कोडाकोडी कोडी, ४२,१९,९६० कोडाकोडी, ९७,६००,००,००,०००)[२३] इतने बालाग्रों की राशियों से संपूर्ण कुआँ भर जाए। इन बालों को खचाखच भरना और उन्हें ऐसा निबिड भरना कि उन बालाग्रों को अग्नि जला न सके, पानी भिगो न सके और चक्रवर्ती जैसे कि सेना उस बालाग्र पर स्पर्श करती हुई निकल जाए तो भी वह बालाग्र झूकता (दबता) नहीं, इस तरह बालाग्रों से ठसोठस भरे हुए कुएँ में से हर एक समय पर एक एक बालाग्र समुद्धृत करना अर्थात् निकालना ऐसे समय-समय पर बालाग्र निकालते हुए जितने समय में वह पल्य सर्वथा बालाग्र से रहित हो जाएँ उतने समय को ''बादर उद्धार पल्योपम'' कहते हैं।

कुएँ के बाहर उद्धार करने की मुख्यता से यह नाम दिया गया हैं। इस पल्योपम का काल-मान संख्यात समय मात्र हैं, क्योंकि एक-एक समय पर बालाग्र निकालना हैं। बालाग्रों की संख्या मर्यादित ही है और निमेष मात्र में असंख्यात समय हो जाते हैं इस निमेष काल से भी इस पल्योपम का काल अतिअल्प हैं। यह काल प्रमाण जगत की किसी भी वस्तु[२४] का काल बताने में उपयोगी नहीं है। केवल आगे कहा जानेवाला ''सूक्ष्म उद्धार पल्योपम'' सुख से जाना जा सके इसलिए ''बादर उद्धार पल्योपम'' का स्वरूप बताने में आया हैं। ऐसे १० कोडाकोडी बादर उद्धार पल्योपम से एक ''बादर उद्धार सागरोपम'' होता हैं।

सूक्ष्म उद्धार पल्योपम

सूक्ष्म उद्धार पल्योपम : पहले बादर उद्धार पल्योपम के निरूपण में जिस तरह कुंआ भरा हैं उसी तरह यहाँ भरा हुआ समझें। अब उस कुएँ में पहले जो सूक्ष्म बालाग्र भरे थे, उनमें से प्रत्येक बालाग्र के बुद्धिमान पुरुष बुद्धि की कल्पना से असंख्य असंख्य खंड कल्पित करे द्रव्य प्रमाण से वे रोमखंड कैसे हों ? तो विशुद्ध लोचनवाला छद्मस्थ जीव जैसे सूक्ष्म (आपेक्षिक सूक्ष्म) पुद्गल स्कंध को देख सकता हैं, उसके असंख्यातवें भाग जितने सूक्ष्म ये बालाग्र होते हैं। क्षेत्र से इस बालाग्र का प्रमाण बताते हुए कहते हैं कि सूक्ष्म साधारण वनस्पतिकाय (निगोद) के जीव का शरीर जितने क्षेत्र में सीमटकर रहता हैं, उसकी अपेक्षा असंख्यगुण अधिकक्षेत्र में ये रोमखंड सिमट सकते हैं।

२२. शतक कर्मग्रंथ टीका में चौरस का वृत्त करने के लिए इस विषय में १९ से गुना करके २२ से भाग देना बताया हैं।

२३. जिसके लिए लोकप्रकाश ग्रंथ में कहाँ है कि... त्रित्रिखाश्वरसाक्ष्याशावार्द्वयक्ष्यब्धिरसेन्द्रियाः। षट्द्विपञ्चचतुर्द्वयेकां - कांकषट्खांकवाजिनः ॥१॥
पञ्च त्रिणि च षट् किञ्च नवखानि ततः परम्ः। आदितः पल्यरोमांशराशिसंख्यांक संग्रहः ॥२॥

२४. जिसके लिए अनुयोगद्वार सूत्र में कहा है कि - एएहिं वावहारिय-उद्धारपलिओवमसागरोवमेहिं किं पउ(ओ)यणं ?
एएहिं वावहारिय-उद्धारपलिओवमसागरोवमेहिं णत्थि किंचिप्पओयणं, केवलं पन्नवणा पन्नविज्जई ॥(गा. १०७)
सूक्ष्म बालाग्रों से उद्धार करते समय काल प्रमाण निकलने से यह नाम सान्वर्थक हैं।

साथ ही अन्य बहुश्रुत भगवन्त कथन करते हैं कि - असंख्यातवे भाग के प्रमाणानुसार (अनुरूप, जो बालाग्र हैं वे पर्याप्त बादर पृथ्वीकाय के शरीर तुल्य रूप होते हैं।) ये सर्व रोमखंड परस्पर समान प्रमाणवाले और सर्व अनन्त-प्रदेशात्मक होते हैं।

इस तरह पूर्व की रीति से पूर्वप्रमाणवाले उस पल्य के अंदर रहे हुए जो बालाग्र जिनके सूक्ष्म उद्धार पल्योपम का प्रमाण निकालने के लिए (प्रत्येक) के असंख्य असंख्य खंड कल्पित किये हैं, उन कल्पित बालाग्रों में से प्रतिसमय, एक-एक बालाग्र को पल्य में से बाहर निकालें, ऐसा करते हुए जितने समय में (काल में) वह पल्य बालाग्रों में से निःशेष हो जाएँ उस काल को ''सूक्ष्म उद्धार पल्योपम'' कहा जाता हैं। यह पल्योपम संख्याता क्रोड़ वर्ष प्रमाण का हैं।

ऐसे १० कोडाकोडी सूक्ष्म उद्धार पल्योपम से एक ''सूक्ष्म उद्धार सागरोपम'' होता हैं।

इस सूक्ष्म उद्धार पल्योपम और सूक्ष्म उद्धार सागरोपम से तिर्च्छालोकवर्ती असंख्याता द्वीप समुद्रों की संख्या की तुलना हो सकती हैं, क्योंकि २५ कोडाकोडी (२५०००००००००००००००) सूक्ष्म उद्धार पल्योपम के जितने समय हैं उतने ही द्वीप-समुद्र हैं इसीलिए २५ कोडाकोडी[२५] कुओं में पूर्व रीति से किये असंख्य असंख्य खंडोंवाले रोमखंडों की जितनी संख्या हो उतने द्वीप-समुद्र हैं, अर्थात् सागरोपम से अढाई[२६] सूक्ष्म उद्धार सागरोपम के जितने समय हैं उतने ही द्वीप-समुद्र हैं।

बादर अद्धा पल्योपमम्

पहले ''बादर उद्धार पल्योपम'' के समय जिस माप के पल्य में जिस तरह बालाग्र भरे थे, उसी तरह यहाँ भी कल्पना करें। उस समय उस पल्य में से प्रथम प्रतिसमय - उद्धार क्रिया की थी, तब यहाँ बादर अद्धा पल्योपम निकालने के लिए हर १००-१०० वर्ष में एक-एक बालाग्र मात्र निकालना, अर्थात् १०० वर्ष हो तब एक बार १ बालाग्र कम करना। दूसरे १०० वर्ष हों तब १ दूसरा बालाग्र बाहर निकालना। इस तरह क्रिया करते करते जब वह पल्य बालाग्रों से रहित हो जाए तब बादर अद्धा पल्योपम होता हैं और यह पल्योपम संख्याता एक करोड़ वर्ष प्रमाण हैं और इसका निरूपण आगे कहे जानेवाले ''सूक्ष्म अद्धा पल्योपम'' को समझने के लिए ही हैं।

ऐसे १० कोडाकोडी बादर अद्धा पल्योपम से एक ''बादर अद्धा सागरोपम'' होता हैं। यहाँ ''अद्धा'' अर्थात् समय के साथ तुलना किया हुआ काल.....।

२५. कोडाकोडी अर्थात् किसी भी मूल संख्या को एक करोड़ से गुना करने से जो संख्या प्राप्त हो, वह समझना। जिस तरह १०,००,००,००० (दश करोड़) को १,००,००,००० (एक करोड़) से गुना करें तो १०००००००००००००० (दश कोडाकोडी) संख्या होती हैं, परंतु वर्गगणित की तरह उतनी संख्या से गुना करना ऐसा नहीं।

२६. एएहिं सुहुमउद्धारपलिओवमसागरोवमेहीं दीव समुद्दाणं उद्धारो घेप्पई ॥ सिद्धांतेऽपि उक्तं - ''केवइया णं भंते ! दीव समुद्दा उद्धारेणं पन्नता ? गोयमा ! जावइयाणं अड्ढाइज्जाणं उद्धारं सागरोवमाण उद्धार समया, एवइयाणं दीवसमुद्दा उद्धारेणं पन्नतं ॥'' अन्येऽप्याहु :-

जावइओ उद्धारो, अड्ढाइज्जाण सागराण भवे। तावइया खलु लोए, हवंति दीवा - समुद्दा य ॥ (प्रवचन सारो. द्वा. - १५९)

सूक्ष्म अद्धा पल्योपम्

पहले सूक्ष्म उद्धार पल्योपम के प्रसंग पर प्रत्येक बादर रोमखण्डों का जिस तरह असंख्यात-असंख्यात खण्ड कल्पित किये थे वैसे ही यहाँ पर कल्पित करें (पल्य प्रमाण पूर्ववत् समझना) कल्पना करके प्रतिसमय नहीं निकालकर हर सौ (१००) वर्ष पर एक-एक (१-१) बालाग्र निकालना और निकालते जब वह कुआँ खाली हो जाए तब एक ''सूक्ष्म अद्धा पल्योपम'' होता हैं। ऐसे १० कोडाकोडी सूक्ष्म अद्धा पल्योपम से एक '' सूक्ष्म अद्धा सागरोपम'' होता हैं। इस सूक्ष्म अद्धा पल्योपम अथवा सागरोपम द्वारा नरकादि ४ गतियों के जीवों की आयुस्थिति[२७] (भव-स्थिति) तथा जीवों की स्वकायस्थितियाँ आदि मापी जाती हैं।

बादर क्षेत्र पल्योपम्

जिस माप के बालाग्रों को सात बार, आठ-आठ खंड करने से कुआँ भरा हैं, उसी पल्य में से प्रत्येक रोमखण्ड में, असंख्य आकाश प्रदेश अन्दर और बाहर से भी स्पर्श करके रहे हैं और अस्पर्श रूप में भी रहे हैं, उनमें स्पर्श करके रहे आकाश प्रदेशों की अपेक्षा अस्पृष्ट आकाशप्रदेश असंख्यात हैं। उन बालाग्रों से स्पृष्टबद्ध आकाशप्रदेशों को प्रत्येक समय एक-एक कर बाहर निकाले और निकालते निकालते स्पर्शित सर्व आकाशप्रदेश जब खाली हो जाएँ तब उतना समय ''बादर क्षेत्र पल्योपम'' कहा जाए। यह पल्योपम असंख्य कालचक्र प्रमाण हैं। ऐसे १० कोडाकोडी बादर क्षेत्र पल्योपम से एक ''बादर क्षेत्र सागरोपम'' होता हैं। इस बादर - पल्योपम / सागरोपम के कथन का प्रयोजन सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम समझने के लिए ही हैं।

सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम

सूक्ष्म-बादर क्षेत्र पल्योपम के प्रसंग पर जिन प्रकार के बालाग्रों से उक्त प्रमाण पल्य भरा था। उसी प्रकार से भरे पल्य में प्रत्येक रोमखण्डों के अन्दर स्पर्श किए हुऐ और नहीं स्पर्श किये आकाश-प्रदेश का विवरण किया गया था। वर्तमान प्रसंग में इतना विशेष समझना चाहिए कि बालाग्र तो इतने तो खचोखच भरे हुए हैं कि वे प्रचण्ड वायु से भी उड नहीं सकते, अगाधज्ञानदृष्टिवाले त्रिकालदर्शी ज्ञानी पुरुषोंनें यथार्थ देखा है और इसलिए यथार्थ प्रकाशित किया हैं। निबिड रीति से भरे और असंख्यबार खण्डित करके कल्पित उन बालाग्रों में भी एक बालाग्र, से दूसरे बालाग्र, दूसरे से तीसरा, ऐसे सभी के अंतराल में असंख्यात असंख्यात आकाशप्रदेश है अतः सचमुच देखें तो स्पृष्ट के बदले अस्पृष्ट आकाश प्रदेश बहुत (असंख्यगुणा) मिल जाएँगे। इस तरह स्पृष्टास्पृष्ट आकाश प्रदेश दो प्रकार के हुए, एक स्पर्शित और दूसरे अस्पर्शित दोनों प्रकार के आकाशप्रदेशों से निशेषः हो जाय तब ''सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम'' होता हैं।

यद्यपि यहाँ बालाग्रों का असंख्यबार खण्ड करने का कुछ भी प्रयोजन नहीं हैं, क्योंकि सारे पल्य में स्थित सर्व आकाशप्रदेशों को तो निकालना हैं ही, तथापि बालाग्रों के असंख्यात खण्ड करने के साथ भरने का क्या कारण हैं? इस शंका के समाधान में वह समझें कि दृष्टिवाद के बारहवें सूत्रांग में कुछ आकाशप्रदेश स्पृष्ट प्रदेशों से, कुछ मात्र अस्पृष्ट आकाशप्रदेश प्रमाण से और कुछ स्पृष्टास्पृष्ट आकाशप्रदेशों से - इस तरह तीनों रीतियों से माप होने से तीनों रीतियों से - काल का मान समझने के लिए उक्त प्ररूपणा[२८] की हैं।

२८. उसकें लिए देखें बृहत्संग्रहणी, अनुयोगद्वारसूत्र, पंचम कर्मग्रंथ वृत्ति आदि....।

प्रश्न - इस पल्य में स्थित बालाग्र इस प्रकार निबिड भरे हुए होते हैं कि चक्रवर्ती का सैन्य एक बार शायद चला जाये तो भी वे बालाग्र जरा भी दब नहीं सकते, तो वेसे पल्य में भी अस्पृष्ट आकाशप्रदेश क्या संभव हैं ?

उत्तर - हाँ ! पल्य में स्थित रोमखण्ड चाहे जैसे खचाखच भरे हों तब भी वह रोमखण्ड वस्तु ही औदारिक वर्गणा की होने के कारण बादर परिणामवाली हैं कि जिसका स्कन्ध ऐसे प्रकार का घन-परिणामवाला नहीं हो सकता कि जो स्कन्ध स्व-स्थानवर्ती आकाशप्रदेशों में व्यावृत्त (व्याप्त) हो जायें, अतः हरएक बालाग्र अनेक छिद्रोंवाला हैं। उन छिद्रों में भी आकाशप्रदेश अस्पृष्ट होता हैं। किसी भी औदारिकादि शरीर स्कंध के अवयव सर्वथा निश्छिद्रक नहीं होते, इसी कारण स्पृष्ट की अपेक्षा अस्पृष्ट आकाशप्रदेश असंख्यगुण भी संभवित हो सकते हैं। साथ ही, रोमखण्ड बादर-परिणामवाले और अरूपी हों इसलिए बादर परिणामवाली वस्तु में अतिसूक्ष्म अस्पृष्ट आकाशप्रदेश संभवित हों उसमें किसी भी प्रकार का विसंवाद है ही नहीं।

एक बाह्य उदाहरण द्वारा इसे समझ सकेगे कि... कुम्हडों[२९] से भरी कोठी में परस्पर पोलापान होता हैं और उस पोलोपन में बहुत से बिजौरे के फल समा सकते हैं, उन बिजौरों में प्रवर्तमान पोलेपन में हरडे रह सकते हैं, हरडे के पोले भागों में बदर (बेर-बोर) रह सकते है, बोर के पोलेपन में चने समा सकते है, चने के अन्तर में तिल, उसके अंतर में सरसों आदि सूक्ष्म-सूक्ष्मतर वस्तुएँ समा सकती हैं, तदनन्तर एक अति सूक्ष्मपरिणामी आकाशप्रदेश बालाग्रों से भरे हुए प्याले में अस्पृष्टरूप से रहे वह सम्भव नहीं हो सकता हैं ? दूसरा उदाहरण ले, स्थूलदृष्टि से अत्यन्त घन- ठोस से ठोस ऐसे स्तम्भ में भी सैंकडों किलीयों का समावेश खुशी से हो सकता हैं। तदनन्तर इस पल्य में अस्पृष्ट आकाशप्रदेशों की स्थिति किस प्रकार सम्भव नहीं हो सकती हैं ? अर्थात् सम्भवित हैं ही.....।

ऐसे १० कोडाकोडी सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम से एक ''सूक्ष्म क्षेत्र सागरोपम'' होता हैं। ये सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम तथा सागरोपम, बादर क्षेत्र पल्योपम-सागरोपम से असंख्यगुण प्रमाणवाले हैं। ये सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम और सागरोपम त्रसादि अर्थात् चलते-फिरते जीवों का परिणाम दिखाने में उपयोगी बताये हैं।

२९. तत्थ णं चोअए पण्णवगं एवं वयासी - अत्थि णं तस्स पल्लस्स आगासपएसा णं तेहिं बालग्गेहिं अणाप्फुण्णा ? हंता अत्थि, जहा को दिट्ठंतो ? में जहा नामणाए कोट्ठए सिया कोहंडाणं भरिए। तत्थ ण माउलिंगा पक्खित्ता ते वि माया, तत्थ णं बिल्ला पक्खित्ता तेवि माया, तत्थ णं आमलगा पक्खित्ता ते वि माया, तत्त्थ णं बयरा पक्खित्ता ते वि माया, तत्त्थ णं चणगा पक्खित्ता ते वि माया, तत्थ नं तिला (मुग्गा) य पक्खित्ता ते वि माया, तत्थ णं गंगावालुआ पक्खित्ता सा वि माया, एवमेवं एएणं दिट्ठंतेणं अत्थि णं तस्स पल्लस्स आगासपएसा जे णं तेहिं वालग्गेहिं अणाप्फुण्णा'' इति

(अनुयोगद्वार सूत्र-१७०)

२०. पृथ्वी के आकार और स्थिरता संबंधी सुंदर साहित्य वर्णन....

क्रम	प्राचीन	क्रम	अर्वाचीन
१.	श्री जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति	१.	वन हंड्रेड प्रुफ्स घेट द अर्थ इज नोट A ग्लोब (अमेरिका के विद्वान लेखक - विलियम कार्पेन्टर)
२.	श्री सूर्य प्रज्ञप्ति	२.	मोर्डन सायन्स एन्ड जैन फिलोसोफी
३.	श्री चंद्र प्रज्ञप्ति	३.	P. L. ज्योग्राफी भा. १-२-३-४
४.	श्री ज्योतिष करंडक	४.	जैन दर्शन और आधुनिक विज्ञान
५.	श्री बृहत्क्षेत्र समास	५.	भूगोल भ्रमण मिमांसा
६.	श्री लघु क्षेत्र समास	६.	विश्व रचना प्रबन्ध
७.	श्री बृहत्संग्रहणी	७.	जैन भूगोल (एक महत्वपूर्ण प्रामाणिक ग्रंथ)
८.	श्री लघुसंग्रहणी	८.	जैन खगोल (एक महत्वपूर्ण प्रामाणिक ग्रंथ)
९.	श्री क्षेत्रलोकप्रकाश	९.	जैन भूगोलनी विशालकाय प्रस्तावना
१०.	श्री काललोकप्रकाश	१०.	पृथ्वी स्थिर प्रकाश
११.	श्री मण्डल प्रकरण	११.	ध एस्ट्रालोजिकल मेगेजिन जुलाई - ओगस्ट १९४६
१२.	श्री जंबूद्वीप समास	१२.	ध एस्ट्रालोजिकल मेगेजिन फेब्रुआरी - १९४६
१३.	श्री जंबूद्वीप संग्रहणी	१३.	सन्डे न्युझ ओफ इंडिया (२-५-१९४८)
१४.	श्री जंबूद्वीप पयन्ना	१४.	अहिंसावाणी, विशाल भारत आदि के अंक....
१५.	श्री द्वीपसागर प्रज्ञप्ति	१५.	कोटक थीयेरी (D.J.) कोटक लिखित
१६.	तत्त्वार्थ सूत्र	१६.	सूर्य मति विज्ञान (महामहोपाध्याय लक्ष्मी नारायण द्विवेदी (P.O.) तिर्वा फरुखाबाद (यु.पी.)
१७.	तत्त्वार्थ (श्लोक वार्तिक)	१७.	अपनी सच्ची भूगोल
१८.	लोकनालिका स्तव	१८.	जैन भूगोलनुं तर्क शुद्ध विज्ञान (गु.) / जैनदर्शन में भूगोल मीमांसा (हि.)
१९.	सिरि-निलय क्षेत्र विचार	१९.	जैन तत्त्वज्ञान चित्रावली प्रकाश
२०.	श्री गणितानुयोग (क्षेत्रानुयोग) ग्रंथ	२०.	JAIN COSMOLOGY (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था)

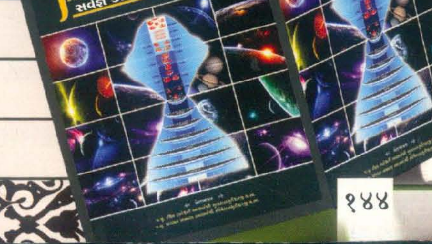

२१. इन विषयों को जानने के लिए ये पढ़ो...

लोक परिचय के लिए......

१. आचारंग सूत्र / श्रुतस्कंध-१ / अध्य.-१ / उद्देशा-१★
२. आवश्यक सूत्र / द्वितीय अध्ययनम्★
३. विशेषावश्यक भाष्य / द्वितीय अध्ययनम्★
४. ठाणांग सूत्र / स्थान-१/३, उद्देशा-३ / सूत्र-१५३★
५. सूत्रकृतांग (सूयगडांग) सूत्र★
६. समवायांग सूत्र / समवाय-१★
७. भगवती सूत्र / शतक-१३ / उद्देशा-४★
८. भगवती सूत्र / शतक-११ / उद्देशा-१०★

लोक के आकार ज्ञान के लिए.....

१. ठाणांग सूत्र / स्थान-३ / उद्देशा-३★
२. आचारांग सूत्र / श्रुतस्कंध-१ / अध्य.-८ / उद्देशा-१★
३. भगवती सूत्र / शतक-७ / उद्देशा-३ / सूत्र-२६१★
४. भगवती सूत्र / शतक-१३ / उद्देशा-४
५. भगवती सूत्र / शतक-११ / उद्देशा-१० / सूत्र-४२०-४८७★

खगोल के परिचय के लिए.....

१. सूर्य प्रज्ञप्ति★
२. चंद्र प्रज्ञप्ति★
३. भगवती सूत्र★
४. ज्योतिष करंडक★
५. काललोकप्रकाश
६. मण्डल प्रकरण
७. बृहत्संग्रहणी
८. तत्त्वार्थ सूत्र

जंबूद्वीप के परिचय के लिए.....

१. जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति★
२. आवश्यक सूत्र / द्वितीय अध्ययनम्★
३. जीवाजीवाभिगम् सूत्र★
४. द्वीपसागरप्रज्ञप्ति संग्रहणी★
५. समवायांग सूत्र★
६. अनुयोगद्वार सूत्र★
७. सूयगडांग सूत्र★
८. ठाणांग सूत्र/द्वितीय-स्थान/तृतीय उद्देशा★

भरतक्षेत्र के परिचय के लिए.....

१. जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति / वक्ष.-३ / सूत्र-७१★
२. ठाणांग सूत्र / स्थान-९★
३. प्रश्नव्याकरण / ४-था, आश्रवद्वार★

भूगोल के परिचय के लिए.....

१. लघुक्षेत्र समास २. बृहत्क्षेत्र समास
३. जंबूद्वीप समास ४. क्षेत्रलोक समास
५. तत्त्वार्थ सूत्र और उसकी श्लोकवार्तिक टीका.....

तिर्यग् लोक के परिचय के लिए.....

१. स्थानांग सूत्र / स्थान-३ / उद्देशा-२★
२. अनुयोगद्वार सूत्र★
३. सूयगडांग सूत्र / श्रुतस्कंध-१ / अध्य.-५ / उद्देशा-१★

("तत्त्वज्ञान स्मारिका" ग्रंथ में से साभार.....)

ता.क. - उपर बताए गये (★) निशानी वाले ग्रंथों की यादी आगमादि होने से वह वह.ग्रंथ गृहस्थों को पढ़ने -पढ़ाने की अनुज्ञा नहीं हैं।

२२."लोक" के नामादि ८ निक्षेप

लोक का अनेक तरह से दर्शन होता हैं.... इससे वह अनेक स्वरूप का है, जैसे कि "आवश्यक निर्युक्ति" ग्रंथ के "चतुर्विंशतिस्तव" नामक अध्ययन में कहा गया हैं कि....

नाम ठवणा दविए खित्ते काले भवे अ भावे अ ।
पज्जवलोगो अ तहा अट्ठविहो लोगनिक्खेवो ॥

अर्थ :- नामलोक, स्थापनालोक, द्रव्यलोक, क्षेत्रलोक, काललोक, भवलोक, भावलोक और पर्यायलोक ये निक्षेपे लोक के हैं। अर्थात् लोक ८ प्रकार से हैं।

(१) "नामलोक" याने जिसका नाम "लोक" रखा वह.... वह कौन हैं ?(अथवा वह क्या हैं ?)तो उत्तर में लोक कहाँ जाएगा, परंतु यह नाम मात्र से लोक हुआ। (२) "स्थापना लोक" किसी चीज (वस्तु) में लोक की स्थापना कि जाती हैं, उदा. १४ राजलोक के नक्शे में बताया जाता है कि यह इतना लोक हैं और बाकी अलोक हैं। (३) "द्रव्यलोक" याने द्रव्यरूप लोक, सब जीव- अजीव रूप द्रव्यों को कहा जाता हैं। (४) "क्षेत्रलोक" क्षेत्रलोक रूपी लोक समस्त लोकाकाश को कहा जाता हैं और अनंत आकाश भी क्षेत्रलोक हैं, क्योंकि आकाश क्षेत्र रूप हैं, चाहें उस सब का उपयोग न भी हुआ हो.... होता हो.... (यहाँ लोक याने अवलोकित हो, जो अपने ज्ञान से देखा या जाना जाये वह.....) (५) "काललोक" एक समय से लेकर पुद्गलपरावर्त के काल को "काललोक" कहा जाता हैं। (६) "भवलोक" याने वर्तमान भव में रहे हुए चारों गति के जीव जिसे भोग रहे हैं वह "भवलोक" हैं। (७) "भावलोक" अर्थात, औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपक्षमिक व पारिणामिक और सांनिपातिक इन छः प्रकार के भावों को "भावलोक" कहते हैं। (८) "पर्यायलोक" याने जीव-अजीव द्रव्यों के गुणपर्याय भावों का होना वह..... ये सभी पर्याय अनंतानंत हैं..... यह भी एक प्रकार का लोक हैं। फिर से याद रखे कि "लोक" याने "अवलोकन" हो सके वैसी वस्तु या पदार्थ, अतः वह उपरोक्त आठ प्रकार से हैं ....। ऐसा लोक अनादिकाल से चला आ रहा हैं और अनंतकाल तक रहेगा.... ऐसा सर्वज्ञ जिनेश्वर तीर्थंकर भगवंतो द्वारा कथित हैं।

ग्रन्थ का विशेषार्थ समाप्त हुआ । भव्य जीवगण इस ग्रन्थ का अभ्यास कर श्री जिनेश्वर - सर्वज्ञ भगवान् की आज्ञा का सम्यक् श्रद्धान कर, सम्यग् आचार विचार रूप सम्यक् चारित्र का पालन कर मुक्ति पद को प्राप्त करे । एवं मति दोष से, लेखन दोष से अथवा प्रेस दोष से हुई भूलचूक के लिये मिथ्या-दुष्कृत (मिच्छामि दुक्कडम्) देते हैं । गंभीर हृदयवाले सज्जनवर्ग मेरे जैसे कृपा पात्र अर्थ लेखन के प्रति क्षमा रखकर सुधारकर पढ़ने की कृपा करे ।

२३.

JAIN COSMOLOGY

ग्रंथ के लिऐ आये हुए

अभिप्राय पत्र

कोबा, दिनांक : ०८-१२-२०१३

Jain Cosmology (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) ग्रंथ का अवलोकन करने से यह ज्ञात हुआ कि इस ग्रंथरत्न में खगोल-भूगोल से सम्बधित विभिन्न विषयो को सचित्र प्रस्तुत किया गया हैं। श्रमण परम्परा एवं भारतीय परम्पराओं में भूगोल-खगोल का जो वर्णन मिलता है, उसे एकत्र करने का बहुत ही सुन्दर एवं सराहनीय प्रयास किया गया हैं। आज भूगोल-खगोल के सम्बन्ध में अनेक वैज्ञानिकों द्वारा विभिन्न विषयों पर शोध हो रहे हैं, किन्तु आधे-अधूरे शोध के आधार पर ही वे इस संबंध में भिन्न-भिन्न मत स्थापित करके विश्व को भ्रमित कर रहे हैं। आपस में ही एक-दुसरे के मतों का खण्डन एवं स्वमत का मण्डन कर रहे हैं। आज तक समस्त विश्व के वैज्ञानिक इस विषय पर एक मत नहीं हो पाये हैं, जबकि आदिकाल से श्रमण परम्परा के ग्रंथो में इस विषय पर सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था का निरूपण होता आ रहा हैं।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में भूगोल-खगोल का भौतिक जगत् के साथ सम्बन्ध स्थापित किया जाता हैं, जबकि इस ग्रंथ में भूगोल-खगोल का सम्बन्ध अनेकानेक तर्कबद्ध उदाहरणों के द्वारा आध्यात्मिक जगत् के साथ स्थापित करके वैज्ञानिको के समक्ष एक नई दिशा प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया हैं। आशा हैं, इस ग्रंथ के माध्यम से इस इस विषय पर शोध एवं वैज्ञानिक परिक्षण करनेवालो का मार्ग प्रशस्त होगा और शोधकर्ता भी श्रमण परम्परा की अवधारणा को मान्यता प्रदान करने को विवश होंगे।

मुनिश्री चारित्ररत्नविजयजी म.सा. द्वारा भविष्य में भी समाज को नई दिशा प्राप्त होती रहे.... ऐसी शुभकामना एवं मंगल आशीर्वाद.....

राष्ट्रसंत आ. श्री पद्मसागरसूरिजी म.सा.

जेठ सुद - १३, रास्का तीर्थ

जैनशासनना सिद्धांतोनी पारदर्शकता अने तेनी सत्यताने समजावतो तमारो आ प्रयत्न स्तुत्य छे. मिथ्या विज्ञान पाछळ अंध बनेली युवापेढीने सत्य विज्ञाननुं दर्शन करावतुं आ प्रकाशन संपूर्ण जैनशासनमां आवकार्य छे. तत्त्वज्ञानना मार्ग द्वारा तत्त्वनी साची परिणतीने पामी वहेलामां वहेली तके सर्वज्ञता - सर्वदर्शीपणाना सौ स्वामी बने..... ए ज शुभेच्छा....

गच्छा. आ. विजय पुण्यपालसूरिनी अनुवंदना

आसो वद - ५, आहोर

शुद्ध तत्त्वज्ञान सह सूक्ष्म तत्त्वज्ञानथी समृद्ध **Jain Cosmology** (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) ग्रंथ मळ्यो. आ ग्रंथना संपादक मुनिराजश्री ने अभिनंदन सह अभिवंदन..... साथो साथ..... आ अभिप्राय.....

'श्रम करे ते श्रमण' श्रमणनी आ व्याख्याने संपादक मुनिराजश्रीए सार्थक करी छे.तेनी साबिती आ दलदार-दमदार ग्रंथ ज छे. सर्वज्ञ कथित तत्त्वोनें जाणी तत्त्वज्ञ बन्या अने त्यांथी न अटकता सामान्यजन सुधी तेने पहोंचाडवा आ ग्रंथनुं संपादन कर्युं अने आ रीते लोकोने सत्यज्ञ बनाववानो तमारो प्रयास पूर्ण थाय ते माटे अमारी शासनना देवताओने प्रार्थना..... 'सत्यना प्रयोगो' वांचशुं त्यारे पण हवे आ तत्त्वना योग ने जोड़-जाणी-वांची-नोंधी लेवानी इच्छा छे तेथी ज अहीं विरमुं छुं. पू. गच्छनायक गुरुदेवश्रीए आपश्रीने अनुवंदना सह शुभाशिष पाठवे छे. कार्य सेवा फरमावशो.... ह. गुर्वाज्ञाथी....

गच्छा. आ. श्री अभयदेवसूरिजी म.सा. ना शिष्य मुनि योगरत्न विजय

आसो वद - १२ कात्रज तीर्थ

सर्वज्ञ भाषित शाश्वत भावो जे त्रिकालाबाधित छे. ते तमाम भावोने लोकभोग्य बनाववा सुचारू प्रयास तमारा तरफथी थयो छे. विद्वत भोग्य आ दलदार ग्रंथ सौने परमात्मा प्रत्ये अहोभावित बनावी दे.... ते निशंक छे.

तमारा द्वारा आवा संनिष्ठ प्रयत्नोथी प्रभुना तत्त्वो सौ कोइ सरळता साथे माणे... बस ! ए ज शुभाभिलाषा..... सह....

गच्छा. आ. श्री दौलतसागरसूरिजी म.सा. नी आज्ञाथी...
आ. श्री हर्षसागरसूरिजी म.सा.

वैशाख वद - ६

(जंबूद्वीप-पालीताणा) वि.सं. २०६८

अति परिश्रम - परमात्मानी वाणी प्रत्ये तथा दादा स्थापित संस्कृति अने तत्त्वज्ञानना विशिष्ट रागथी तैयार करेल Jain Cosmology (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) नामनुं दलदार ग्रंथ मने प्राप्त थयुं..... ३०० थी ऊपर जे आवा प्रकारना तत्त्वज्ञाननी व्याख्याओ जे टाइटल नं. २ थी शरु करी छे तेनी सफळता ज आ ग्रंथमां जोवा मळे छे. आजे जे देखाय छे ते मारा तारक पूज्यपाद गुरुदेवश्रीनुं ज छे. मैं तो मात्र कपडा पहेरावावानुं ज काम कर्युं छे. तमारो आ प्रयत्न खरेखर जरुरी अने प्रशंसनीय छे आ रीते दर्शन मोहनीय कर्मना क्षयोपशम साथे ज्ञानावरणीय कर्मनो पण जबरजस्त क्षयोपक्षम कर्यो छे, परिणामे चारित्र मोहनीयनो पण क्षयोपशम तो छे ज.... तमोने तथा सहयोग करनार सौने वंदन.....

आ. अशोकसागरसूरिजी म.सा.

कारतक सुद - १३

झवेर रोड, मुलुंड (मुंबई)

जैनधर्म संबंधी खगोल-भूगोल, विशिष्ट संकलन, अनेकानेक विषयोथी भरपूर आ ग्रंथ जोइ घणो आनंद थयो. आ ग्रंथ चोक्कस रूपे अनेक माटे माननीय, कीर्तनीय अने मार्गसूचक बनी रहेशे.

आ. श्री राजहंससूरिजी म.सा.

आसो वद - १, १९-१०-२०१३, शनिवार

''सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था'' ने सरळ भाषामां संकलनबद्ध प्रकाशित करी जैनदर्शन मान्य पदार्थोनुं रक्षण करवानुं महत्त्वपूर्ण कार्य मुनिश्री चारित्ररत्नविजयजी म.सा. द्वारा करवामां आव्युं छे. ते अनुमोदनीय सुप्रयत्नने लाखो - लाखो धन्यवाद.....!

फक्त १० वर्षना अल्प दीक्षा पर्यायमां आवुं भगीरथ कार्य करवुं.... ए ''गुरूकृपा'' नुं ज बळ छे. मोहनीय कर्मना क्षयोपक्षम साथे ज्ञानावरणीय कर्मना विशिष्ट क्षयोपक्षम जन्य आपश्रीना आवा विशिष्ट प्रकारना पुरूषार्थनी खुब खुब अनुमोदना.... आधुनिक विज्ञानना अधकचरा ज्ञानने लीधे धर्मविमुख बनती आजनी युवापेढीने माटे आ ग्रंथरत्ननुं सर्जन अपूर्व मार्गदर्शक रूप अने उपकारक बनशे.... एम हुं मानुं छुं. माटे आपश्री द्वारा जैनशासन मान्य पदार्थोथी समृद्ध आवा महत्त्वपूर्ण ग्रंथरत्नोनुं पुनः पुनः प्रकाशन थतु रहे अने एना द्वारा जैनशासननी सेवा करवानुं आपनुं सद्‌भाग्य विस्तरतु रहे..... ए ज हार्दिक शुभ कामना सह शुभाभिलाषा..... शुभाशीर्वचन.....

आ. श्री नरदेवसागरसूरि म.सा.

पालीताणा - आगम मंदिर

१७-०५-२०१२, अहमदाबाद

आ. श्री हेमचंद्रसूरिजी तरफथी..... जैन धर्मना विराट अने गहन पदार्थोने संक्षेपमां अने सरळभावमां संग्रहित करवानो स्तुत्य प्रयास कर्यो छे. विज्ञानमां श्रद्धा धरावनाराओने पण आ पदार्थोना अभ्यासथी ख्याल आवे के जैनधर्मना तत्त्वों केटला वैज्ञानिक पण छे. विज्ञानना शोधो अने सिद्धांतो फरता छे ज्यारे जैन धर्मना सिद्धांतो तो त्रिकाळाबाधित अने अफर छे. फरीथी तमारा स्तुत्य प्रयासनी भूरि भूरि अनुमोदना....

आ. श्री कल्याणबोधिसूरिजी म.सा.

आसो वद - १० / २०६८ / गुरूवार

जोगेश्वरी (पूर्व) मुंबई

आपश्रीना तरफथी ''सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था'' ग्रंथरत्न मळ्यो. आवुं सुंदर जैन भूगोल-खगोल विषयक ग्रंथ मोकलवा बदल धन्यवाद आप मुनिश्रीए अल्प पर्यायमां पण सुंदर ज्ञानप्राप्ति अने स्वाध्याय द्वारा आ भव्य संकलन करेल छे जे खुब ज प्रशंसनीय छे. आवा सुंदर ग्रंथरत्नों तमारा तरफथी प्राप्त थता रहे बस ए ज शुभभावना....

आ.श्री कलाप्रभसागरसूरिजी म.सा.

आसो वद - ३, गुरूवार, १-११-१२

भारतनगर, मुंबई

आपश्री द्वारा संकलित - संयोजित - संपादित **Jain Cosmology** (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) नामनुं नवलुं नजराणुं रूप ग्रंथ मळ्यो. बे दिवसथी तेणे ज (सामान्यथी) जोतो हतो. खरेखर अद्‌भूत ग्रंथ तैयार करेल छे. **Jain Cosmology** ग्रंथना १०८ **Subject** ऊपर घणी ज सुंदर छणावट करी छे. आ एक श्रमसाध्य कार्य तमोए कर्युं छे. जे खुब ज अनुमोदनीय छे.

आ. श्री मुक्तिसागरसूरिजी म.सा.

५-११-२०१२

आसो वद - ८, नागपुर

कुर्ला, न्यु मील रोड (मुंबई)

अत्यंत परिश्रम द्वारा तमारा तरफथी बाहर पाडेल ग्रंथ जोयो....वांच्यो.... तमारो पुरूषार्थ अने आ साहित्य सेवामां आवो प्रयत्न प्रशंसनीय छे......ए ज.....

प. पू. आ. श्री नित्योदयसागरसूरिजी म.सा. नी आज्ञाथी

श्री निपुणचंद्रसागरजी म.सा.

Jain Cosmology नुं नवलुं नजराणुं आज रोज हाथमां आव्युं.... शांतीथी तो समय मळतां जोईश, पण ऊपर ऊपरथी पण नजर फेरवी अने तमारा आ गजबनाक संकलन ऊपर ओवारी जवायुं. प्रभु शासनना वंदनीय तत्त्वज्ञानने तमे जे सुचारू रीते अहीं रजु कर्युं छे ए बदल तमने अंतरना अभिनंदन घटे छे. जिज्ञासुओ आ नजराणाने मात्र संग्रहनो ज विषय न बनावता अभ्यासनो अने अनुप्रेक्षानो विषय बनावे ए दिशामां तमे शक्य प्रयासो खास करजो एवी अंतरनी इच्छा छे. भविष्यमां पण तमारा तरफथी आवी सुंदर भेट श्री संघने मळती रहे ए ज झंखना साथे.....

आ. श्री रत्नसुंदरसूरिजी म.सा.

आसो वद - ५, पाली (राजस्थान)

मेहनत खुब ज सारी रीते करी छे.... जे ग्रंथ जोतां स्पष्ट रूपे ज जणाइ आवे छे. साधु- साध्वी आदि चतुर्विध श्री संघने खुब उपयोगी बनशे....

आ. श्री पुण्यरत्नसूरिजी म.सा.

कारतक सुद - ५, गीरधर नगर (अमदाबाद)

Jain Cosmology (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) ग्रंथ मळ्यो. एने 'पुस्तक एक संग्रह अनेक' कही शकाय...... जैन धर्मना पायाना सिद्धांतोथी लइ जैन तत्त्वज्ञान अने षड्‌द्रव्यात्मक १४ राजलोकनुं वर्णन खुब ज सहेलाइथी समजी शकाय तेवां आ प्रकाशनमां तमारी महेनतनो परिश्रम सहेजे जणाइ आवे छे. आवुं विद्वता सभर अने व्यवस्थित क्रमानुसारे माहितिप्रद ग्रंथ श्री जैन संघने प्रदान करवा बदल खुब ज गौरव अनुभवुं छुं. साहित्यक्षेत्रे खुब खुब आगळ वधो..... एवा शुभाशीर्वाद......

आ. श्री रत्नचंद्रसूरिजी म.सा.(डहेलावाला)

आसो वद - ८, परिमल (अमदाबाद)

सरळ अने रसाळ शैलीमां संपादित तमारो आ महाग्रंथ अभ्यासुओं माटे अत्यंत उपयोगी बनशे.... एवी आशा साथे.....

बंधु बेलडी आ. श्री जिनचंद्रसूरिजी म.सा.
आ. श्री हेमचंद्रसूरिजी म.सा. नी आज्ञाथी तारकचंद्रसागरजी म.सा.

आसो वद - ११, २०६८, पालीताणा

Jain Cosmology (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) नामक ग्रंथ मळ्यो...., वांच्यो अने आ वखते व्याख्यानमां पण आनो उपयोग थयो छे. वळी आ ग्रंथमां जे रीते आगम - प्रकरण ग्रंथोना आधारो बताव्या छे ते खरेखर ग्रंथनी महत्ता वधारी आपे छे. आ ज पुस्तक (ग्रंथ) जो फोर कलरमां प्रकाशीत थाय अने हजी चित्रोनुं वधारे स्पष्टिकरण थाय तो घणा खास - अज्ञानी जीवोनें पण उपयोगी बनशे. ए ज अभिलाषा सह....

प. पू. आ. श्री रत्नाकरसूरिजी म.सा. नी आज्ञाथी
उपा. श्री रत्नत्रयविजयजी म.सा.

आसो वद - ११

Jain Cosmology ग्रंथ मळ्यो.... तमे ओछा संयम पर्यायमां करेल ज्ञानोपासनानी भूरी-भूरी अनुमोदना सह जणाववानुं छे "सौ रोगोनी एक दवा" नी जेम भिन्न भिन्न रूचिवाळाओंने एक ज पुस्तकमांथी घणुं जाणवानुं मळवाथी अनेक बाबतोनो समावेश थवाथी अत्यंत प्रशस्त कार्य थयुं छे. तमारा दादा गुरूजी आ.श्री गुणरत्नसूरिजी म.सा. मारा पण विद्यागुरूजी छे. मने व्याकरणनो अभ्यास कराव्यो छे ए उपकार क्यारेय पण भूली शकाय तेम नथी... एओश्रीनी निश्रामां तैयार थयेला तमारा हाथे श्री चतुर्विध संघने सारू उपयोगी थाय तेवुं प्रकाशन नजरे चढता मन खुब ज प्रसन्न थयुं छे.

आ. श्री कनकशेखरसूरिजी म.सा.

आसो वद २-३ / २-११-२०१२, १०८ शंखेश्वर तीर्थ

आपश्री तरफथी मोकलेल (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) ग्रंथ प्राप्त थयुं. जोया बाद खुब ज आनंद अनुभव्युं...!! आ समयमां जेवुं जोइए एवुं आपे अर्पी काम कर्युं छे. जिनशासननी तो आ ज साची शासन प्रभावना छे. बालजीवोंने योग्य वस्तु आपे जिनशासनने आपीने आपश्री लोकोने धर्म प्रेरणा आपी रह्या छो.. ते जाणीने खुब खुब हार्दिक अनुमोदना साथे...अंतरना धन्यवाद आपी विरमुं छुं.

आ. श्री रत्नशेखरसूरिजी म.सा.

कारतक सुद - ३, २०६८

लोकोत्तर परमात्माना त्रैकालिक सत्यने उजागर करता तमारा द्वारा संपादित ग्रंथनुं हार्दिक अनुमोदन सह स्वागत छे. आ ग्रंथ धर्मात्मामां सम्यग्दर्शन प्रगटाववानुं प्रबल निमित्त बनशे तेमज अहोभावने वधारनारो बनशे.... कारण के, जटिल एवा विषयोनो तमे जे रीते न्याय आप्यो छे तेनी खुब खुब अनुमोदना....प्रभुना सिद्धांतोने सिद्ध करता आवा प्रकाशनो तमारा तरफथी वधुने वधु प्रकाशित थाय एवी आशा अने भावना साथे....

आ. श्री यशोवर्मसूरिजी म.सा., आ. श्री पद्मयशसूरिजी म.सा.

वापी, ता. १५-२-२०१५

अत्यंत उपयोगी, सरल विवेचन जरूरी चित्रो आदि विविध सामग्रीथी ओपता - शोभता अने ज्ञानपिपासाने छिपावता आ **Jain Cosmology** ग्रंथरत्नना प्रकाशनथी तेना वांचन - मननादिथी अपूर्व आनंदनो अनुभव थयो... अने थाय ज... कारण के पश्चिमना यवने अने शोधोऐ मानवजातनुं ज नहीं परंतु सर्व जीवोनुं आमूलचूल नख्खोद वाळ्युं छे ऐवा समये भगीरथ कार्य पार पाडीने जे दिशासूझ बतावी छे तेने बिरदाववा माटे मारी पासे शब्दो नथी...आवा प्रकाशनमां **A To Z** सर्व कोइना परिश्रमने - पुरुषार्थने खुब खुब धन्यवाद..

लि. आ.रत्नभूषणसूरिजी म.सा.

आसो वद - ६, बारडोली (गुजरात)

तमारा तरफथी मोकलेल ग्रंथ **Jain Cosmology** ग्रंथ मळ्यो.... अने विगतो जाणी....तमे रचेल आ ग्रंथ बालभोग्य-मध्यमभोग्य अने विद्वत्भोग्य एम त्रणेने उपयोगी एवुं सरळ भाषामां एक आकर ग्रंथ बनाव्यो छे. जे वाचकने ज्ञानी ने ज्ञानलक्षी बनावनार छे. तमारी आ महेनते घणी कर्मनिर्जरा करावी छे पण घणुं घणुं उपकारक काम तमे कर्युं छे तेथी तमने धन्यवाद छे तेम ज तमारा ज्ञानदाताओं एवा गुरुवर्योने पण धन्यवाद छे के जेमणे तमने आवा ज्ञानलक्षी बनाव्यो.

आवा ग्रंथोनुं पठन-पाठन अने सर्जन करता रहो.... बस ! ए ज शुभेच्छा.....

आ. श्री जगवल्लभसूरिजी म.सा.

जेठ वद - ७, २०६८, विलेपार्ला (वेस्ट), मुंबई

तमारा द्वारा संपादित ग्रंथ मळ्यो. वांचीने खुब आनंद थयो.....

तमोए तपश्चर्यानी आराधनानी साथे साथे घणा बधा ग्रंथोनुं वांचनादि करीने एक नवीनता प्रगट करे तेवो ग्रंथ तैयार कर्यो छे ते बदल खुब धन्यवाद....

आ. श्री वरबोधिसूरिजी म.सा.

८-११-२०१२, आसो वद - ९, गुरूवार,
पुना - गोडीजी संघ

"सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था" नामनो आकर्षक ग्रंथ मळ्यो. खुब ज मेहनत करीने, भारे काळजी राखीने, एक ज महाकाय ग्रंथमां जरूरी बधी माहिति एकठी करीने चित्रो सहित प्रकाशित करवानी मेहनत दाद मांगी ले तेवी छे. आ ग्रंथनी सहायथी जिज्ञासु जीवोनी असत्मान्यता दुर थाय अने सत्मान्यता टके अने वधे. ए ज शुभकामना.....

आ. श्री हरिकांतसूरिजी म.सा.

भादरवा सुद - १२, २०६८
पालडी (अमदाबाद)

Jain Cosmology ग्रंथ मळ्यो.... जोयो.... खुब दलदार पुस्तक (ग्रंथ) बन्यो छे. आ ग्रंथ बनाववा संपादक मुनिवरे खुब श्रम उठाव्यो छे..... जे जोतांवेत ज ख्याल आवी जाय छे. माटे खुब खुब धन्यवाद....

आ. श्री बोधिरत्नसूरिजी म.सा.

१३-०५-२०१२
कस्तुर धाम / पालीताणा

दो दिन पूर्व ही **Jain Cosmology** (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) ग्रंथ मिला - देखकर ही मन प्रसन्न हो गया । भूगोल जैसे शुष्क व निरस विषय जन साधारण की दृष्टि से, बाकी तो जैन दर्शन की दृष्टि में द्रव्यानुयोग की ही प्रधानता हैं । तथा धर्मध्यान का भी एक भेद हैं - "संस्थानविचय धर्मध्यान" । उसको इतना सुंदर व सुवाच्य शैली मैं ग्रंथ प्रकाशन कर शासन की सुंदर सेवा की हैं ।

सम्यग्ज्ञान के क्षेत्र में भगीरथ पुरुषार्थ करनेवाले तुम्हारा नाम तो 'ज्ञानरत्न' होना चाहिए था ! खेंर - पूज्योने सोचकर ही नाम रखा होंगा आखिर ज्ञान का फल तो विरति अर्थात् "चारित्र" ही हैं ।

ज्ञान के महासागर में डूबकी लगानेवाले ही ऐसे ग्रंथो का नवसर्जन कर सकते हैं । खुब खुब बधाई.... । खुब खुब आगे बढो और जैनशासन की कीर्ति को दिग्-दिगंत तक फैलाने में सफल बनो । मेरे योग्य कार्य सूचित करना.... इसी भावों के साथ.....

आ. श्री रत्नसेनसूरिजी म.सा.

आसो वद - ७, ६-११-२०१२

"सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था" ग्रंथ आजे मळ्यो..... जोयो.....

आ ग्रंथमां आपेली माहिति बुद्धिजीवी वर्गने श्रद्धा करावतामां उपयोगी थाय तेवी छे.... तेमज आ ग्रंथना लेखक (संपादक) नी मेहनत स्तुत्य छे.... बस ! ए ज....

आ. श्री चन्द्रभूषणसूरिजी म.सा.

कारतक सुद - ५, वि.सं. २०६९, रविवार

अनुवंदना..... सुखशाता पृच्छा सह Jain Cosmology ग्रंथ मळ्यो जोयो.... आपश्रीनो अनेरो पुरूषार्थ, सतत मनन चिंतनादिना फळ स्वरूपे एक अति उत्तम ग्रंथरत्नलनुं नजराणुं जैनसंघने प्राप्त थयुं छे. जैन भूगोळ-खगोळना विषयमां बीजा साहित्यनी अपेक्षाए ओछुं खेडाण थयुं छे. आ जातनी क्षति मारा मनमां खुंचती हती..... ते हवे दुर थइ गइ छे. आ ग्रंथनी रचना करनार तेम ज तेमां सहाय करनार सहुने धन्यवाद..... एक अंतरनी वात कहुं....! भले ओछा पण आवां ज खजाना रूप तात्त्विक - सात्त्विक ग्रंथोनुं ज सर्जन करता रहो अने तेमां तमोने खुब खुब सफळता मळे..... एवा अंतरना आशीर्वाद.....

आ. श्री रत्नभूषणसूरिजी म.सा.

फागण सुद - ९, गुरूवार

आपश्री द्वारा एक अद्भुत नजराणुं पाठववामां आव्युं छे ते बदल हार्दिक आभार साथे तेनुं स्वागत.... खरेखर जैनदर्शनना मुख्य मुख्य विषयोंने वर्णवता आ ग्रंथनी श्रेष्ठतानां विषयमां शुं लखवानुं होय ? कारण के.... तेमां जे कांइ भर्युं छे ते बधु ज श्रेष्ठतम छे. वांचनारने जैनदर्शनने संक्षेपमां पण घणुं सुंदर बोध थाय तेवुं आलेखेल छे. आलेखक ने पण शतशः धन्यवाद....

आ. श्री हर्षतिलकसूरिजी म.सा.

आसो वद - ३०, जामनगर (कच्छ)

पंन्यास वज्रसेनविजय तरफथी तमारा द्वारा संपादित **Jain Cosmology** ग्रंथ मळ्युं. वांच्यु, बहु ज गम्युं. तमे खुब ज महेनत करीने आ ग्रंथनुं सर्जन कर्युं छे. घणा बधा पदार्थोने... अलग अलग विषयोने आ एक ज ग्रंथमां समाविष्ट करीने खरेखर अद्भुत काम (कार्य) कर्युं छे आ रीते शासन अने ज्ञाननी सेवा करी छे. तमारा आ सर्जन बदल खुब खुब अनुमोदना.... धन्यवाद.... हजु पण आवां उत्तम ग्रंथरत्नोंना प्रकाशन द्वारा प्रभुना शासनने उपयोगी थाओ..... एवी प्रभुने प्रार्थना.....

आ. श्री हेमप्रभसूरिजी म.सा.

यतीन्द्रभवन-पालीताणा

का.व.३ ,ता.५-१२-२०१३, गुरुवार

जैन कोस्मोलोजीनुं पुस्तक हाथमां आव्युं. जोतां ज हाथमां लइने वांचवानुं मन थइ जाय तेवुं छे. अने वांच्या बाद जाणे पू. उपा. विनयविजयजीना चारेय लोकप्रकाशनो सार होय तेवी अनुभूति थाय छे. विविध विषयनुं मेळपूर्वक संकलन करवुं ए पण एक कळा छे.

उमास्वाती महाराज संग्रह करनारा तरीके प्रसिद्ध छे. पण संग्रहमां एक विशिष्ट कळा छे. आवा कला युक्त पुस्तकनुं सर्जन लेखकना लखवा प्रमाणे पोताना अभ्यासकाळमां करेली नोंध परथी थइ गयुं ते खरेखर अनुमोदनीय छे.

तत्त्वज्ञानना विशेषतः द्रव्यानुयोगना अभ्यासीओने आ पुस्तक अवश्य सहाय करशे... अने लेखक आवा अनेक ग्रंथोनुं सर्जन करी स्वपरनुं कल्याण करे ऐ ज अभिलाषा.

आ. राजयशसूरिजी म.सा.

वैशाख सुद - ५ मुंबई

जेने जोतानी साथे ज नजर नाची उठे, हैयुं हरखी उठे, चित्त चमत्कृत बनी उठे, उरमां उत्सव रचाय तेवुं अद्भूत नवलुं नजराणुं मळ्युं..... नामे "सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था"। तमारा नैष्ठीक परिश्रमने लाख लाख वंदन.... तमारी श्रुत साधनाने लाखों नमस्कार.... एक ज ग्रंथ द्वारा जैनधर्मना प्राथमिक तत्त्वज्ञाननो पुष्कल बोध खुब सरळताथी अने सहजताथी मळी जाय..... तेवुं भव्य सर्जन थयुं छे.

जिज्ञासुओंने अत्यंत उपयोगी अने अत्यंत उपकारक नीवडशे..... मुंबई खाते ग्रंथना विमोचननो लाभ आप्यो..... खुब आनंद थयो..... मंडपेश्वर रोड - बोरीवली संघमां खुब उल्लासभेर विमोचन थयुं..... आवां सुंदर ग्रंथना सर्जन बदल..... हार्दिक अनुमोदन..... खुब खुब धन्यवाद.....

पं. श्री मुक्तिवल्लभविजयजी म.सा.

आसो वद - ३, सेटेलाइट (अमदाबाद)

मुनिराज !

ग्रंथ घणो सारो..... सरळताथी गृहस्थने पण समजाय तेवो..... बृहत्संग्रहणी, क्षेत्रसमास, नवतत्त्व जेवा पदार्थोंथी भरेलो ग्रंथ - प्रकरणोंने आधुनिक नाम आपी नवा नवा उगता वर्गने पण हाथमां पकडवानुं मन करावी दे तेवो ग्रंथ.... सरस छे.... आवुं बीजु पण कार्य करता रहेजो.... अने शक्ति लेखे लगाडजो....

पं. श्री नंदीभूषणविजयजी म.सा.

जेठ सुद - १ / २०६८, कैलासनगर - सूरत

"ज्ञानीतणां बहुमानथी रे..... ज्ञानतणां बहुमान सलुणां....."

त्रिशताधिक दीक्षा दानेश्वरी - शासन प्रभावक आचार्यदेव श्री गुणरत्नसूरीश्वरजी महाराजाना प्रशिष्यरत्न कविवर्य मुनिराज श्री हीररत्नविजयजी म.सा. ना शिष्यरत्न एवं लघुभ्राता - विद्वद्वर्य - शम दम गुण भंडार मुनिराज श्री चारित्ररत्नविजयजी म.सा. ने Jain Cosmology (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) नामक अद्भूत - श्रमसाध्य - सुंदर ग्रंथ लखवा - संकलन करवा बदल लाख - लाख अभिनंदन..... वारंवार अनुमोदना..... अनुमोदना..... अनुमोदना.....

आ मुनिवरे तो कमाल करी कमाल.... गृहस्थपणामां स्वर संगीतनी साधना द्वारा जैन संघोमां जैन संगीतना पियुष पान करावी १८ वर्षनी भर युवानवये अचानक - एकाएक चारित्र ग्रहण करी संयम जीवनना प्राण समां गुरुकुलवासने स्वीकारी ज्ञान-ध्यान-तप-संयमनी साधना करी चारित्र जीवननां १० वर्षना नानकडा पर्यायमां -२.५ वर्षनी तनतोड-मनमोड मेहनतना अंते मुनिराजश्रीए सुंदर ग्रंथरत्ननी भेंट श्री जैनशासनना चरणे धरी छे.

"सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था" ना आ ग्रंथरत्नमां विश्वनी व्यवस्था सर्वज्ञए शी रीते कही छे? तेनुं सुंदर रहस्योद्घाटन कर्युं छे. वळी जैनग्रंथों उपरांत जैनेतर ग्रंथों, ४ वेद, १८ पुराण तथा मुस्लिम धर्मना शास्त्र-कुरान, बोद्धधर्मना शास्त्रों तेमज आधुनिक विज्ञानना अनेक प्रकारना संशोधनोथी आ ग्रंथ समृद्ध बन्यो छे. मुनिवरश्रीने धन्यवाद छे के..... तेमणे १७५ जेटला आगम रूप शास्त्रपाठ आपी... "शास्त्रपाठ हृदयमां होवाथी वीतराग - सर्वज्ञ

हृदयमां छे'' आ उक्ति चरितार्थ करी छे. आ माटे तेमणे अथाक मेहनत - प्रयत्न कर्यो छे. आ उत्तम ग्रंथमां ३०० जेटला फोटोचित्र - डायाग्राम आपी समजणने खुब ज सरळ बनावी छे. ते बदल फरीथी धन्यवाद..... आवो सुंदर तत्त्वोनो रसथाळ ग्रंथ तो जैन पाठशाळाओमां दरेक स्थळे पंडितो द्वारा भणाववो जोइए. आ ग्रंथ गुजराती भाषामां छे हवे हिन्दी अने इंग्लीश भाषामां पण आ ग्रंथ बनाववो जोइए जेथी गुजरात उपरांत विशाळ हिन्दीभाषी - संघोने पण विश्वरचनानो बोध थाय.''तो करो कंकुना..... शुभस्य शीघ्रम्.....'' ए द्वारा ज्ञानवृद्धि थशे अने जैनशासन पर अहोभाव - बहुमानभाव वधशे..... तेमज आ ग्रंथ पर लेखित परिक्षाओं लेवा द्वारा पण जैनसंघने तत्त्वज्ञानथी ज्ञानसमृद्ध करवा जेवो छे.

आ ग्रंथना पठन - पाठन द्वारा भव्यजीवो धर्मध्यान ध्यावे. आत्माना पर्यायोने निर्मल-विशुद्ध बनावी..... सर्वज्ञ परमात्मा पर बहुमान भाव वधारे..... ते ज अंतरनी अभिलाषा...... फरीथी नानी उंमरमां आवा मोटा ग्रंथरत्नुं सर्जन - संकलन करवा बदल मुनिराज श्री चारित्ररत्न वि.म.सा. ने शतशः वंदन..... अभिनंदन.....

पं. श्री भुवनसुंदरविजयजी म.सा.
पं. श्री गुणसुंदरविजयजी म.सा.

आसो वद - ७
गिरनार तलेटी

Jain Cosmology ग्रंथरत्न मळ्यो.... सिंहावलोकन कर्युं.... टुंको दीक्षा पर्याय, तेमां विस्तृत तत्त्वज्ञाननो आ रीते सरळ - सचोट अने स्पष्ट भाषामां, क्रम बद्ध, पद्धतिसर, विषयवार, तेमांय जैन वचनने अनुल्लंघन रीते शास्त्रीय प्रमाणो, आधारो, सचित्रो द्वारा धाराबद्ध विश्वदर्शन करावવा द्वारा आत्मदर्शन तरफ लइ जवा माटे करेलो तमारो आ प्रयास मात्र स्तुत्य अने अनुमोदनीय नहीं..... पण वधुने वधु प्रचार-प्रसार करवा योग्य छे.... फरीथी.... आ ग्रंथ तैयार करवा बदल तमारी भूरी भूरी अनुमोदना.....

पं. श्री यशोभूषणविजयजी म.सा.,
पं. श्री धर्मरक्षितविजयजी म.सा.
पं. श्री हेमवल्लभविजयजी म.सा.

१७-११-२०१२
(जामनगर)

तमारा तरफथी मोकलावेल **"Jain Cosmology"** पुस्तक मळी गयेल छे. पुस्तक खुब सुंदर बनेल छे... अने घणी बधी माहितीथी भरपुर छे. तेने तैयार करनार महात्माने पण धन्यवाद छे.... ए ज आराधनामां उजमाळ रहेजो.....

पं. श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.

कारतक वद - २

नवजीवन - मुंबई

तमारी धगश, श्रुत भक्ति आदिनी अंतरथी अनुमोदना.... वळी लाख लाख वंदना....खुब ज चिवटपूर्वकनो संग्रह..... खुब ज मेहनतपूर्वकनो संग्रह अने खुब ज आयोजनपूर्वकनो संग्रह.....

Reference Book ना **Level** पर आवे तेवुं भव्य ग्रंथ.... श्रुतना रसवाळा साधुना दुष्काळनां समयमां आपना जेवा तरफथी मळता अमीछांटणा खुब शाता आपे छे....

पं. श्री संयमबोधिविजयजी म.सा.

आसो सुद - ३,

विश्व व्यवस्था संबंधी घणी बधी भ्रमणाओनुं निवारण आ ग्रंथ द्वारा थइ शकशे अने भ्रमणाथी मुक्त थनारा जीवो भवना भ्रमणथी पण मुक्त थशे..... आ तो अन्यने थनारो लाभ..... परंतु आ ग्रंथना संपादनकाळमां तमारी १-१ पळ प्रभुवचनना चिंतन द्वारा सफळ थइ ए रोकडो लाभ तमोने थयो छे.

बीजुं.... मारा अल्प ज्ञान मुजब तीर्थंकर परमात्मा पोताना छद्मस्थ काळमां ध्यान दशामां प्राय: करीने लोकस्वरूपना ध्यानमां निमग्न रहेता होय छे. आ ग्रंथ संपादन समये तमो पण एवी ज शुभध्याननी धारामां निमग्न बन्या हशो.... ए आ ग्रंथनी सर्वांग सुंदरताथी ख्याल आवी जाय छे. लोकस्वरूपना शुभ ध्यानमांथी तमो शुक्लध्याननी धाराने पामी लोकाग्रस्थाने शीघ्रताए पहोंचो.... ए ज देव-गुरू चरणे.... प्रार्थना.....

पं. श्री दर्शनवल्लभविजयजी म.सा.

दिनांक : ०६-११-२०१२

उपनगर (महेसाणा)

आज रोज तमोए मोकलावेल **Jain Cosmology** (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) ग्रंथ मळयो, जोयो अने खुब आनंद थयो.... जैन खगोळ-भूगोळनी संबंधी अद्भुत वातो जेमां सचोट रीते रजु कराई छे ते खुब ज प्रशंसनीय छे. आजे वैज्ञानिको चंद्रयात्रा अने ग्रहयात्रानी भ्रामक वातो करी रह्युं छे ते वैज्ञानिको माटे लपडाक स्वरूप आ ग्रंथ छे. घणी बधी तेमनी खोटी भ्रमणाओंने भंगार करी भांगवानुं काम आ ग्रंथ करी शके तेम छे..... माटे तमारो आ परिश्रम सार्थक छे. आ प्रभुशासननी अद्भुत सेवा छे.

आवा तात्त्विक - सात्त्विक अने पदार्थोथी छलकता नव - नवा ग्रंथोनुं सर्जन थाय.... तेवी मंगल अभ्यर्थना....

पं. श्री जिनेशरत्नविजयजी म.सा.

दिनांक : २२-११-२०१२

भुज (कच्छ)

जैन भूगोळ अने खगोळनी संकलित सामग्री पीरसतुं आ नवलुं नजराणुं खरेखर अद्भुत छे.... घणी घणी महत्त्वपूर्ण वातोने आवरी लेवाइ छे.... तमारी महेनत अने धगशने लाख - लाख धन्यवाद..... वधुने वधु आवा ग्रंथो जैन साहित्य जगतने समृद्धि आपता रहे। ए ज भावना.... सह.....

वेरावलरत्न पं. श्री यशोविजयजी म.सा.

जेठ वद - ४, जैन सोसायटि (अमदाबाद)

आपना द्वारा प्रकाशीत थयेल Jain Cosmology (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) ग्रंथना विमोचन प्रसंगे नारणपुरामां जवानुं थयुं.... ग्रंथ जोयो... उछळता वैराग्य सभर चारित्र अंगीकार करी.... गुरू कृपा मेळवी.... अथाग परिश्रम उठावी.... सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्थाने व्यवस्थित माळखामां गोठवी.... सरळ भाषामां प्रस्तुत करी.... अल्प वय अने अल्प दीक्षा पर्यायमां एक मोटु काम कर्युं छे.

आपना बाह्याभ्यंतर तपनी भूरि भूरि अनुमोदना..... अने आपना द्वारा आगळ पण शीघ्रातिशीघ्र नूतन प्रकाशन प्रकाशीत थाय ए ज अभ्यर्थना....

सह विशेष धन्यवाद....

पं. श्री मुनीशरत्नविजयजी म.सा.

वैशाख वद - २, कैलाश नगर (सूरत)

आपश्री द्वारा प्रकाशित थयेल Jain Cosmology ग्रंथ मळ्युं. अथाग परिश्रम करीने तमे आ ग्रंथनुं सर्जन कर्युं छे. आजे समग्र विश्वना ढगलाबंध लोको अनेकविध आविष्कार करवा माटे प्रयत्न करी रह्या छे.... पण आपश्रीनो आ आविष्कार प्रशंसनीय छे. विश्वनी प्रजा ज्यारे विज्ञाननां उंधा रवाडे चडीने अज्ञानतामां राची रही छे त्यारे जैनधर्मनी भूगोळ द्वारा शास्त्र सापेक्ष जे माहिती पूरी पाडी छे. तेना द्वारा अनेक लोको सत्यना पंथे प्रयाण करशे. पुनः पुनः आवा सर्जन करीने आपनी शक्ति प्रभु मार्गमां अविरतपणे वपराया करे..... एवी शासनदेवोने प्रार्थना करुं छुं.

पं. श्री पद्मदर्शनविजयजी म.सा.

आसो सुद - १५ / २०६८, औरंगाबाद

आपनुं मोकलेल सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था नामक ग्रंथ प्राप्त थयुं.... आपनो प्रयास प्रशस्त छे. आ पुस्तकमां जे विषयोने आवरी लेवामां आव्या छे ते खुब ज सुचारु छे.... प्रत्येक विषयोने खुब ज मर्यादित पेजमां तैयार करवाथी वाचकगणने भाररूप नहीं बने.... आ ग्रंथ वर्तमानकाळमां चतुर्विध संघमां एक विषयवार डीक्षनरी रूप साबित थशे.... अभ्यासु वर्गने कोइ पण संदेह उत्पन्न थतां तुरंत टुंकाणमां तेनुं सचोट निवारण करनार नीवडशे.... भविष्यमां आ प्रकारना अन्य विषयमां अग्रेसर बनो.....वास्तविकतामां आवा ग्रंथो तो वयस्क बालको तथा प्रोढ पाठशाळाना अभ्यासक्रम रूपे भणाववा जेवा छे. जेनाथी जिनशासननुं फाउन्डेशन मजबूत बनशे.

अंतमां आ यज्ञ जीवंत राखशो... आगळ-आगळ तेना अन्य विषयोनो विस्तार जन्य ग्रंथ बीजा विभागमां प्रकाशन करो.... ए ज भावना....

पं. श्री पूर्णचंद्रसागरजी म.सा.

आसो वद - ५, नडीयाद

Jain Cosmology ग्रंथ मळ्यो.. विहंगावलोकन कर्युं....., वांचवानुं तो अवसरे थशे.... एक वात कहुं ! आ ग्रंथ तो ''ग्रंथरत्न'' कहेवाय कारण के... जैनशासनना भौगोलिक तत्त्वोंनो विशिष्ट रीते समावेश आ ग्रंथमां करवामां आव्यो छे. आ ग्रंथने जोइने खुब ज प्रसन्नता थइ.... खरेखर अद्‌भुत ग्रंथ छे. लेखनमां छपाइ वगेरेमां अपार महेनत करवी पडे.... तो ज आवा श्रुतलेखनना कार्यो थइ शके.... आ ग्रंथना प्रकाशनमां जेओए पण रस लीधो छे तेओ सर्वेनी अनुमोदना.....

पं. श्री ईन्द्रविजयजी म.सा.

आसो सुद - १५, सिणधरी (राजस्थान)

''उपचारित्ररत्नविजयजी संग्रहीतार''

एक सुंदर संग्रहात्मक ग्रंथनी भेंट जिनशासनने मळी छे. अने जे कोई कथन आधार अवलंबित होय छे ते चिरंजीवी अने सर्व ग्राह्य बने.... एवी विशेषता आ ग्रंथनी छे. एक साथे घणी बधी माहिती आना द्वारा वाचक वर्ग मेळवी शके छे अने मेकोलो शिक्षणथी माणसोनां भेजामां जे गंदगी बिछाववामां आवी छे तेने साफ करवा आ बुलडोझरनी गरज सारे छे. पदार्थनो जिज्ञासु अभ्यासु वर्ग आ एक ग्रंथ द्वारा अनेक विध पदार्थ ज्ञान मेळवी शके छे. लेखकने लाख-लाख धन्यवाद छे. भविष्यमां पण आवा ग्रंथो बाहर पडे अने प्रकाशित थाय.... ए ज शुभेच्छा.....

वास्तवमां तो साधु महात्मानी शक्ति प्रवचन - सिद्धांतने आवी रीते स्पष्टीकरण करवामां वपराय ते अति आवश्यक छे. मात्र प्रवचन - वार्ता - स्तोत्रादि संग्रह के स्तुति - स्तवननी चोपडी वगेरेमां शक्ति अने समय वेडफवा करता आवा ज कार्य करवा जेवा छे.

पं. श्री रत्नज्योतविजयजी म.सा.

आसो वद - ५, भीवंडी (मुंबई)

प्रकरण ग्रंथो अने आगम ग्रंथोमां रहेला छुटा छवाया पदार्थोने एक ज जग्याए संकलित करवानुं खुब सुंदर कार्य तमे कर्युं छे. खुब ज सहेली भाषामां अने सामान्य कक्षाना गृहस्थो पण समजी शके ए रीते चित्रों साथे तमे बहु ज सारी रीते निरूपण कर्युं छे. परिशिष्टमां शास्त्रपाठो मूकवा द्वारा ग्रंथने तमे समृद्ध बनाव्यो छे.... आनंद साथे अनुमोदना.....

पं. श्री संयमप्रभविजयजी म.सा.

दिनांक : ०६-११-२०१२

महेसाणा

Jain Cosmology ग्रंथ विषे..... कांईक....

अलभ्य अणमोल ग्रंथ हाथमां आव्यो. प.पू.मुनि श्री चारित्ररत्नविजयजी महाराज साहेबे नामने सार्थक कर्युं छे.... कारण ''ज्ञानस्य फलं विरतिः'' ज्ञानना बळे विरतिनो परिणाम, विरतिमां ज्ञाननी साधना जोरदार करी अनेक ग्रंथोनुं अवलोकन एक ग्रंथ पूर्ण करे तेवुं.... तेमज जैन धर्म / ईतिहास / पदार्थोनुं सचोट वर्णन कर्युं छे.... जे आजना पंडितवर्यो, धार्मिक अध्यापको, शिबिरार्थी गुरू भगवंतोने खुब ज उपयोगी थशे.....शासनने एवी अणमोल भेंट आपता रहो.....ते ज अभ्यर्थना.....

पं. श्री रविरत्नविजयजी म.सा.

(डहेलावाळा)

०८-११-२०१२ (गुरूवार)

आपश्रीनो **Jain Cosmology** ग्रंथ वांच्यो. खरेखर.... एक अद्‌भुत सर्जन थयुं छे...कारण के नवा साधु-साध्वीजी भगवंतो माटे ते अति अति उपयोगी बनी शके छे अने बने पण छे... माटे ज आपनी धगश.... महेनत.... ने खुब खुब धन्यवाद।

गणी. गुणयशसागरजी म.सा.

दिनांक : ०२-०९-२०१२

गिरधर नगर (अमदावाद)

प्रत्यक्ष तो एकवार मळ्या छीए.... पण परोक्ष रीते हमणां ज तमारी खुब वातो थई.... सांभळी.... अने तेमां आ तमारो Jain Cosmology ग्रंथ मळ्यो. हैयाना उमळकाभेर आ ग्रंथने आवकारुं छुं. में आ ग्रंथना अवलोकन बाद अेटलो बधो हरख अनुभव्यो छे के ए तमारी सामे व्यक्त करवा मारी पासे शब्दो नथी. नानी उंमरमां अने नाना पर्यायमां तमे शकवर्ती काम कर्युं छे. तमारी गुरू परंपरा पण गौरव अनुभवती हशे एवुं हुं मानुं छुं. महात्मन् ! खुब खुब धन्यवाद.... आ ग्रंथरत्नथी जैनोना तत्त्वज्ञानने जगत्ना चौकमां मुकवानुं सुकृत कर्युं छे.... मने तो लागे छे के आ ग्रंथने जैन अभ्यासक्रममां स्थान आपवुं जोइए... शातामां रहेजो... उछळती खुशीनें वहेंचवानी ईच्छा थई आवी एटले लखी लीधुं..... प्रसन्नत्ता साथे....

गणि. उदयरत्नविजयजी म.सा.

(डहेलावाला)

विशेष...

Jain Cosmology पुस्तक जोयुं. जैन भूगोळमां प्रवेश करवा माटे अति उपयोगी बने तेवुं पुस्तक छे. विशेषता - तेमां शास्त्राधार आप्या छे. ते खूब आवकारदायक छे.

आवुं सर्वोपयोगी संकलन करवा बदल पूज्य मुनि भगवंतनी अंतरथी अनुमोदना...

वैराग्यरति विजय

२०-१२-२०१२

Jain Cosmology ग्रंथ पुस्तक....ग्रंथ जैन भूगोल-खगोल विद्या विषेनी सचित्र माहिती साथे तेमां अन्य संदर्भो अने विज्ञाननी मान्यतानो संग्रह कर्यो छे तेथी पुस्तकनुं महत्त्व वधी गयुं छे. तेमज परिशिष्टमां मुकेली संदर्भ सामग्रीए तथा उपादेयता ए प्रमाणिकतामां वृद्धि करी छे. फरी आपना आ ज्ञानवर्धक प्रयासनी वारंवार अनुमोदना....

मुनि वैराग्यरतिविजय

श्रुतभवन - पुना

आसो वद - ९, अमदाबाद

तमारा तरफथी मोकलेल सचित्र तत्त्वज्ञाननुं नवलुं नजराणुं रूप पुस्तक प्रसादी मळी छे.... खुब ज आनंद.... अनुमोदना थाय छे.... नानी उंमरे..... अल्प दीक्षा पर्यायमां ज्ञाननो उद्यम.... साधना.... प्रचंड पुरूषार्थ करी भगवानना शासनने तत्त्वज्ञाननी विशिष्ट भेंट तमे आपी छे. तेमज हजी पण आ अंगे तमारी महेनत - साधना सतत चालुं छे.... तमने खुब खुब धन्यवाद.....

-मुनि श्री भद्रकीर्तिविजयजी म.सा.

२२-११-२०१२

खानपुर (अमदाबाद)

जे भगीरथ महेनत करीने आ ग्रंथनुं सुंदर संपादन तमे कर्युं छे.... तो ते अंगे जणाववानुं छे के.... आपनो श्रम व्यर्थ नहीं जाय. अभ्यासुओंने खुब ज उपयोगी एवो ग्रंथ बनाववा बदल पुनः पुनः अनुमोदना सह धन्यवाद....

मुनि श्री कल्परत्नविजयजी म.सा.

आसो वद - १० / शुक्रवार, सुभानपुरा (वडोदरा)

तमारा द्वारा संपादित Jain Cosmology ग्रंथरत्न मळ्यो. तमारा पुरूषार्थ अने प्रयत्नी अनुमोदना..... अनुमोदना..... अनुमोदना.....

कमाल करी.... छे तमे..... मिथ्याज्ञान तरफ दोडनारा जिज्ञासुना हाथमां आ ग्रंथ आवे तो चोक्कस परिवर्तन थाय अने परमात्माना शासनप्रति बहुमानभाव जाग्या बिना न रहे.....

कोलेजो - स्कुलोनी लायब्रेरीमां मुकवा जेवो आ ग्रंथ छे. तेमज युवावर्गने आ ग्रंथ ऊपरथी शीखववामां पण खुब सरळता पडे.... तेथी घणा जिज्ञासुओंने वांचवानी प्रेरणा करी छे.

तत्त्वज्ञानना क्लासीस गोठवीने आ ग्रंथनो विशेष उपयोग कराय तो घणुं परिवर्तन आवी शके..... खुब खुब अनुमोदना..... बाळशैलीमां पण आवा ग्रंथोनुं सर्जन थाय तो खुब उपयोगी बने..... आगळवधो..... हजी घणुं घणुं तमारा हाथे सर्जन थतुं रहे..... एवी भावना.....

-मुनि श्री धर्मबोधिविजयजी म.सा.

आसो वद - १०

कामदार कोलोनी / जामनगर

आपे संपादन करेल ग्रंथ जोयो.... अनोखी महेनत करी छे. केटला बधा विषयो आवरी लीधा छे ? महेनत दाद मांगी ले तेवी छे. अनुमोदना..... अनुमोदना.... आपश्री आ रीते श्रुत सर्जन द्वारा जिनशासननी अनोखी सेवा करी रह्या छे.... धन्यवाद....

मुनि श्री दिव्यपद्मविजयजी म.सा.

कारतक सुद - ९, गांधीनगर

Jain Cosmology ग्रंथ मळ्यो...., खुब सुंदर छे.... तमे खुब महेनत करी छे. हवे आनुं English Tranlation थाय तो नवी पेढीने घणो लाभ थशे.... भावीमां आवा अनेक ग्रंथोनी रचना तमारा हाथे थती रहे.... तेवी भावना....शुभेच्छा..... सह.....

मुनि श्री रत्नबोधिविजयजी म.सा.

प्र.भादरवा सुद - ६

राजनांद गाँव (छत्तीसगढ)

जगतना नभोमंडलमां विहंगमावलोकन करवाने प्रेरतो.... नवीनतम पदार्थ संग्रहनो संपूट Jain Cosmology आजे मळ्यो.... तमारा अविरत, अथाग, अप्रमत्त, अनुपम पुरुषार्थने कोटी कोटी वंदन..... कोटी कोटी धन्यवाद....

जैनशासनमां अत्यारे तत्त्वज्ञानना रसिको - अभ्यासुओनो दुकाळ पडेलो जोवा मळे छे. सामान्य रीते लोको आवा पायाना तात्विक पदार्थोथी साव अजाण - अज्ञान छे. एवा लोको माटे तमारुं आ संपूट रणमां झरण, समुद्रमां दीवादांडी तेमज अज्ञान रूपी अंधकारने हठाववा माटे जाजवल्यमान दीपक समान बनी रहेशे..... ए चोक्कस छे.

विशेषमां - गुजरात बहारना क्षेत्रोमां विशेष रीते लोको आवा Basic Knowledge थी पछात छे. एमना माटे गुजराती भाषानुं ज्ञान सरळ नथी. तेथी हिन्दी भाषा ऊपर पण जो आ ग्रंथ - संग्रहनुं संस्करण थाय तो भारतभरना लोको माटे पण अत्यंत उपयोगी थइ शके.... ए ज भावना.....

मुनि श्री पार्श्वरत्नसागरजी म.सा.

आसो वद - ९, नवसारी

''कलापूर्णोऽस्तु मंगलम्''

परार्थपरायण - तत्त्वजिज्ञासुं......

मुनि चारित्ररत्नविजयजी म.सा. सादर अनुवंदना.... आपश्री द्वारा मोकलेल अणमोल ग्रंथ मळ्यो. वांची अत्यानंद....! सर्वज्ञ कथित लोकादिनुं सुव्यवस्थित संकलन करी.... सम्यग्ज्ञान पीरस्युं छे. जिज्ञासु रसिकवर्गने सारू उपयोगी थशे.... आपनो प्रयास अवश्य फळदायी नीवडशे.... आपना तरफथी थतो सम्यग्ज्ञानना प्रकाशनो प्रति प्रयत्न अनुमोदनीय छे.....

मुनि श्री अनंतयशविजयजी म.सा.

कारतक सुद - १

विशेषमां - तमारा द्वारा लिखित - संपादित Jain Cosmology पुस्तक मळ्युं. लागे छे आने ''पुस्तक'' कहेवां करतां ''ग्रंथ'' कहेवुं वधु योग्य लागशे. खुब खुब अनुमोदना तमारा सखत पुरूषार्थनी.....!!!!!

विषयोनुं विभागीकरण करीने पदार्थने एकदम सहेलो बनावी दीधो छे. वांचनारने भार न लागे.... पदार्थ सरळताथी याद रही जाय.... एम विशिष्ट गोठवणी करी छे. बस ! आम वधुने वधुं साहित्य जगत समक्ष रजु करो..... एवी शुभाभिलाषा.....

मुनि श्री धनंजयविजयजी म.सा.

का.सु ८, ता. १०-११-२०१३, आधोई - चातुर्मास

साहित्यप्रेमी पू.मुनिराज श्री चारित्ररत्न वि. सादर वंदना...

आज रोज आपश्री द्वारा मोकलावेलो जैन कोस्मोलोजी ग्रन्थ मळ्युं.

संकलन-संयोजन अद्भुत छे. हमणा तो उडती नजर फेरवी छे. पण आ ग्रन्थ खरेखर खूब ज उपयोगी बनशे. शिबिर माटे १०-१५ पुस्तकोनी गरज एक ज पुस्तक सारशे, साहित्यनी दुनियामां आ पुस्तक पोतानी एक अलग ज आभा ऊभी करशे.

मुनिश्रीनी महेनतने लाख लाख वंदन.

आवनारा भविष्यकाळमां आ ग्रन्थ अंग्रेजी तथा हिन्दी भाषामां पण प्रकाशित थाय तो नवी पेढीने सविशेष उपयोगी बनशे.

लि. मुनि पूर्णरक्षित वि.

शासन प्रभावक प. पू.आ.भ. श्री गुणरत्नसूरीश्वरजी म., पू.आ.भ. श्री रश्मिरत्नसूरीश्वरजी म., पू. मुनिराजश्री चारित्ररत्न विजयजी म. आदि मुनिवृंदना चरणोमां वंदना सह...

देव-गुरु कृपाऐ सर्वे शातामा हशोजी. मोटा म. नी तबियत सारी हशेजी. अत्रे गुरुकृपाओ सर्वे शातामां छीओ. विशेषमां, आपना द्वारा संपादित Jain Cosmology पुस्तक वांची प्रारंभिक ग्रन्थो, प्रकरणो तेमज बृहद्संग्रहणि जेवा गहन विषयोनुं सुंदर अने सरळ भाषामां संकलन करेल छे. खरेखर अनुमोदनीय छे.

लि. प.पू.आ.श्री जगच्चंद्रसूरि (डहेलावाला)
ना शिष्य मुनि विनीतचंद्र विजय

आसो वद - ४
नारणपुरा, अमदावाद

अप्रमत साधना..... अस्खलित स्वाध्यायनी लगनी.... आदरपूर्वकनो अभ्यास अति-अति परिश्रम आवा अनेकानेक गुणोना प्रभावे बनेल महाकाय ग्रंथ... प्रभुए- गणधर भगवंतोए जुदा-जुदा आगमोमां पीरसेली अनेक माहितीओ - ज्ञान विषय प्रमाणे संयोजन करी जैनशासननो अणमोल ग्रंथ बनाव्यो छे. चित्रो माटेना परिश्रमनी भूरी भूरी अनुमोदना.....

भावीमां पण आवा अनेक ग्रंथों बाहर पाड़ी भावीना जीवो माटे अति उपयोगी बनो.....

बस ! ए ज शुभ अभ्यर्थना.....

मुनि श्री योगीरत्नविजयजी म.सा.

कारतक वद - ३
वडोदरा

Jain Cosmology ग्रंथ मळ्यो.... अद्भुत छे. वळी तत्त्वज्ञानना खजानाथी भरेलुं छे. गुजराती भाषामां होवाथी सर्वमान्य, सर्वने समझाय तेवुं छे. कारण के.... संस्कृत - प्राकृत ग्रंथोना वांचनथी हवे श्रावको घणा दुर थइ गया छे त्यारे जिनशासनना पदार्थोने समजाववा माटेनुं एक सफळ कार्य आपश्रीए पुरुं पाड्युं छे. आज रीते कर्मगर्थादि विषयोमां पण लोक भोग्य शैली द्वारा सुंदर तत्त्वग्रंथो सर्जन करो..... ए ज भावना..... ता.क. सर्व महात्माओ आ पुस्तक (ग्रंथ) वांची रह्या छे. कारण के.....

आपणा ज समुदायना नाना पर्यायमां महात्मानुं आवुं मोटु कार्य जाणी जोइने खुब खुब आनंद......

मुनि श्री ज्ञानप्रेमविजयजी म.सा.

पूज्य वंदनीय पू. गुरुभगवंतो

पुस्तक अमने मळेल छे. पुस्तक खरेखर खूब ज ज्ञानप्रद छे. अथाग महेनत द्वारा सूक्ष्म-सूक्ष्म माहितीओ आवरी लीधी छे. चित्रो द्वारा समजण खूब ज मळे छे. नूतनदीक्षितथी लइने सर्वने अभ्यास माटे खूब ज सहायक पुस्तक छे... धर्मध्यान ना ४ पायामां आखा लोकनो विचार चिंतववो... आ माटे विशेष सहायकरूप छे.

खरेखर समस्त जिनशासन अने अन्य समाज माटे पण खूब ज आधारभूत ग्रंथ छे.

भविष्यमां पण आवा विशेष पुस्तकोनुं प्रकाशन थाय तो अमने जरुरथी याद करशोजी... त्यां बिराजता संतोने वंदना सह सुख-शाता पृच्छा...

बरवाळा स्था. जैन संघ
पू. सरदार गुरुदेवना शिष्य
शाश्वतमुनि

कारतक सुद - ४
उस्मानपुरा (अमदाबाद)

खरेखर..... आपश्रीए अथाग परिश्रम करीने आ सुंदर ग्रंथ बाहर पाड्यो छे. अनेकोंने आ उपयोगी बनशे..... घणुं घणुं नवुं आ ग्रंथमांथी जाणवानुं मळ्युं छे.... ग्रंथ वांची - जोइ खुब ज आनंद थयुं.

प्रवर्तिनी सा. श्री पुण्यरेखाश्रीजी म.सा.

कारतक वद - ७, पूना

जिज्ञासुओंने खुब ज उपयोगी बनशे..... अत्यंत महेनतथी तैयार थयेल छे. तेवुं जोता ज जणाइ आवे छे.... साथे चित्रो होवाना कारणे जल्दी पदार्थ समझाइ जशे..... टुंकमां..... ग्रंथ सर्व समुदाय मान्य बन्या वगर न ज रहेशे... एटले संपूर्ण जैनशासनमां तेनो भव्य सत्कार थशे ज...

सा. श्री हेमरत्नाश्रीजी म.सा.

श्रावण सुद - १, दहिंसर (मुंबई)

विशष - ''सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था'' पुस्तक मोकलावेल मळी गयुं छे. अद्भुत रहस्यो भर्या छे. अभ्यासु एवा नवा वर्गने पठन - पाठन माटे खुब ज उपयोगी प्रकाशन छे. ग्रंथ जोता शास्त्रीय पदार्थ विश्वनुं गणित आंख सामे आवे छे..... खुब खुब अनुमोदना.....

सा. श्री विपुलगुणाश्रीजी म.सा.

आसो वद - १२

पू. आपश्री तरफथी मोकलावेल Jain Cosmology ग्रंथ मळी गयेल छे. वांचवानुं शरू कर्युं छे. जेम जेम ग्रंथ वांचु छुं तेम तेम जैनधर्मनी खगोळ - भूगोळनी माहिती जाणवा मळे छे. जैनधर्म प्रमाणे पृथ्वी गोळ नथी, फरती नथी ते आपश्रीए स्पष्टपणे जणाव्युं छे. आपे घणां ज आगमो अने प्रकरणोनो लाभ लईने महेनत करीने लख्युं छे.... आवी महेनत करनारने धन्य छे....

तारातंबोल नगरीनुं नाम पण आ ग्रंथमां ज जाणवा मळ्युं.... ए नगरीनी विगत सुद्धा वांची..... बीजुं हवे वांचवानुं चालुं छे..... जेम जेम टाइम मळे तेम तेम आ ग्रंथने ज वांचु छुं.

सा. श्री स्वयंप्रभाश्रीजी म.सा.

ता. ६-११-२०१२ / आसो वद - ७, बरोडा

वागड समुदायना सा. शीलदर्शनाश्रीजीनी सादर वंदना.... सह....

आपश्रीए मोकलावेल Jain Cosmology (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) पुस्तक-ग्रंथ अमने मळी गयेल छे. आवा पुस्तकनी खास जरूरत हती. आपणा जैन दर्शननी दृष्टिए लोकोने साची वस्तुनी जाण नथी... के दुनिया शुं चीज छे..... वगेरे..... पण आ ग्रंथथी हवे ख्याल आवी जशे..... आपनो पुरूषार्थ दाद मांगी ले तेवो छे.... अद्भुत - अद्भुत नजराणुं छे. हजु तो मात्र उपर-उपरथी ज जोयु छे तो पण आटलुं आकर्षण लागे छे. परंतु ज्यारे तेना गाढ (गूढ) पदार्थोनुं चिंतन - मनन थशे त्यारे तेने छोडवानुं मन नही थाय.....

खुब खुब धन्यवाद.... अने प.पू. आनंदवर्धनवि. म.सा. तेमज प.पू. आत्मदर्शन वि. म.सा. ने पण आपना पुस्तको - ग्रंथो मळी गयेल छे. अने तेओश्रीए पण पुस्तकनी खुब अनुमोदना करेल छे.

सा. श्री शीलदर्शनाश्रीजी म.सा.

आसो वद - ४, महेसाणा

पूज्य आपश्रीए तो Jain Cosmology ग्रंथ द्वारा जैनशासनना आंगणे एक नवलुं नजराणुं मुक्युं छे. आजना जीवो तो जाणे Computer mind वाळा छे... तेओ दरेक बाबतमां How and Why थी ज प्रश्नो पुछे छे.... हवे आ प्रश्नोना जवाब सरळ अने सरस रीते समझावी शकाय छे. कारण के.... हवे आ ग्रंथ अमारा हाथमां ज छे. आपश्रीए तो घाघरमां सागर भरी दीधुं छे. भविष्यमां पण आवा ज ग्रंथोंनुं भेटणुं जैनशासनने मळतुं रहे - ए ज अभ्यर्थना...

सा. श्री मतिशरेखाश्रीजी म.सा.

कारतक सुद -७, समदडी - पालीताणा

विशेष - वर्षोनी तनतोड महेनत तथा तलस्पर्शी अभ्यासना फळ स्वरुप Jain Cosmology पुस्तक-ग्रंथ मळ्यो. दर्शन मात्रथी ज अंतर प्रफुल्लित बनी गयुं. आखो ग्रंथ उपर-उपरथी जोयो..... जोया बाद नक्की कर्युं के.... आ वखतना विहारमां आखी मांडलीने आ ज विषय - ग्रंथ करावी लेशुं. तेथी स्वाध्यायादि माटे पण विशेष सानुकुलता रहेशे.....

खुब खुब धन्यवाद आपना परिश्रमने...... कोटी कोटी वंदन छे.... आपश्रीना घडवैया पूज्यपाद उभय सूरीश्वरजीने.....

सा. श्री कीर्तिरेखाश्रीजी म.सा.

आसो सुद - १५, शंखेश्वरजी महातीर्थ

विशेष - पू. मुनिश्री चारित्ररत्नविजयजीए.... जे उपकार करीने जैन शासननुं अणमोल मोती समान नवलुं नजराणुं Jain Cosmology ग्रंथ बाहर पाड्युं छे. तेमां जैनशासननुं तत्त्वज्ञान शुं छे ? पायाथी इमारत सुधीनी वातोनो संपूर्ण उल्लेख कर्यो छे. ते खरेखर खुब खुब अनुमोदनीय छे. ते ग्रंथ अमने प्राप्त थयुं छे. खरेखर जिज्ञासु आत्माओं माटे आ ग्रंथ तो भुख्याने जेम भोजन (घेवर) मळे तेम पुरवार थाय छे..... टुंकमां... बस ! आ ग्रंथ स्वपरनुं कल्याण करनार बने.... ए ज अंतरनी इच्छा....

सा. श्री सरस्वतीश्रीजी म.सा.

(धनतेरस) आसो वद - १३, देवलाली

साध्वीजी पुष्पाश्रीजी, सा. हंसकीर्तिश्रीजी आदि ठाणा-३१ नी अनुवंदना स्वीकारशोजी.... अत्रे देव-गुरू कृपाथी सुख-शाता वर्ते छे.

आपना तरफथी सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था ग्रंथ मोकलायो ते वांचीने खुब ज आनंद थयो. १४ राजलोकने आवरी लेता दरेक पदार्थने सचित्र रीते पीरसायुं छे. ते आजना काळमां बुद्धिजीवी लोको माटे खास उपयोगी अने श्रद्धाने विशेष मजबुत करनारुं बनशे. अनेक ग्रंथोंनो आधार लईने अलग-अलग चित्रोनुं एकमां ज संकलन.... आकाशमां वैज्ञानिकों द्वारा जोवायेली सूर्यमालाओ अने तेओनुं डीस्टन्ट आ बधी हकिकत आपणी शास्त्रोक्त वातोनी साबिती पूरी पाडे छे.

तारातंबोल नगरीनुं वर्णन वांच्युं..... मात्र २०० थी अधिक वर्ष पहेला जैन धर्म क्यां सुधीअने केवो फेलायेलो हतो ? राजा अने प्रजा केवी धर्मी अने संतोषी हती ? केवी आश्चर्य परमात्म-भक्ति हती ? सघळी वातो वांचतां आपणो भव्य भूतकाळ क्यां अने आजनी आ परिस्थिति क्यां ? टुंकमां..... आ **Jain Cosmology** ग्रंथ सौ कोईने आवकार्य बनशे ज...! पू. आपश्रीए अथाग महेनत करी जगत्ने सुंदर नजराणुं भेंट कर्युं छे, वळी आपनी शक्तिनो उपयोग विशेष शासनकार्योमां नवा नवा ग्रंथ सर्जनमां सदुपयोग करो अने ते माटे शासन देवता श्रुतदेवता तमने शक्ति अर्पो..... ए ज शुभेच्छा.....

सा. श्री पुष्पाश्रीजी म.सा.

परमश्रद्धेय परम विनयादिगुणोपेत पूज्य मुनिराज चारित्ररत्नविजयजी म.सा. आदि सर्वने...

पवित्रतम गीरीराजनी गोदमां आवेल पालीताणाथी लि. परमपूज्य गुरुदेवश्री जितेन्द्रश्रीजी म.सा. तथा सा. मलयकीर्तिश्रीजी आदि ९ ना कोटिशः वंदनावली स्वीकारी कृतार्थ करशोजी. अत्रे पूज्यो साथे सुखशाता वर्ते छे तेम त्यां पण वर्तती हशे एवी हार्दिक भावना सह जणाववानुं छे जे आपना तरफथी आवेलु Jain Cosmology (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) पुस्तक मळ्युं तेने सारी रीते वांच्युं जेंमा घणुं सारु ज्ञान खजानो प्राप्त थयो नाना दीक्षा पर्यायमां घणुं सुंदर अनुमोदनीय कार्य थयुं जेनी भूरीभूरी अनुमोदना... आगळ पण घणुं सुंदर प्रकाशन करो एवी शुभाभिलाषा.....

सा.श्री मलयकीर्तिश्रीजी म.सा.

श्री आनंदसागरसूरये नमः

Jain Cosmology ग्रंथ एटले संपूर्ण तत्त्वज्ञानने पामवा माटेनो अणमोल खजानो छे तेमांथी घणा पदार्थोनुं वांचन थयुं. घणो घणो आनंद आव्यो. तत्त्वज्ञानने मेळववामां अने बीजाने पमाडवामां आ पुस्तक अत्यंत उपयोगी छे. प्रेरणादाताए आ पुस्तक बाहर पाडीने घणो ज उपकार कर्यो छे, समस्त जीवनभर उपकारने भूलाय तेम नथी. आ पुस्तक (ग्रंथ)नुं चिंतन - मनन सतत चालुं ज रहेशे.

सा. श्री संयमीताश्रीजी म.सा.

आसो वद - ११, सांताक्रुज (मुंबई)

तमारा तरफथी जैनधर्मनी माहितीथी भरपूर एवो ग्रंथ मळ्यो. वांची घणो आनंद थयुं. परमात्मानी वाणीने बालजीवो पासे रजु करवानो तमारो प्रयास अनुमोदनीय छे. अमोने पण विशेष जाणकारी मळे तेवो ग्रंथ छे. हवे जो आ ग्रंथ ईंग्लीश भाषामां पण रजु थाय तो.... घणा जीवोंने उपकारक बनशे.....

सा. श्री हीतप्रज्ञाश्रीजी म.सा.

Really jain Cosmology ग्रंथ बहोत ही अद्भुत ग्रंथ है। इस ग्रंथ को पढने के बाद एसा लगा की हमारे नसीब खुल गए है। Because, साध्वीजी महाराज के लिए आगमों का पठन-पाठन निषेध है, किंतु आपकी Jain Cosmology Book पढकर महेसूस हुआ कि इस एक ग्रंथ मे इतना सारा ज्ञान आपने परोस दिया है, तो प्रभु के 45 आगमों में तो कितना ज्ञान होगा ? हम भगवान से प्रार्थना करते है, बस! आप इसी तरह एक के बाद एक नये -नये ग्रंथ लिखते रहो और हमे प्रभु के आगमों का बोध देते रहो ताकि हम भी जिनवाणी का बोध प्राप्त करके शीघ्र मुक्तिगामी बने.....

आपकी Jain Cosmology Book भविष्य में Reference Book के Lavel तक पहोंचे, एसी प्रभु से प्रार्थना.....

बहन महाराज

साध्वीजी भव्यज्ञरेखाश्रीजी म.सा.

प. पू. आचार्यश्री गुणरत्नसूरीश्वरजी महाराज सा. अने आचार्यश्री रश्मिरत्नसूरीश्वरजी म.सा. प्रेरीत पन्यास रत्नश्री मेघदर्शनविजयजी म.सा. संशोधित अने प. पू. मुनि श्री चारित्ररत्न विजयजी म.सा. रचित संपादित आ अणमोल ज्ञान ग्रंथनुं अध्ययन करतां एकवात तो जरूर कहेवी पडशे के.....

ज्यां सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्थानो सुंदर वर्ण चितार छे.

ज्यां जैन तत्त्वदर्शनना ज्ञान अने विज्ञाननो सुभग समन्वय छे.

तेवा आ अनुपम ज्ञान ग्रंथ Jain Cosmology नो अभ्यास करतां करता मुज रोम रोम विकसीत बने छे.

''शुभकार्ये सदा यतनीयम्'' पू. महाराज साहेबे खरेखर कह्युं छे के शुभ कार्यनी दरेक शरूआत जेम आवकार्य, अनुमोदनीय ज होय एम आ ज्ञाननी सरळ, सत्य समजण चित्रात्मक (सचित्र) अने आधारभूत तार्कीक रजुआत वडे आ ग्रंथ एना जैन तत्त्वदर्शनना योग्य ज्ञान प्रसारना शुभ आशयने पार पमाडवामां संपूर्ण सफळ रह्यो छे अने मात्र भौतिक जगतमां सीमीत ना रहेता आध्यात्मिक जगतनां पण अनेक रहस्योनें समजावतुं आ ग्रंथरत्न तत्त्वदर्शनना गणितानुयोग अने चौद राजलोक सहित विश्व व्यवस्थानुं सात विभाग अने १०८ विषयोमां खुब सुंदर चित्रात्मक वर्णन-समझण पुरी पाडी छे. तर्क अने श्रद्धाना सुभग समन्वय अने अनेक प्राचीन ग्रंथो मान्यताओनो पण ऊंडो अभ्यास अने स्वाध्याय परिश्रमना सुंदर परिणामोनो तत्त्वार्थ नीचोड ग्रंथना शब्दे शब्दमांथी छलके छे आधुनिक युगना आपना एडवान्स श्रावको अने युवा पेढीने माटे खरेखर घणी ज सुंदर एवी आ कृती चोक्कस निशंक पणे एमना अनेक प्रश्नोना समस्याओनुं समाधान करी तेमनी जैन तत्त्वदर्शन प्रत्येनी श्रद्धा अने समजणने अवश्य मजबूत करशे माटे समाजना तमाम वर्ग माटे उपकारक नीवडशे.

जैन खगोळ शास्त्र, ज्योतिष विज्ञान, जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति, ठाणांगसूत्र आदि अनेक ग्रंथोनी आधारभूत माहिती अने समग्र विश्वव्यवस्थाना वर्णननी साथे पू.म.सा. ए ''प्रकिर्णक'' विभाग अने ''जाणवा योग्य'' माहीतीना विभाग हेठळ कर्म धर्मना पायाना सिद्धांतो अने गुणस्थानक - ज्ञान - द्रव्य, तप, काळ विगेरेनी सुंदर छणावट आपी छे.

जैन खगोळ शास्त्र वि. नी परिशिष्टमां अनेक उपयोगी माहीतीनी चित्रात्मक कोष्टक स्वरूपे तथा रेफरन्स साथेनी माहीती पण अभ्यासुंओ माटे घणी ज उपयोगी नीवडे तेम छे. तुलनात्मक रजुआत पृथ्वी खगोळ विज्ञानना भ्रामक ख्यालो दूर करे छे.

जिनशासन अने तत्त्वदर्शनना ज्ञानी सर्वज्ञोए मात्र अध्यात्मज नहिं दरेक विषय, विज्ञान, खगोळ, गणित विषे जे ज्ञान आपणा ग्रंथोमां छे. तेने सुज्ञ श्रावको अने विज्ञानीओ सुधी पहोंचाडवुं खूब जरूरी छे. आधुनीक विज्ञान हजु प्रारंभिक विकासमां प्रवृत्त छे त्यारे तेने आ सुंदर संशोधनोनो, जिन आगमनी वाणीनो लाभ आपी जनकल्याणना हितार्थे रजु करवुं ते पण जिनशासननी एक सुंदर आराधना लेखाशे. विज्ञानना अनेक वणउकलायेला रहस्यो अने समस्याओना समाधान साथे ज्ञान अने विज्ञान वच्चे सेतु रूप आ Jain Cosmology ना ग्रंथनी रचना बदल प.पू.म.सा.नी महेनत खूब अभिनंदन अने अनुमोदनाने पात्र छे. सचित्र तत्त्वज्ञानना आवा नवलां नजराणांओ साथे जिनदर्शन श्रुतज्ञाननी भक्तिमां ज्ञान क्षीतिजो विस्तरती रहे ए शुभभावना साथे अस्तु.

लींबडी गोपाल संप्रदायना लीलम शीशु

बालब्रह्मचारी दिव्यताबाई महासतीजी

Jain Cosmology ग्रंथ जोयो. ग्रंथ खुब सरस बनाव्यो छे. आजे अमारी छाती गज गज फूले छे... कारण के तमे संयम लई जे जिनशासननी सेवा आ ज्ञानयोगना माध्यमे करी रह्या छो. तेथी अमने खुब खुब संतोष छे अने आगळ पण आवा विशिष्ट ग्रंथो तमारा हाथे सर्जाता रहे तथा तमारा दरेक ज्ञानना कार्यमां तमारा ऊपर मां सरस्वतीनी कृपा रहे तेवा अमारा अंतरना आशीर्वाद....

लि. प.पू. चारित्ररत्न म.सा.ना
संसारी माता - पिता पवनबेन तथा ओटरमलजी

पूज्य आचार्यदेव श्री रश्मिरत्नसूरिजी महाराजजीना चरणोमां हेमंतनी वंदना...

पूज्य प्रद्युम्नसूरिजी महाराज पासेथी भणेलुं के दरेक ग्रंथ-पुस्तक सात वखत तो वांचवा ज जोइए. बने त्यां सुधी एनो अमल करुं छुं. एथी "जैन कोस्मोलोजी" चोथी वखत वांची रह्यो छुं. अमुक बाबत पहेली ज वखत ख्यालमां आवी.

ग्रंथ तैयार करवामां लीधेलो श्रम आंखे उडीने वळगे छे, तो ऐनी उपयोगीतानी गणतरी थाय एवुं नथी. "बृहद् क्षेत्र समास"मां अमुक वातो नथी ते आमां मळे छे. अने विशेषत: इतर ग्रन्थोनी मान्यताओना संदर्भो पहेली ज वखत जाण्या. लेखक महात्मानी विद्वता तो छे ज एथी पण वधु देव-गुरुनी कृपा तेमनी ऊपर वरसती रही जणाइ आवे छे. अने सोनामां सुगंधनी जेम आ ग्रंथ पूज्य दादा महाराज भुवनभानुसूरीश्वरजी महाराज साहेबना अनंत उपकारोनी यादमां, स्मृति तथा अंजलिरूपे रचायो छे. चतुर्विध श्री संघ गौरव लइ शके एवुं यशस्वी कार्य थयुं छे. खूब अनुमोदन थाय छे.

लि. हेमंत शाह

रामचंद्रसूरीश्वरजी ज्ञान भंडार,
आशिष सोसायटी, पाटण...
ता. ३१-१२-२०१४

पूज्य गुरुभगवंतोना व्याख्यानमां १४ राजलोक अने तेमां रहेला पंचास्तिकाय, अधोलोक, ऊर्ध्वलोक, सात नारकी, परमाधामी देवो, जंबूद्वीपनी जाणकारी वगेरेनी माहिति सांभळवामां आवेली छे. ते वांचीने थाय छे के १४ राजलोक विषे आपणी कल्पनामां न आवे के मानवामां न आवे तेटली संपूर्ण अने साची माहिति आपी छे के गणत्री साथे माहिति आपी छे के आपणने आपणी कल्पना के मान्यता खोटी लागे अने आ माहितीनुं ज्ञान सचोट छे.

आ अंक वांचता ऐम ज लागे छे के वैज्ञानिकोनी मान्यताऐ आपणा जैनोनी मान्यताथी अलग छे. विरुद्ध छे. आवी माहिति वैज्ञानिको पण आपवा माटे असमर्थ छे अने तेमणे पण ते माहिति आपवी होय तो जैनोनी मान्यताओथी शीखवुं पडशे. भणाववामां आवे छे के पृथ्वी गोळ छे, दडा जेवी छे, ज्यारे आपे १०१ पूरावा आपीने पृथ्वी गोळ दडा जेवी नथी ते साबित करी बताव्युं छे. छः लेश्यानुं स्वरूप, आठकर्म, १४ गुणस्थानक अने जीवनो विकासक्रम जेवी माहिति वांचीने आनंद थयो. आज्ञा विरुद्ध कंई लखायुं होय तो मिच्छामि दुक्कडं...

लि. आपनो विद्यार्थी...
रमेशचंद्र चीमनलाल शाह
M. 09879302002

श्रुतसागर, अंक - २४, १५ जनवरी - २०१३, कोबा
संशोधक : पंन्यास श्री मेघदर्शनविजयजी,
संपादक - मुनि श्रीचारित्ररत्नविजयजी,
प्रकाशक - जिनगुण आराधक ट्रस्ट, मुंबई,
प्रकाशन वर्ष-विक्रम संवत २०६८
विषय : जैन सिद्धांत के अनुरूप भूगोल-खगोल आदि की विस्तृत एवं तथ्यपरक सूचनाए

परम पूज्य मुनि श्री चारित्ररत्नविजयजी महाराज साहब ने **Jain Cosmology** (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) नामक ग्रन्थरत्न में भूगोल-खगोल से सम्बन्धित विभिन्न शोधपूर्ण लेखों का संकलन-संपादन के साथ तत्सम्बन्धित विषयों को सचित्र प्रस्तुत कर मुमुक्षुओं एवं संशोधकों का मार्ग सरल कर दिया है। पूज्यश्री ने श्रमण परम्परा एवं अन्य भारतीय परम्पराओं में भूगोल-खगोल का आदिकाल से जो वर्णन मिलता है, उसे एकत्र करने का बहुत ही सुन्दर एवं सराहनीय प्रयास किया है। भूगोल-खगोल जैसे निरस विषय को चित्रों के माध्यम से इस प्रकार समझाया गया है कि किसी को भी इस विषय को जानने-समझने की जिज्ञासा स्वतः उत्पन्न होगी।

आज भूगोल-खगोल के सम्बन्ध में अनेक वैज्ञानिकों द्वारा विभिन्न विषयों पर शोध हो रही हैं। आपस में ही शोध के आधार पर ही वे इस सम्बन्ध में भिन्न भिन्न मत स्थापित करके विश्व को भ्रमित कर रहे हैं। आपस में ही एक दूसरे के मतों का खण्डन एवं स्वमत का मण्डन कर रहे हैं। आज तक समस्त विश्व के वैज्ञानिक इस विषय पर एक मत नहीं हो पाये हैं, जबकि आदिकाल से श्रमण परम्परा के ग्रन्थों में इस विषय पर सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था का निरूपण होता आ रहा है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में भूगोल-खगोल का भौतिक जगत के साथ सम्बन्ध स्थापित किया जाता है, जबकि इस ग्रन्थ में भूगोल-खगोल का सम्बन्ध अनेकानेक तर्कबद्ध उदाहरणों के द्वारा आध्यात्मिक जगत के साथ स्थापित करके वैज्ञानिकों के समक्ष एक नई दिशा प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

सम्पूर्ण विश्व व्यवस्था के अंतर्गत असंख्य द्वीप-समुद्रों के समूह मध्यलोक, ब्रह्मांड में व्याप्त सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, तारा आदि का वर्णन, उर्ध्वलोक के रूप में ३ विख्यात देवलोक, ग्रैवेयक, अनुत्तर आदि लोकों के साथ-साथ अधोलोक में स्थित नरकों का सचित्र विवरण प्रस्तुत है। इसके अतिरिक्त संसार के छोटे-बडे समस्त पदार्थों के वास्तविक स्वरूप का वर्णन संकलित है। आशा है, इस ग्रन्थ के माध्यम से इस विषय पर शोध एवं वैज्ञानिक परीक्षण करने वालों का मार्ग प्रशस्त होगा और वैज्ञानिक-शोधकर्ता भी श्रमण परम्परा की अवधारणा को इसके मूलरूप में मान्यता प्रदान करने को विवश होंगे।

प्रस्तुत ग्रन्थरत्न में वर्णित विषयों का मनन-चिन्तन कर मुमुक्षु अपने समस्त कर्मों को क्षय करने की दिशा में अग्रसर होंगे और अपना मानवजीवन सफल बना सकेंगे। यह ग्रन्थरत्न स्वयं में एक शिक्षक की भूमिका भी निभाने में समर्थ सिद्ध होगा।

जिनगुण आराधक ट्रस्ट, मुंबई द्वारा प्रकाशित यह ग्रन्थरत्न, जैन तत्त्वज्ञान का एक विशिष्ट ग्रन्थ सिद्ध होगा। छपाई शुद्ध एवं सुन्दर है, तो आवरण पृष्ठ आकर्षक एवं विषयानुकूल है। विस्तृत अनुक्रमणिका में विषयों का क्रम पूर्ण वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। महत्त्वपूर्ण विषयों से सम्बन्धित सन्दर्भो के लिये प्राचीन हस्तप्रतों को मूलरूप में ही प्रस्तुत करके इस ग्रन्थरत्न को और अधिक उपयोगी बनाया गया है। इस ग्रन्थ के निर्माण में प्रयुक्त कागज एवं छपाई भी दीर्घ समय तक चल सकें इस प्रकार का चयन किया गया है।

पूज्य मुनिश्री चारित्ररत्नविजयजी महाराज साहब ने समाज के सभी वर्गों के लिये उपयोगी हो सके इस प्रकार विषयों का वर्गीकरण एवं प्रस्तुतिकरण करके समाज पर बहुत बडा उपकार किया है। आशा है भविष्य में भी पूज्यश्री के माध्यम से इसी प्रकार समाज लाभान्वित होता रहेगा।

प.पू.आ.श्री गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा. तथा प.पू.आ.श्री रश्मिरत्नसूरीश्वरजी म.सा. द्वारा रचित / प्रेरित / मार्गदर्शित... अध्ययनोपयोगी सुंदर साहित्य....

क्रम	ग्रंथनाम	भाषा
१.	मूलपयडीबंधो	प्रा./सं.
२.	खवगसेढी भाग १-२-३ (सटीक अनुवाद)	प्रा./सं./गुज.
३.	कर्मप्रकृतिगतमुपशमनाकरणम्	सं.
४.	देशोपशमना	सं.
५.	भवस्थिति-कायस्थिति प्रकरण टीका	सं.
६.	न्यायावतार (सटीक अनुवाद)	सं./गुज.
७.	स्याद्वादभाषा (सानुवाद)	सं./गुज.
८.	अनेकान्तवादप्रवेश (सानुवाद)	सं./गुज.
९.	अनेकान्तजयपताका (भाग १ से ५) (सानुवाद)	सं./गुज.
१०.	सप्तभंगीनयप्रदीप (सानुवाद)	सं./गुज.
११.	गुरुतत्त्वसिद्धि (सानुवाद)	सं./गुज.
१२.	उदयस्वामित्व (सानुवाद-गाथार्थ-विवेचन)	प्रा./गुज.
१३.	उदयस्वामित्व (संस्कृतवृत्तिविवरण सहित)	प्रा./सं.
१४.	उदयस्वामित्व संक्षिप्त पदार्थ संग्रह	गुज.
१५.	गच्छाचार पयन्ना (मूल+श्रीवानर्षिगणिकृतवृत्ति+दो अवचूरि सहित)	सं.
१६.	गच्छाचार पयन्ना (भाग १/२) (मूल+श्री विजय विमलगणिकृत वृत्ति+अर्थविवेक+छायासन्मित्रादि सहित ...)	सं.
१७.	गच्छाचार पयन्ना (भाग १/२) (मूल+श्री विजय विमलगणि कृत वृत्ति+अर्थविवेक+छायासन्मित्रादि +शास्त्रसंलोक+ विशदविवरणादि सहित)	सं.
१८.	गुणस्थानक क्रमारोह (सटीक विवेचन)	सं./गुज.
१९.	JAIN COSMOLOGY (सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था)	गुज.
२०.	THE REAL UNIVERSE (सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड)	हिन्दी

प.पू.आ.श्री गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा. तथा प.पू.आ.श्री रश्मिरत्नसूरीश्वरजी म.सा. द्वारा संपादित... उपदेशात्मक सुंदर साहित्य....

क्रम	ग्रंथनाम	भाषा
१.	नमामि सूरि जितेन्द्रम् (सचित्र)	हिन्दी
२.	तत्त्वज्ञान आल्बम् (सचित्र)	हिन्दी
३.	जैन रामायण (सचित्र)	हि./गुज./अंग्रेजी
४.	जो जे करमाय ना (भव आलोचना) (सचित्र)	हि./गुज./अंग्रेजी
५.	एक हती राजकुमारी (सचित्र)	हि./गुज./अंग्रेजी
६.	टेन्शन टु पीस (महाविदेह भावयात्रा)	हि./गुज.
७.	उपधान वाचना (सचित्र) (साधना से सिद्धि)	हिन्दी
८.	गुड नाईट	हि./गुज.
९.	मन के जीते जीत	हि./गुज.
१०.	गुड लाईफ	हि./गुज.
११.	रे कर्म ! तेरी गति न्यारी	हि./गुज.
१२.	बरस रही अखियाँ (आंखे आसुनी धार)	हि./गुज.

आगामी साहित्य **Coming Soon.....**

क्रम	ग्रंथनाम	भाषा
१.	बंधशतक (चूर्णि+चूर्णिविषमपद टिप्पण+ टिप्पणादि)	प्रा./सं.
२.	बंधशतक (मलधारी वृत्ति + बृहद्भाष्य + लघुभाष्य+ सटिप्पणादि)	प्रा./सं.
३.	बंधशतक (चूर्णि+ वृत्ति + भाष्यादि आधारित पदार्थ संग्रह)	गुज.
४.	धर्मरत्न प्र. (भाग -१/२/३ स्वोपज्ञवृत्ति+ अनुवाद सह+ सटिप्पणादि,)	प्रा./सं./गुज.
५.	धर्मरत्न प्र. (भाग- १ थी ५ बृहद्वृत्ति+ अनुवाद सह + सावचूरि+ सटिप्पणादि,)	प्रा./सं./गुज.
६.	धर्मरत्न प्र. (स्वोपज्ञवृत्ति+ बृहद्वृत्ति+ सटिप्पणादि, भाग -१/२/३)	प्रा./सं.
७.	नव्यन्याय प्रवेशिका (डायग्राम सह)	गुज.
८.	ऐन्द्रस्तुति चतुर्विंशिका (स्वोपज्ञवृत्ति + गाथार्थादि सह)	सं./गुज./हि.
९.	वैराग्यकल्पलता (सविवेचन) भाग १ से ४	सं./गुज.
१०.	हृदयप्रदीपषट्त्रिंशिका (सटीक विवेचन)	सं./गुज.
११.	गुरुगुणषट्त्रिंशतषट्त्रिंशिका (सटीक विवेचन)	सं./गुज.
१२.	प्राकृत व्याकरण (भाग १/२)	प्रा./गुज./ई.
१३.	THE JAIN SCIENCE (सर्वज्ञ कथित विज्ञान)	गुज.

ग्रन्थ प्रशस्ति

स्वस्ति श्री जगद्गुरु-जंगमकल्पतरु-शासनप्रभावक-गच्छनायक-श्रीमद्विजयहीरसूरीश्वर-पट्टपरम्पराप्रभवो-मुनिचक्रचूडामणि-प्रवचनोन्नतिविधायक-सम्यग्दर्शनादिरत्नत्रयीदायक-परमोपकारी-तत्कालिनमुनिकदम्बकाधिपति-महाप्रभावक-कर्मसाहित्यनिष्णात-सिद्धांतमहोदधि-पूज्यपाद १००८ आचार्यदेव श्रीमद्विजयप्रेमसूरीश्वरपट्टप्रभावक-संघहितचिंतक-वर्धमानतपोनिधि-न्यायविशारद-अध्यात्मयुवाशिबिराद्यप्रणेता-आचार्यदेवश्रीमद्विजय-भुवनभानुसूरीश्वर-पट्टधारक-शुद्धप्रायश्चितप्रदाता-सर्वजनप्रिय-गुरुकृपाप्राप्त-गीतार्थमूर्धन्य-परोपकारपरायण-निस्पृहशिरोमणी-सिद्धांतदिवाकर-सुविहितगच्छाधिपति-आचार्यदेव श्रीमद्विजय जयघोषसूरीश्वरपट्टालंकार-परमकारुणिक-विपुलशासनप्रभावक-संविज्ञातद्रव्यानुयोगविषयादि-राष्ट्रसंत-मेवाडदेशोद्धारक-आचार्यदेवश्रीमद्विजय-जितेन्द्रसूरीश्वरपट्टधारीविनेयरत्न-युवाजागृतिप्रेरक-सार्धत्रिशताधिकदीक्षादानेश्वरी-साधुसाध्वीयोग-क्षेमकारक-आचार्यदेवश्रीमद्विजय गुणरत्नसूरीश्वरपट्टविभूषक-विद्वद्वर्य-षड्दर्शननिष्णात-युवाप्रवचन-प्रभावक-विलसन्निर्मलशीलशालि-निरवद्यनिरतिशयचारित्रशालि-प्रत्युषाभिस्मरणीय-आचार्यदेव-श्रीमद्विजयरश्मिरत्नसूरीश्वरपाटपरंपराधारक-विनेयशिष्यरत्न-परमपूज्य-मुनिराजश्रीहीररत्नविजयान्तेवासी मुनिश्री-चारित्ररत्नविजयेन गुरुकृपया लिखितो निखिलतत्त्वज्ञान प्रकाशप्रदीपकल्पो पंचविभागसंविभक्तः द्विशताधिकविषयसमलङकृतः त्रिशताधिकागमप्रकीर्णकादिग्रंथाधारेण प्रमाणीभूतः चतुःशताधिक-चित्रांकणविभूषितः शताधिकप्राचीनताडपत्राद्यन्तर्गतचित्रसंपुटादिसंवलितः **"THE REAL UNIVERSE"** अपरनाम "सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड" इति नामको ग्रंथः सविस्तृतहिन्दीभाषापरिसमेतः समाप्तः। असौ च ग्रंथ **"JAIN COSMOLOGY"** अपरनाम "सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था" इत्याख्य ग्रंथस्य संवर्धितद्वितीयावृत्तिरूपेण प्रकाशतामानीतम्। यावच्चन्द्रादिवाकरौ विजयतेतराम इयं कृतिः॥

इति श्री अहमदाबादनगरे अधुनाप्यखण्डप्रभावधारक-श्रीमत्सहस्त्रफणादि पार्श्वनाथप्रसादात्... अस्तु.

विक्रम संवत् - २०७१ / चैत्र सुद - १३ तिथौ.....

जिनशासन के साहित्यावकाश में सर्वप्रथम बार
श्री जिनगुण आराधक ट्रस्ट की और से...
जैन विज्ञान से संदर्भित पठनीय-मननीय-संग्रहणीय...

एक विराट ग्रंथ

सचित्र विज्ञान का नया नजराना

ILLUSTRATED

THE JAIN SCIENCE

सर्वज्ञ कथित विज्ञान

COMING SOON
COMING SOON
COMING SOON

प.पू. मुनिराज श्री चारित्ररत्नविजयजी म.सा. द्वारा संपादित - संयोजित - संकलित ग्रंथावलि......

मेवाड की धरती में मूर्तिपूजा की क्रान्ति का सिंहनाद करनेवाले

प. पू. आ. श्री प्रेम-भुवनभानुसूरि समुदाय के ४०० अट्ठम के तपस्वी, त्रिशताधिकसाध्वीगणाधिपति,

मेवाडदेशोद्धारक, राष्ट्रसंत आचार्यदेव श्रीमद्विजय जितेन्द्रसूरीश्वरजी महाराजा का स्मृति ग्रंथ

नमामि
सूरि
जितेन्द्रम्

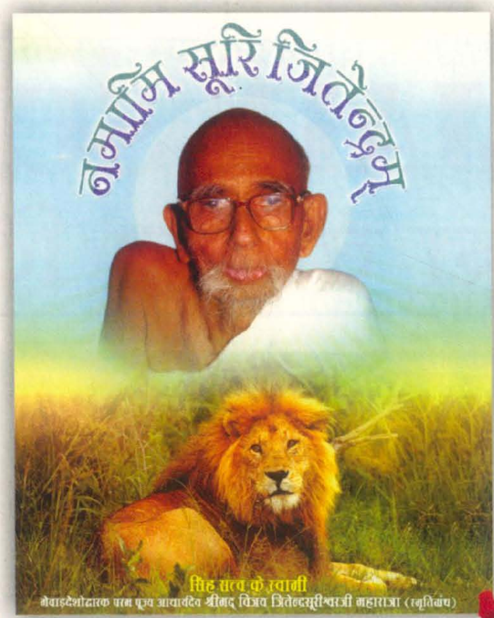

नमामि
सूरि
जितेन्द्रम्

પ.પૂ. મુનિરાજ શ્રી ચારિત્રરત્નવિજયજી મ.સા. દ્વારા સંપાદિત - સંયોજિત - સંકલિત ગ્રંથાવલિ......

વાંચશો તો નાચશો... જૈનશાસનના આંગણે... ચુકશો તો પસ્તાશો...

એક અણમોલ ગ્રંથનું ભવ્ય આગમન

સચિત્ર તત્ત્વજ્ઞાનનું નવલું નજરાણું ILLUSTRATED

JAIN COSMOLOGY

સર્વજ્ઞ કથિત વિશ્વ વ્યવસ્થા

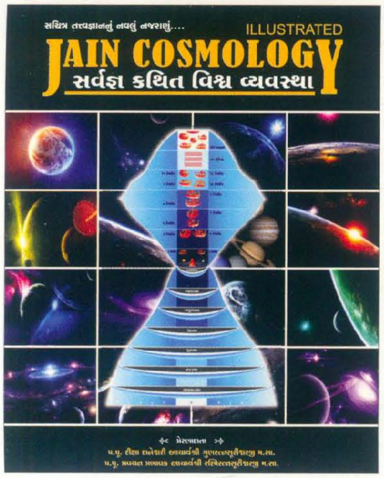

- ➤ શું તમે જાણો છો... પૃથ્વી દડા જેવી ગોળ છે કે થાળી જેવી ગોળ છે ?
- ➤ શું તમે જાણો છો... પૃથ્વી સ્થિર છે કે ફરે છે ?
- ➤ શું તમે જાણો છો... કે બ્રહ્માંડની ઉત્પત્તિ Big Bang માંથી થઈ છે? કે કોઈ અન્ય કારણોથી?
- ➤ શું તમે જાણો છો... સમુદ્રોમાં ભરતી-ઓટ શા કારણે આવે છે ?
- ➤ શું તમે જાણો છો... કે પૃથ્વી પર ભૂકંપો શા માટે સર્જાય છે ?
- ➤ શું તમે જાણો છો... કે આ વિશ્વ ૭ દ્વીપ સમુદ્રવાળો છે કે અસંખ્ય દ્વીપ સમુદ્રવાળો ?
- ➤ શું તમે જાણો છો... કે આ વિશ્વમાં ઉર્ધ્વલોક-અધોલોક વગેરે ક્યાં આવેલા છે?

આવા સેંકડો સવાલોનો જવાબ આપતો જૈનશાસનનો એક અણમોલ ગ્રંથ એટલે જ...

સચિત્ર તત્ત્વજ્ઞાનનું નવલું નજરાણું ILLUSTRATED

JAIN COSMOLOGY

સર્વજ્ઞ કથિત વિશ્વ વ્યવસ્થા

:: ગ્રંથની વિશેષતા ::

- ➤ ગુજરાતી ભાષામાં અને ૫૨૦ પાનાઓમાં તૈયાર થયેલ
- ➤ જૈન ધર્મ સંબંધી ભૂગોળ-ખગોળાદિની સચિત્ર માહિતી...
- ➤ જૈન ધર્મ સંબંધી ૧૦૮ વિષયોના વિશિષ્ટ લેખો...
- ➤ દરેક લેખોને સમજાવવા માટે પાને પાને ૨૦૦ જેટલા ચિત્ર (Picture) નો વિશાલ સંગ્રહ...
- ➤ ૧૫૦ થી વધારે આગમ-પ્રકરણાદિ ગ્રંથોનો આધાર
- ➤ ૧૦૦ પાનાઓમાં તૈયાર થયેલ દળદાર ''જાણવા જેવી ભૂમિકા''
- ➤ ૬૮ જેટલા પ્રાચીન ચિત્રોની પ્રતિકૃતિઓનો વિશિષ્ટ સંકલન
- ➤ તારાતંબોલ જેવી અપ્રાપ્ય નગરીનો ઉલ્લેખ...
- ➤ પૃથ્વી દડા જેવી ગોળ નથી અને ફરતી નથી... તેના ૧૦૧ પુરાવાઓથી સભર... ઈત્યાદી ઘણુ બધુ...

આ તો માત્ર ઝાંખી છે...
ગ્રંથ વાચવાનો બાકી છે...

: શુભાજ્ઞા આશીર્વાદ :

પ.પૂ.ગચ્છાધિપતિ આ.શ્રી જયઘોષસૂરીશ્વરજી મ.સા.

: પાવન પ્રેરણા :

પ.પૂ.દીક્ષા દાનેશ્વરી આ.શ્રી ગુણરત્નસૂરીશ્વરજી મ.સા.
પ.પૂ.પ્રવચન પ્રભાવક આ. શ્રી રશ્મિરત્નસૂરીશ્વરજી મ.સા.

: સંશોધક :

પ.પૂ.પંન્યાસ શ્રી મેઘદર્શનવિજયજી મ.સા.

: સંપાદક :

પ.પૂ.મુનિરાજ શ્રી હીરરત્નવિજયજી મ.સા.ના શિષ્યરત્ન
પ.પૂ.મુનિરાજ શ્રી ચારિત્રરત્નવિજયજી મ.સા.

:: કાયમી પ્રાપ્તિ સ્થાન ::
સંપર્ક સૂત્ર
અરુણભાઈ (સાબરમતી)
૯૪૨૭૫ ૨૨૧૦૧, ૯૪૦૮૨ ૫૨૨૦૧

મૂલ્ય : ૩૫૦/-

: પ્રાપ્તિસ્થાન :

અમદાવાદ	પાલીતાણા	શંખેશ્વર	ભાયંદર	થાને
શાહ બાબુલાલ સરેમલ	સુઘોષા કાર્યાલય	વંદના બુક સ્ટોર્સ	ચેતનભાઈ એચ. મહેતા	માંગીલાલજી પારેખ
'સિદ્ધાચલ'	સોમચંદ ડી. શાહ	યાત્રિકભવન પાસે,	A/303, પવનકુંજ,	નાકોડા ક્રિયેશન
સેન્ટ એસ સ્કુલની સામે	તળેટી રોડ, પાલીતાણા	શંખેશ્વર (ગુજ.)	નાકોડા હોસ્પીટલની બાજુમાં,	દુકાન નં-૧, ક્ષીરસાગર એપાર્ટ.,
હીરા જૈન સોસાયટી, સાબરમતી	મો. ૦૯૮૯૮૩૩૨૨૪૫	મો. ૦૯૩૭૪૧૬૯૬૧૮	૬૦ ફીટ રોડ, ભાયંદર (વેસ્ટ)	માલતીબાઈ હોસ્પીટલની સામે,
અમદાવાદ - ૩૮૦૦૦૫.	(મુકેશભાઈ)	૦૯૪૨૯૯૯૭૭૪૦	૯૮૬૭૦ ૫૮૯૪૦	સેન્ટ જ્હોન સ્કુલ રોડ, થાને, (વેસ્ટ)
૯૪૨૬૫ ૮૫૯૦૪		૦૯૯૦૪૭૮૬૯૬૨	૦૨૨-૨૮૧૪૦૭૦૬	(M)૦૯૭૭૩૩૨૯૫૦૩,(M)૦૯૩૨૪૨૮૬૪૮૧
૦૭૯ - ૨૨૧૩૨૫૪૩				(O)૦૨૨-૨૫૩૦૯૬૫૫
૦૭૯ - ૨૭૫૦૫૭૨૦				

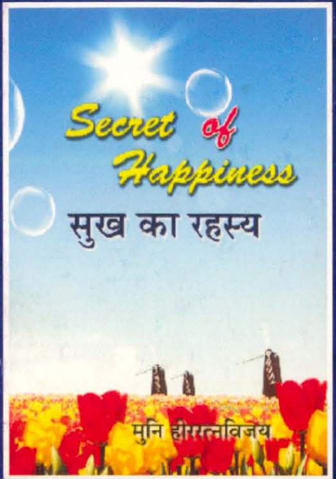

Secret of Happiness

सुख का रहस्य

क्या आप वास्तविक रूप से सुखी बनना चाहते हो ?

- क्या आप धन-वैभव प्राप्त करने का रहस्य जानना चाहते हो ?
- क्या आप सदा प्रसन्न रहने की कला सीखना चाहते हो ?
- क्या आप अपने दुःखों से हमेंशा के लिये छुटकारा पाना चाहते हो ?
- क्या आप सदा स्वस्थ रहने का Formula समझना चाहते हो ?
- क्या आप अपने मानव जन्म को सार्थक बनाना चाहते हो ?
- क्या आप धर्मतत्त्व को तर्कपूर्वक समझना चाहते हो ?

तो ऐसे अनेकानेक रहस्यों को प्रगट करनेवाली पुस्तक **'Secret of Happiness'** अवश्य पढ़ें । हमें विश्वास है कि यह पुस्तक आपके जीवन को बेहतरीन बनाने के लिये अवश्य उपयोगी बनेगी ?

मूल्य रु.10

For read this book online please log on to :
www.bhagwankajawab.com/soh.html

मोक्षमार्ग का शोर्टकट : भक्तियोग

संवेदना

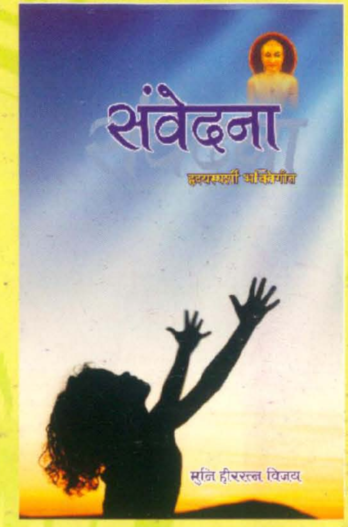

अगर आप अपने जीवन में शांति, समाधि, समृद्धि और मुक्ति प्राप्त करना चाहते हो एवं परमात्मा की भक्ति में लीन बनकर प्रचंड पुण्य का उपार्जन करना चाहते हो तो अत्यंत संवेदनशील, हृदयस्पर्शी नवनिर्मित भक्तिगीतों से भरपूर पुस्तक 'संवेदना' अवश्य प्राप्त करें ।

पुस्तक मूल्य रु.20

इन्ही गीतों को संगीत के साथ सुनने के लिये Whatsapp से मंगवाने संपर्क करें :
प्रकाश - 0-9898084517, रीकीन - 09426525588

कायमी प्राप्तिस्थान :

स्थानिक संपर्क :

राहुल जे. शाह - कोहिनूर फेशन हाउस
हाजा पटेल पोल के सामने, टंकशाल,
कालुपुर, अहमदाबाद - 380 001.
मो.: 09898111213
E-mail : bhagwankajawab9@gmail.com

ACHARYA SRI KAILASSAGARSURI GYANMANDIR
SRI MAHAVIR JAIN ARADHANA KENDRA
Koba, Gandhinagar-382 009.
Phone : (079) 23276252, 23276204-05

सचित्र तत्त्वज्ञान का नया नजराना ILLUSTRATED

THE REAL UNIVERSE

सर्वज्ञ कथित ब्रह्मांड

JAIN COSMOLOGY(सर्वज्ञ कथित विश्व व्यवस्था) गुजराती ग्रन्थ की हिन्दी संवर्धित आवृत्ति.....

(PART - 1 TO 5)

ग्रंथ को देखने - पढ़ने के बाद आपश्री का अनमोल अभिप्राय: हमे भेजने की कृपा करे ।

नीचे लीखे गये एड्रेस पर आंगडीया,
कुरीयर अथवा पोस्ट कर सकते हो ।

MOHIT SOLANKI
C/O, MAHENDRA TUBES
C-1, Archana Industrial Estate, Near Ajit Mill, Rakhial,
Ahmedabad - 380023, M-09426707301, 09409419610
solankimohit01@gmail.com

Printed By
NAVRANG
9428 500 401

Design By
Omkargraphics
9408031622